Detailed Syllabus

BDM-63T-201- Company Law

Objectives of the Course:
The objective of this course is to develop and comprehend business and its processes in accordance with the provisions of the Companies Act, 2013.

Dy. Registrar
(Academic)
University of Rajasthan
JAIPUR

UNIT I: Background and Salient Features of the Companies Act, 2013. Company and its Characteristics. Types of Companies. Distinction between a company and a partnership. Lifting of Corporate Veil. Formation and Incorporation of company- Promoters and their legal position, pre- incorporation contract and provisional contract, online registration of a company, Certificate of Incorporation. Memorandum of Association, Articles of Association - Doctrine of ConstructiveNotice and Indoor Management.

UNIT II: Prospectus: Meaning and Definition – Contents, Statutory requirements in relation to prospectus. Deemed prospectus, Shelf and Red herring prospectus, Mis-statement in Prospectus: Civil and Criminal Liability.
Various Modes for Raising of Capital. Global Depository Receipts (GDR), Book Building, Issue of Securities - Private Placement, Public Issue, Rights Issue, Bonus Shares; Employee Stock Option Scheme (ESOS), Sweat Equity Shares. Buy-back of shares, Allotment of Shares, Forfeiture of shares, and Transfer and Transmission of Securities.

UNIT III: Directors: Classification of Director- Women Director, Independent Director, Shareholder Director, Director Identification Number (DIN), Appointment of Director, Qualification and Dis-Qualifications. Legal Position, Powers and Duties, Removal of Director, Loans to Director and Remuneration to Director, Various Committee of the Board of Directors.
Key Managerial Personnel – Managing Director, Whole time Directors, Manager, the Company Secretary, Chief Executive Officer, Resident Director.

UNIT IV: Meetings: Statutory Meeting, Annual General Meeting (AGM), Extra- Ordinary Meeting, Class Meeting, Virtual Meeting, Meeting of Stakeholders.
Winding-up of Company: Meaning of winding-up, Dissolution of Company, Conceptual understanding of Winding-up by the Tribunal, Compulsory Winding-up, Members' Voluntary Winding-up, Creditors' Voluntary Winding-up.

Suggested Books and References:

- Avtar Singh, Indian Company Law, Eastern Book Company
- Roy & Das, Company Law, Oxford University Press
- GK Kapoor& Sanjay Dhamija, Company Law, Bharat Law House
- C.R. Datta, Datta on the Company Law, Lexis Nexis, Butterworths Wadhwa, Nagpur.
- K.C. Garg, R.C. Chawla, Vijay Gupta : Company Law, Kalyani Publishers.
- Kuchhal M.C., Modern Indian Company Law, Shri Mahavir Book Depot, Delhi.
- H.K. Saharay, Company Law, Universal Law Publishing Co., Delhi
- V.S. Datey, Guide to Tax and Corporate Laws, Taxmann, New Delhi.
- Shukla S.M., Company Adhiniyam evam Sachiviya padhati
- Mittal and Agarwal : Company Adhiniyam Evam Sachiviya Vidhi.

Course Learning Outcomes:

Dy. Registrar
(Academic)
University of Rajasthan
JAIPUR

बी सी एम -105 कम्पनी विधि

BCM-105 COMPANY LAW

खण्ड-1 **कम्पनी और इसका गठन (Company and its Formation**

इकाई-1 कम्पनी -प्रकृति और प्रकार (Company-Nature and Types)

इकाई-2 कम्पनी का गठन (Formation of Company)

खण्ड-2 **पार्षद सीमानियम और पार्षद अन्तर्नियम और प्रविवरण (Memorandum and Articles of Association and Prospectus)**

इकाई-3 पार्षद सीमानियम (Memorandum of Association)

इकाई-4 पार्षद अन्तर्नियम (Articles of Association)

इकाई-5 प्रविवरण (Prospectus)

इकाई-6 वैधानिक पुस्तकें (Statutory Books)

खण्ड-3 **अंशों व ऋणपत्रों का निर्गमन और कम्पनी सचिव (Issue of Shares and Debentures and Company Secretary)**

इकाई-7 अंश Share)

इकाई-8 अंश प्रमाणपत्र व अंश वारंट और डीमैट खाता (Share Certificate and Share Warrant and Demat Account)

इकाई-9 अंश हस्तांतरण और अंश संचरण (Share Transfer and Transmission of Shares)

इकाई-10 ऋणपत्र और ऋण लेने की शक्ति (Debentures and Borrowing Powers)

इकाई-11 कम्पनी की सदस्यता (Membership of Company)

खण्ड-4 **प्रबंधन और कम्पनी का समापन Management and Winding Up of Company)**

इकाई-12 निदेशक (Director)

इकाई-13 प्रबंधकीय पारिश्रमिक (Managerial Remuneration)

इकाई-14 सभा, एजेंडा, प्रस्ताव और कार्यवृत्त (Meetings, agenda, Resolutions and Minutes)

इकाई-15 कम्पनी सचिव (Company Secretary)

इकाई-16 समापन (Winding Up)

इकाई 1 कम्पनी – स्वभाव तथा प्रकार

इकाई की रूपरेखा

1.1 प्रस्तावना
1.2 कम्पनी का अर्थ
1.3 कम्पनी की विशेषतायें
1.4 कम्पनी के प्रकार
1.5 निजी तथा लोक कम्पनी में अन्तर
1.6 निजी कम्पनी के विशेषाधिकार
1.7 निजी कम्पनी का लोक कम्पनी में परिवर्तन
1.8 लोक कम्पनी का निजी कम्पनी में परिवर्तन
1.9 सारांश
1.10 शब्दावली
1.11 बोध प्रश्न
1.12 बोध प्रश्नों के उत्तर
1.13 स्वपरख प्रश्न
1.14 सन्दर्भ पुस्तकें

उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् आप इस योग्य हो सकेंगे किः–

- कम्पनी की परिभाषा, प्रकार तथा उसकी विशेषतायें की व्याख्या कर सकें।
- निजी कम्पनी के विशेषाधिकार का वर्णन कर सकें।
- निजी कम्पनी का लोक कम्पनी में परिवर्तन की प्रक्रिया तथा लोक कम्पनी का निजी कम्पनी में परिवर्तन की प्रक्रिया का वर्णन कर सकें।

1.1 प्रस्तावना

औधोगिक क्रान्ति ने तकनीक में महत्वपूर्ण परिवर्तन किये है। इससे उत्पादन में आवश्यक साधनों में पूंजी का महत्व बढ़ा है। एकाकी व्यापार तथा साझेदारी फर्म, व्यवसायिक संस्थान की लम्बे समय तक पर्याप्त पूंजी नही उपलब्ध करा पाते है। इस सभी ने व्यावसायिक संगठन के नये प्रारूप जो बड़ी संख्या में व्यक्तियों से पर्याप्त पूंजी उपलब्ध करा सके को आवश्यक कर दिया। ऐसे व्यक्ति वित्तिय कारण से संस्थान चलाने में असमर्थ होते है। वे ऐसे व्यवसाय में अपनी बचत लगाने को तैयार होते हैं, जहां उनका निवेश सुरक्षित हो तथा अपनी लगायी पूंजी के अतिक्ति और राशि विनियोग करने के लिये न कहा जाय। इसके परिणामस्वरूप संगठन का नया प्रारूप आस्त्वि में आया, जिसे संयुक्त स्कन्ध कम्पनी कहा जाता है।

1.2 कम्पनी का अर्थ

कॉम तथा पनीज कम्पनी शब्द दो लैटिन शब्दों से मिलकर बना है। कॉम का अर्थ साथ साथ तथा पनीज का अर्थ रोटी है। अतः प्रारंभतः कम्पनी का आशय ऐसे

व्यक्तियों के संगठन से है जो साथ साथ भोजन करते हो। लोग इस अवसर का उपयोग व्यवसायिक मामलों पर चर्चा करते है।

अतः सामान्य भाषा में कम्पनी समान उद्देश्यों को प्राप्ति के लिये बनाया गया व्यक्तियों का ऐच्छित संगठन हैं। यह समान सामाजिक या आर्थिक उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु विधिक यंत्र है। इसका उद्भव संगठन के अन्य प्रारूपों जैसे एकल व्यापार और साझेदारी की कमियों में फलस्वरूप हुआ।

कभी कभी साझेदारी फर्मों अपने नाम के साथ कम्पनी शब्द का उपयोग करती है जैसे मनिन्दर चन्द देविन्दर सिंह और कम्पनी परन्तु अतः चर्चा में आधार पर कम्पनी का आशय ऐसी कम्पनी से है जो कम्पनी अधिनियम 1956 में अन्तर्गत पंजीकृत हो। एक कम्पनी की स्थापना व्यापारिक तथा गैर व्यापारिक दोनों उद्देश्यों में लिये की जाती है। कम्पनी में संगठन में अन्य प्रारूपों की तुलना में पूंजी को गतिशीलता में अधिक स्वतंत्रता रहती है। कुछ विधिवेत्ताओं तथा विद्वानों द्वारा दी गयी परिभाषायें निम्न है–

कम्पनी अधिनियम 1956 को धारा 3 (1 और 2) के अनुसार– कम्पनी को आशय ऐसी कम्पनी से है जिसका निर्माण एवं पंजीकरण इस अधिनियम के अन्तर्गत हुआ हो।

जस्टिस जेम्स के अनुसारः– ''एक कम्पनी विभिन्न व्यक्तियों का एक समूह है, जिसका संगठन किसी विशेष उद्देश्य के लिए किया जाता है''

जस्टिस मार्शल के अनुसारः– संयुक्त पूंजी कम्पनी एक कृत्रिम, अदृश्य तथा अमूर्त संस्था है, जिसका अस्तित्व वैधानिक होता है और जो विधान द्वारा निर्मित होती है।

कम्पनी एक वैधानिक एवं अदृश्य कृत्रिम व्यक्ति है जिसका समामेलन कम्पनी अधिनियम के अन्तर्गत किसी विशेष उद्देश्य के लिए होता है, जिसका अस्तित्व सदस्यों से पृथक तथा स्थायी होता है, जिसकी एक सार्वमुद्रा होती है तथा सदस्यों का दायित्व सामान्य रूप से सीमित होता है।

अतः कम्पनी प्रारूप संस्थान के संचालन में सहयोग का माध्यम है। यह निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि कम्पनी एक ऐसा पंजीकृत संगठन है, जो एक कृत्रिम विधिक व्यक्ति है, जिसमें पास अविच्छिन्न उत्तराधिकार, तथा मुहर होती है, वर्तमान में भारत में कम्पनियाँ कम्पनी अधि0 1956 में अन्तर्गत पंजीकृत हो रही है।

1.3 कम्पनी की विशेषताएँ

1. **कृत्रिम व्यक्ति –** कम्पनी विधिक दृष्टि से एक कृत्रिम व्यक्ति है जो अदृश्य तथा गैर जीवित है तथा इसमें प्राकृतिम व्यक्तियों की शारीरिक आवश्यकताओं जैसे– भूख, प्यास विवाह तथा काम का अभाव पाया जाता है। विधि इसे कानूनी व्यक्ति इसलिये मानती है क्योंकि यह विधिक व्यवसाय का संचालन कर सकती है तािा अपने नाम से अन्य व्यक्तियों साथ संविदा कर सकती है । कम्पनी सम्पत्ति का क्रय तथा विक्रय कर सकती है। यह अपने नाम से वाद प्रस्तुत कर सकती है। इसमें विधिक अस्तित्व के कारण इसे काल्पनिक नहीं कहा जा सकता है। अतः कम्पनी विधिक दृष्टि से विधिक व्यक्ति है।

2. **स्वतंत्र निगमीय अस्तित्व** :–कम्पनी का स्वतंत्र निगमीय अस्तित्व होता है। इसका अपने सदस्यों से प्रथक अस्तित्व होता है। कम्पनी की सम्पत्ति का संबंध उसके अंशधारियों से न होकर कम्पनी से होता है। कम्पनी की सम्पत्ति का उपयोग कम्पनी के हित में होना चाहिये न कि अंशधारियों में व्यक्तिगत हितों के लिये। कम्पनी को सदस्यों के कृत्य में लिये उत्तरदायी नहीं ठहराया जा सकता है । न ही सदस्यों को कम्पनी के कृत्य में उत्तरदायी ठहराया जा सकता है। कम्पनी में सदस्य अन्य व्यक्तियों की भाँति कम्पनी से संविदा कर सकते है। कम्पनी में ऋणों के भुगतान में अंशधारियों को बाध्य नही किया जा सकता है। अतः कम्पनी के पंजीकरण होने के बाद उसे स्वतंत्र व्यक्ति माना जाता है। प्रथम वैधानिक अस्तित्व में सिद्धान्त को प्रमुख वाद सोलोमन बनाम सोलोम एण्ड कम्पनी में किया गया हैः–

इस मामले में, एक व्यक्ति जिसका नाम सॉलोमन था एक जूता निर्माता था उसने अपने व्यवसाय को चलाने और उसे आगे बढाने के लिए सॉलोमन एंड कम्पनी लिमिटेड नामक कम्पनी का निर्माण किया । उस कंपनी में वह, उसकी पत्नी, एक बेटी और चार बेटें शामिल थे । सॉलोमन और उनके दो बेटों ने कम्पनी के निदेशक मंडल का गठन किया । सॉलोमन ने अपने मुख्य व्यवसाय को नव निर्मित कम्पनी में £ 30,000 बेच दिया । कम्पनी में उनकी पत्नी, एक बेटी और चार बेटों प्रत्येक ने एक हिस्सा जिसका मूल्य £ 1 था लिया । सॉलोमन ने 20,000 अंश प्रत्येक का मूल्य £ 1 था और ऋणपत्र जिनका मूल्य £ 10,000 था, लिए। ये ऋणपत्र प्रमाणित करते हैं कि कम्पनी को सॉलोमन के £ 10,000 बकाया है जो कि कम्पनी की परिसंपत्तियों पर एक प्रभार बनाते है । सामान्य व्यापार मंदी के कारण कम्पनी एक वर्ष के भीतर परिसमापन की स्थिति में आ गई थी ।

समापन के समय, स्थिति विवरण में कुल परिसंपत्तियां £ 6,000; देनदारियों जिसमें सॉलोमन £ 10,000 के रूप में सुरक्षित ऋणपत्रधारक है और 7,000 पाउंड के असुरक्षित लेनदारों भी सम्मिलित है, का पता चला है । असुरक्षित लेनदारों ने दावा किया ऋणपत्रधारक के रूप में सॉलोमन के दावे पर इस आधार पर भुगतान में प्राथमिकता चाही है, कि सॉलोमन और उनकी कम्पनी एक ही है और एक ही व्यक्ति है । जब व्यवसाय केवल उससे से सम्बंधित था उसके द्वारा अपने लिए चलाया जाता था, कम्पनी केवल सॉलोमन के एजेंट के रूप में कार्य कर रही थी । इसलिए कम्पनी केवल, धोखा था। लेकिन हाउस ऑफ़ लॉर्ड्स ने यह माना कि कम्पनी एक वास्तविक कंपनी थी क्योंकि वह सभी आवश्यकताओं को पूरा करती थी । कानून की नजरो में कम्पनी एक पृथक व्यक्ति है और सॉलोमन से स्वतंत्र है । सॉलोमन, यद्यपि कम्पनी के सभी अंशो का धारक भी है, एक सुरक्षित लेनदार था इस कारण से असुरक्षित लेनदारों की तुलना में पुनर्भुगतान में प्राथमिकता का हकदार भी है।

लॉर्ड मैकनघटेंने ने इस मामले पर जोर दिया कि कम्पनी कानून की दृष्टि में सीमा नियम के सभी अभिदाताओं से अलग व्यक्ति है, और हालांकि यह हो सकता है कि निगमन के बाद, व्यापार ठीक पहले के समान है और वही व्यक्ति मैनेजर हैं, उन्ही व्यक्तियों को लाभ मिलता है, कानून की दृष्टि में कम्पनी उनके एजेंट या ट्रस्टी नहीं

है, । किसी भी व्यक्ति के हित की सीमा को इंगित करने के लिए कानून में कुछ भी नहीं है और न ही कानून में यह आवश्यक है कि सीमा नियम के अभिदाता स्वतंत्र या असंबद्ध होना चाहिए।

3. **शाश्वत उत्तराधिकारः–** एक कम्पनी कानून द्वारा निर्मित होती है तथा उसका समापन कानून द्वारा होता है। कम्पनी का जीवन उसके सदस्यों के जीवन पर निर्भर नहीं है। अंग्रेज कवि टेनिसन की कविता ब्रूक में निरन्तरता का वर्णन निम्न प्रकार किया गया हैः– व्यक्ति आते है और व्यक्ति जाते है, परन्तु में हमेशा रहता है''

इसी प्रकार कम्पनी की निरन्तरता के बारे में कहा जा सकता है–''सदस्य आते है, सदस्य जाते है परन्तु कम्पनी हमेशा चलती रहती है जब तक कि उसका समापन न कर दिया जाय। कमपनी की निरन्तरता उसमें सदस्यों की असमर्थता– जैसे मृत्यु, बीमारी, मानसिक या शारीरिक अपंगता से प्रभावित नहीं होती है। सभी सदस्यों की मृत्यृ पर भी कम्पनी बनी रहती है, प्रोफेसर ग्रोवर ने अपनी पुस्तक 'मार्डन कम्पनी लॉ' में एक उदाहरण दिया है–''युद्ध के दौरान एक प्राइवेट कम्पनी में सभी सदस्य बम से मारे जाते है, जबकि वे सभी सामान्य सभा में थे परन्तु कम्पनी बनी रही। हाइडोजन बम भी कम्पनी को समाप्त नहं कर सका''

यह विधि द्वारा निर्मित होती है तथा विधि द्वारा ही समाप्त होती है।

4. **सार्वमुद्रा :–**कम्पनी एक कृत्रिम व्यक्ति है तथा वह प्रसंविदा कर सकती है। परन्तु उसका कोई शारीरिक अस्तित्व नहीं है और न ही वह व्यक्तिगत रूप से दस्तावेजों पर हस्ताक्षर कर सकती है। वह मानव एजेन्सी जिसे संचालक कहते है, के माध्यम से कार्य करती है। इसलिये प्रत्येक कम्पनी को एक सार्वमुद्र होती है जिस पर उसका नाम छपा होता है। इसे वहाँ लगाया जाता है, जहाँ कम्पनी के अनुमोदन की आवश्यकता होती है, जिसके दो संचालक साक्षी होते है। अतः सार्वमुद्रा कम्पनी का अधिकृत हस्ताक्षर है।

5. **सीमित दायित्व :–** कम्पनी में सदस्यों का दायित्व उसके द्वारा लिये गये अंशों में न चुकाये गये मूल्य तक सीमित रहता है। किसी भी स्थिति में अंशधारी से उसके द्वारा लिये गये अंशों के मूल्य से अधिक नही माँगा जा सकता है। उदाहरण एक व्यक्ति जिसने 10/–प्रति रू0 में 50 अंश लिये है तथा आवेदन के समय उसने 5/–रू0 प्रति अंश चुकाये है, तो उसका चुकाया हुआ दायित्व 250/– होता है जिसे उसे कम्पनी के माँगने पर चुकाना होगा। गारण्टी द्वारा सीमित कम्पनी की दशा में, सदस्य कम्पनी में समापन पर एक निश्चित राशि भुगतान करने भी गारण्टी देते है।

6. **अंशों का हस्तान्तरणीयता :–** लोक कम्पनी में अंश स्वतंत्रतापूर्वक हस्तान्तरित किये जा सकते है। कम्पनी अधि0 की धारा 82 के अनुसार कम्पनी के किसी सदस्य के अंश तथा अन्य हित, पार्षद अन्तर्नियम के अनुसार चल सम्पत्ति की तरह हस्तान्तरण जिन्होने अंशो के हस्तान्तरण का अधिकार एक विधिक अधिकार है तथा अन्तर्नियम में प्रावधानों से प्रभावित नहीं किया जा सकता है। अतः कम्पनी के सदस्य खुले बाजार में अंशों के विक्रय हेतु स्वतंत्र है और अपना विनियोग वापस प्राप्त कर सकते है।

7. **पृथक सम्पत्ति :–** कम्पनी अपने नाम से सम्पत्ति का स्वामित्व प्रबंध नियंत्रण एवं विक्रय कर सकती है। कम्पनी अपनी सम्पत्ति तथा पूँजी की स्वामी होती है। अंशधारी न तो कम्पनी की सम्पत्ति के संयुक्त स्वामी होते है और न ही कम्पनी की सम्पत्ति में उनका बीमायोग्य हित होता है। माकुरा बनाम नार्दर्न एश्योरेन्स कम्पनी लि. के वाद में माकुरा कम्पनी के एक अंश को छोड़कर लगभग सभी अंशों का स्वामी था। वह कम्पनी का साखान लेनदार भी था। उसे कम्पनी की लकड़ी का अपने नाम से बीमा अंश रखा था। अग्नि में लकड़ी नष्ट हो जाने पर उसने क्षतिपूर्ति हेतु बीमा कम्पनी में दावा किया। इसमें निर्णय हुआ कि बीमा कम्पनी इसमे लिये दायी नहीं है। अतः कम्पनी को सम्पत्ति, अंशधारियों की सम्पत्ति नही है। अंशधारियों का कम्पनी की सम्पत्ति पर कोई विधिम या समता हित नही होता है।

8. **वाद करने का अधिकार :–** एक कम्पनी, विधिक व्यक्ति होने के कारण अपने अधिकारों को लागू कराने के लिये वाद दायर कर सकती है। इसी प्रकार उसमें विधिम दायित्वों की पूर्ति हेतु उस पर वाद दायर किया जा सकता है। उदा0–एक कम्पनी टेलीविजन सेट के निर्माण में सलग्न थी। उसने गुप्ता कम्पनी से कुछ इलेक्ट्रानिक उपकरण क्रय किये तथा उसका मूल्य चुकाया। परन्तु गुप्ता कम्पनी के उपकरण निम्न गुणवत्ता के थे। इस वाद में इलेक्ट्रानिक उपकरण क्रय करने वाली कम्पनी, हर्जाने को क्षतिपूर्ति हेतु गुप्ता कम्पनी पर वाद दायर कर सकती है। इसी प्रकार यदि गुप्ता कम्पनी अच्छी गुणवत्ता में उपकरण भी पूर्ति करती है। परन्तु क्रेता कम्पनी उसका भुगतान करने में असमर्थ रहती है, तो गुप्ता कम्पनी, उपकरण के मूल्य भुगतान हेतु वाद दायर कर सकती है।

9. **पेशेवर प्रबंध :–** संगठन में कम्पनी प्रारूप में प्रबंधन तथा स्वामित्व अलग–अलग होते है। इस कारण पेशेवर प्रबंधन का आकर्षण निगमीय क्षेत्र की ओर बढ़ा है।

1.4. कम्पनी के प्रकार

कम्पनी कुछ सामान्य प्राप्ति हेतु एक विधिम यंत्र है कम्पनी व्यक्तियों का संगठन है, जो विधि द्वारा निर्मित होता है, उसका सदस्यों से प्रथम अस्तित्व होता है तथा समान उद्देश्यों होता है।

कम्पनियों को विभिन्न आधारों पर वर्गीकृत किया जा सकता है, जो निम्न हैः–

समामेलन के आधार पर

कम्पनी या निगम के निर्माण के कृत्य को समामेलन कहते है। यह व्यक्तियों के समूह को विधिक प्रक्रिया द्वारा में बदलने की प्रक्रिया है समामेलन के आधार पर कम्पनी को तीन भागों में वर्गीकृत किया गया हैः–

i. **चार्टर्ड कम्पनियाँ :–** यह कम्पनियाँ, रायल या एक विशेष चार्टड, जो ब्रिटिश राजा या महरानी द्वारा प्रदान किया गया है, में द्वारा समामेलित होती है। इस प्रकार की कम्पनियों के व्यवसाय का स्वभाव तथाा शक्तियाँ चार्टड में परिभाषित होती है। यदि कम्पनी शर्तों की पूरा करने में असफल रहती है, तो सम्प्रभु को चार्टड को समाप्त करने की शक्ति है। इस प्रकार की कम्पनियों का उद्देश्य क्षेत्रों में शासन सैन्य नियंत्रण या व्यापार करना था। उदाहरण–

ईस्ट इण्डिया कम्पनी, बैंक आफ इंग्लैण्ड, स्टैण्डर्ड चार्टर्ड बैंक, ब्रिटिश ब्राडकास्टिंग कार्पोटिंशन तथा हालैण्ड की डच ईण्ट इण्डिया कम्पनी आदि चार्टर्ड कम्पनियाँ है।

ii. **वैधानिक कम्पनियाँः–** यह कम्पनियाँ केन्द्र या राज्य विधानमंण्डल के विशेष अधिनियम द्वारा समामेलित होती है। इन कम्पनियाँ का उद्देश्य, क्षेत्र, अधिकार तथा दायित्व का स्पष्ट वर्णन संबंधित अधिनियम में होता है। ऐसी कम्पनियाँ, राष्ट्रीय मध्य तथा जन कल्याण व्यवसाय को संचालित करने के उद्देश्य से निर्मित की जाती है। जैसे– रिजर्व बैंक आफ इण्डिया, स्टेट बैंक आफ इण्डिया भारतीय जीवन बीमा निगम, भारतीय खाद्य निगम अपने अधिकार द्वारा नियन्त्रित होती है और इनके लिये पार्षद सीमानियम तथा पार्षद अन्तर्नियम की आवश्यकता नहीं है। इन्हें अपने नाम के साथ लिमिटेड शब्द लगाने की भी आवश्यकता नहीं है।

यह ध्यातव्य है कि यद्यपि वैधानिक कम्पनियों का स्वामित्व सरकार का होता है, उसका प्रथम वैधानिक आस्तित्व होता है, परन्तु इसे सरकार का विभाग नहीं माना जाता है।

iii. **पंजीकृत कम्पनियाँ :–** ऐसी कम्पनियाँ जिसका पंजीकरण कम्पनी अधिनियम 1956 द्वारा होता है, पंजीकृत कम्पनी कहलाती है। भारत में अधिकांश कम्पनियाँ इस प्रकार की है। कोई भी विद्यमान कम्पनी जिसका निर्माण तथा पंजीकरण पूर्ववर्ती कम्पनी अधिनियमों द्वारा रजिस्टर्ड कम्पनियाँ का नियंत्रण कम्पनी अधिनियम 1956 के प्रावधानों द्वारा होता है तथा इसके नियम पार्षद सीमानियम तथा अतर्नियम में होते है। ऐसी कम्पनियों के सदस्यों का दायित्व उनके द्वारा लिये गये अंशों के न चुकाये गये मूल्य या ली गयी गारण्टी तक सीमित होती है।

2. दायित्व के आधार पर

कम्पनी में सदस्यों का दायित्व, कम्पनी के विभिन्न प्रकारों के विभाजन का इसमें आधार है। दायित्व का आशय सदस्यों द्वारा लिये गये अंशों में न चुकाये गये मूल्य या ऐसी राशि की गारण्टी जो कम्पनी के समापन पर दी जानी है, से है। सदस्यों का दायित्व इस सीमा तक है तथा इसके ऊपर सदस्यों से कम्पनी में दायित्वों का भुगतान करने के लिये नहीं कहा जा सकता है। अतः कम्पनी के समापन के समय यदि कम्पनी की सम्पत्तियाँ, उसके दायित्वों का भुगतान करने के लिये अपर्याप्त है, तब भी सदस्यों की व्यक्तिगत सम्पत्ति का उपयोग भुगतान हेतु नहीं किया जा सकता है। यह ध्यातव्य है कि लिमिटेड कम्पनी को अपने नाम के बाद लिमिटेड शब्द जोड़ना आवश्यक है। इस आधार कम्पनियों को तीन भागों में बांटा गया हैः–

(1) **अंशों द्वारा सीमित कम्पनियाँ** जब कम्पनीके सदस्यों का दायित्व उनके द्वारा लिये गये अंशों के न चुकाये गये मूल्य तक सीमित होता है तो इसे सीमित दायित्व वाली कम्पनी या अंशों द्वारा सीमित कम्पनी या अंशों द्वारा सीमित कम्पनी कहते है। इस दायित्व या न चुकायी गयी राशि को कम्पनी अपने जीवन काल या समापन, पर कभी भी माँग सकती है। जैसे– यदि एक व्यक्ति ने 10/– रू0 प्रति अंश को 100

अंश पर 5/–रू0 प्रति अंश चुकाये 8तो उसका कुल दायित्वा मात्र 500 रू0 तक सीमित होगा तथा इसे किसी भी समय माँगा जा सकता है। किसी भी स्थिति में इस राशि से अधिक उससे नहीं माँगा जा सकता है।

(2) **प्रत्याभूति या गारण्टी द्वारा सीमित कम्पनियाँ**

गारण्टी द्वारा सीमित कम्पनी में सदस्य का दायित्व कम्पनी को गारण्टी देते है कि उसी सदस्यता के समय या सदस्यता समाप्त होने में एक वर्ष में भीतर कम्पनी का समाप्त हो जाय तो वे कम्पनी को एक निश्चित राशि देंगे।

(3) **असीमित दायित्व वाली कम्पनियाँ :–** असीमित दायित्व वाली कम्पनी वह कम्पनी है जिसके दायित्व की कोई सीमा नहीं है। अन्य शब्दों में इसमें सदस्य अपने अपने हितों के अनुपात में कम्पनी के ऋणों को भुगतान करने हेतु उत्तरदायी होते है। यदि कोई सदस्य भुगतान करने में असमर्थ रहता है तो उसकी कमी को कम्पनी में अन्य सदस्यों द्वारा उनकी पूँजी के अनुपात में किया जाता है। यदि ऐसी कम्पनियों की सम्पत्ति उसके दायित्वों का भुगतान करने के लिये अपर्याप्त है तो सदस्यों की व्यक्तिगत सम्पत्ति का उपयोग इस उद्देश्य हेतु किया जा सकता है। ऐसी कम्पनी में अंशपूंजी हो भी सकती और नहीं भी। यदि कम्पनी के पास अंशपूँजी है तो वह प्राइवेट या लोक कम्पनी हो सकती है। ऐसी कम्पनी में पार्षद अन्तर्नियम होना आवश्यक है जिसमें कम्पनी के समामेलन के समय सदस्यों भी संख्या का उल्लेख हो (धारा 12 (2)(स)). अधि0 की धारा 32 के अनुसार एक असीमित दायित्व वाली कम्पनी में परिवर्तित हो सकती है।

आजकल असीमित दायित्व वाली कम्पनियों का प्रचलन कम है।

(3) **सदस्यों की संख्या के आधार पर :–** सदस्यों की संख्या के आधार पर कम्पनियाँ दो प्रकार की होती हैः–

i. **प्राइवेट या निजी कम्पनीः**– प्राइवेट कम्पनी वह कम्पनी है जिसकी प्रदत्त पूँजी कम से कम 1 लाख रू0 हो या इससे अधिक पूँजी जो अन्तर्नियम द्वारा निर्धारित हो। निजी कम्पनी का आशय ऐसी कम्पनी से है जो अपने अन्तर्नियमों द्वाराः–

(क) अपने अंशों के (यदि कोई हो) हस्तान्तरण पर प्रतिबंध लगाती है।

(ख) अपने सदस्यों की संख्या 50 तक सीमित रखती है किन्तु इस संख्या में निम्न शामिल नहीं हैः–

1.ऐसे व्यक्ति जो कम्पनी में कर्मचारी हो 2. ऐसे व्यक्ति जो कम्पनी में कर्मचारी रह चुके हो 3. तथा जब कम्पनी के कर्मचारी थे इस समय कम्पनी के सदस्य भी थे तथा सेवा समाप्ति के बाद भी सदस्य है।

(ग) कम्पनी के अंशों या ऋणपत्रों के क्रय हेतु जनता को आमंत्रण पर प्रतिबंध है।

(घ) अपने सदस्यों, संचालयों या अन्य रिश्तेदारों के अतिरिक्त किसी अन्य से जमा स्वीकार करने में प्रतिबंध है।

परन्तु 'ख' में यह ध्यातव्य है कि कम्पनी के निदेशकों को कम्पनी का कर्मचारी नहीं माना जायेगा तथा संयुक्त स्वामियों को एकल सदस्य माना जायेगा निजी कम्पनी के सदस्यों की न्यूनतम संख्या 2 है तथा अपने नाम के अन्त में प्राइवेट लिमिटेड शब्द

लगाना अनिवार्य है। यहाँ यह ध्यातव्य है कि ऋणपत्रधारी की अधिकतम संख्या 50 से अधिक भी हो सकती है।

ii. **लोक कम्पनी :–** कम्पनी अधि0 1956 के अनुसार लोक कम्पनी वह है जो निजी कम्पनी नहीं है

इसकी न्यूनतम प्रदत्त पूंजी 5लाख तथा या उससे अधिक है 3. जनता को अंशों या ऋणपत्रों को क्रय हेतु आमंत्रित कर सकती है।

लोक कम्पनी में सदस्यों की न्यूनतम संख्या 7 तथा अधिकतम संख्या पर कोई प्रतिबंध नहीं है। इसके अंशों का हस्तान्तरण स्वतंत्रतापूर्वक किया जा सकता है लोक कम्पनी के नाम के साथ लिमिटेड शब्द जोड़ना आवश्यक है।(धारा 3 (1)(5))

4. **प्रबंध तथा नियंत्रण के आधार पर :–** कम्पनी के प्रबंध एवं नियंत्रण से आशय उसमें निदेशक मण्डल या अंशों को धारित करने या दोनों से है। इस आधार पर कम्पनी को दो भागों में बाटा गया है :–

i. **सूत्रधारी कम्पनी** :– कम्पनी अधि0 1956 के अनुसार सूत्रधारी कम्पनी वह कम्पनी है जिसका दूसरी कम्पनी पर नियंत्रण है। एक कम्पनी को दूसरी कम्पनी को सूत्रधारी कम्पनी माना जायेगा जब :–

1. इसका दूसरी कम्पनी के संचालन मण्डल पर नियंत्रण है अर्थात उसे दूसरी कम्पनी के सभी या अधिकांश संचालकों की नियुक्ति तथा हटाने का अधिकार है।

   एक कम्पनी को निम्न दशाओं में दूसरी कम्पनी संचालकों की नियुक्ति की प्राप्त शक्ति माना जायेगा यदि

   1. यदि बिना उस कम्पनी की सम्पत्ति में किसी व्यक्ति संचालक नियुक्त नहीं किया जा सकता है।
   2. यदि उसकी संचलाक के रूप में नियुक्ति तभी संभव है जबकि वह दूसरी कम्पनी में संचालक हो।
   3. यदि संचालक अन्य कम्पनी या उसके सहायक कम्पनी द्वारा नामाँकित किया गया है
   4. उसके पास अन्य कम्पनी की समता अंश पूँजी के सममूल्य के आधे से अधिक अंश है।

5. कोई कम्पनी अन्य कम्पनी की सहायक कम्पनी है जबकि वह नियंत्रण करने वाली कम्पनी भी सहायक कम्पनी है।(धारा 4(4))

जैसे– अ कम्पनी ब कम्पनी की सहायक कम्पनी है तथा ब कम्पनी, स कम्पनी की सहायक कम्पनी है तो इस स्थिति अ कम्पनी स कम्पनी की सहायक कम्पनी होगी।

ii. **सहायक कम्पनी :–** सहायक कम्पनी वह कम्पनी है जिसका नियंत्रण अन्य कम्पनी द्वारा किया जाता है। उसे अन्य कम्पनी द्वारा नियंत्रित माना जायेगा यदि

(क) यदि उसके संचालन मण्डल को अन्य कम्पनी द्वारा नियंत्रित किया जाता है अर्थात दूसरी कम्पनी को उसमें संचालकों की नियुक्ति तथा हटाने का अधिकार है।

(ख) दूसरी कम्पनी उसके आधे से अधिक समता अंश पूँजी को धारित करती है।

(ग) वह अन्य कम्पनी की सहायक कम्पनी हो जायेगी जबकि उसकी नियंत्रक कम्पनी अन्य कम्पनी की सहायक कम्पनी है।(धारा 4 (1)

सूत्रधारी कम्पनी तथा सहायक कम्पनी दोनों का प्रथम वैधानिक अस्तित्व होता है तथा प्रत्येक का प्रथम निगमीय आवरण होता है। सूत्रधारी कम्पनी तथा सहायक कम्पनी को एक कम्पनी नही माना जाता है।

5. **स्वामित्व के आधार पर :–** स्वामित्व से आशय धारित पूँजी के अनुपात से है। इस आधार पर कम्पनी को दो भागों में बाँटा गया है :–

i. सरकारी कम्पनी – कम्पनी अधि0 1956 के अनुसार सरकारी कम्पनी वह कम्पनी है जिसमें 51 प्रतिशत प्रदत्त अंश पूंजी को धारित किया जाता है:–

क. केन्द्र सरकार द्वारा अथवा

ख. किसी राज्य सरकार द्वारा अथवा

ग. अंशतः केन्द्र सरकार तथा अंशतः एक या अधिक राज्य सरकार द्वारा यह ध्यातव्य है कि सरकारी कम्पनी की सहायक कम्पनी भी सरकारी कम्पनी मानी जायेगी।

ii. **गैर सरकारी कम्पनी :–** ऐसी सभी कम्पनियाँ जिनका पंजीकरण तथा समामेलन कम्पनी अधि0 1956 के अन्तर्गत हुआ है परन्तु वह सरकारी कम्पनी नहीं है तो उसे गैर सरकारी कम्पनी कहते है। इसका आशय है कि यदि 51 प्रतिशत या इससे अधिक मूल्य की अंश पूंजी निजी क्षेत्र धारित करता है तो उसे गैर–सरकारी कम्पनी कहते है। जैसे– रिस्को, रिलायंस इण्डस्ट्रीज आदि।

6. **राष्ट्रीयता के आधार–** कम्पनी की राष्ट्रीयता का निर्धारण उसके समामेलन के स्थान से होता है। नागरिक की तरह कम्पनी की भी नागरिकता होती है। इस आधार पर कम्पनी दो प्रकार की होती है।

i. विदेशी कम्पनी– विदेशी कम्पनी वह कम्पनी है जिसका समामेलन भारत के बाहर हुआ हो परन्तु उसका व्यवसाय क्षेत्र भारत में हो।(धारा 591 (1)) व्यवसाय के स्थान से आशय ऐसे स्थान से जहाँ व्यवसाय किया जा रहा है। जैसे– आफिस, स्टोर, भण्डार गृह आदि। अंक हस्तान्तरण या अंश पंजीकरण कार्यालय को व्यवसाय का स्थान माना जायेगा। यदि विदेशी कम्पनी की प्रदत्त अंश पूंजी का 50% या इससे अधिक अंश पूंजी भारतीय नागरिकों या भारतीय कम्पनियाँ द्वारा अकेले या संयुक्त रूप से लिया है तो उसे भारतीय कम्पनी माना जायेगा (धारा 591 (2))।

ii. भारतीय कम्पनी– अधिनियम के प्रावधानों के अनुसार जो कम्पनी विदेशी कम्पनी नहीं है वह देशी या भारतीय कम्पनी है।

अन्य आधार–

i. लाइसेंस प्राप्त कम्पनियाँ या बिना लाभ वाली संगठन– इस प्रकार की संगठन या कम्पनी की स्थापना दान, विज्ञान, वाणिज्य, कला, खेल, संस्कृति के विकास के लिए की गयी सामान्यतः ऐसे संगठनों का वाणिज्यिक स्वभाव नहीं होता है

न ही इनका उद्देश्य लाभ कमाना होता है। ऐसी कम्पनियों को प्रदान करने के लिए निम्न शर्तें है–

क. संगठन का उद्देश्य दान, विज्ञान, वाणिज्य, कला, खेल, धर्म, संस्कृति तथा कुल अन्य समाजी उपयोगी कार्य के उन्नयन तथा समवर्धन करना है

ख. ऐसे संगठन को अपना लाभ (यदि कोई है) लाभ की उपरोक्त कृत्यों पर खर्च करना है।

उपरोक्त शर्तों की पूर्ति होने पर केन्द्र सरकार लाइसेंस प्रदान करती है। पंजीकरण होने पर संगठन वह सभी विशेषाधिकार प्राप्त करता है तो लिमिटेड कम्पनी प्राप्त करती है ऐसे संगठनों अधिनियम के अर्न्तगत कुछ छूट प्राप्त है जिसमें बिना स्टॉम्प भुगतान में पंजीकरण सामिल है। ऐसी छूट का उद्देश्य उपरोक्त सामाजों उपयोगी कृत्य को बढ़ा देना है ऐसा संगठन बिना केन्द्र सरकार की पूर्वानुमति के अपने उद्देश्य में परिर्वतन नहीं कर सकता है। परन्तु ऐसा करने के पूर्व केन्द्र सरकार संगठन को इस आशय लिखित नोटिस देगी तथा सुनवाई का एक अवसर भी देगी (धारा 25)।

1. **एक व्यक्ति की कम्पनी :–** एक व्यक्ति कम्पनी प्रायः प्राइवेट कम्पनी होती है। यह ऐसी कम्पनी है, जिसके एक व्यक्ति व्यवहार में सम्पूर्ण अंशपूंजी को धारित करता है। न्यूनतम सदस्य संख्या की विधिक ओपाचारिकता को पूरा करने के लिये, कुछ उमी सदस्यों जिनमें अधिकतर मित्र तथा रिश्तेदारों से सम्मिलित करते है। ऐसे सदस्यों के मात्र एक या दो अंश रहते है। अधिकतम अंशों का धारक सदस्य कम्पनी पर पूर्ण नियंत्रण रखता है।

   एक व्यक्ति को विधिक अस्तित्व है तथा वह पूर्णतया वैध है। विधि ऐसी कम्पनी में मित्रों तथा रिश्तेदारों के सदस्य होने पर प्रतिबंध नहीं लगाती है, न ही (जब तक कि वह विधिक हो) ऐसी कम्पनी एक व्यक्ति को कम्पनी पर पूर्ण नियंत्रण,लाभ तथा सीमित दायित्व का लाभ प्रदान करती है।

1.5 लोक कम्पनी तथा निजी कम्पनी में अंतर

लोक कम्पनी तथा निजी कम्पनी में निम्न अन्तर है।

क्र. सं.	लोक कम्पनी	निजी कम्पनी
1.	इसमें कम से कम 7 तथा अधिकतम संख्या निर्गमित अंशो में बराबर हो सकती है।	कम से कम 2 अधिकतम 50
2.	इसमें कम से कम 3 संचालक अवश्य होने चाहिये	न्यूनतम 2
3.	इसमें सभा के लिये कार्यवाहक संख्या 5 होती है।	कार्यवाहक सदस्यों की संख्या–2 होती है।
4.	यह जनता को अपने अंशों के क्रय हेतु आमंत्रित कर सकती है।	इस पर अंशों तथा ऋणपत्रों के क्रय हेतु जनता के आमत्रण पर प्रतिबंध है।
5.	लोक कम्पनी अंशों का स्वतंत्र हस्तन्तरण कर	निजी कम्पनी में अंशों के

	सकती है।	हस्तान्तरण पर प्रतिबन्ध है।
6.	लोक कम्पनी प्रविवरण या स्थानापन्न प्रविवरण का निर्गमन कर सकती है।	निजी कम्पनी प्रविवरण का निर्गमन नहीं कर सकती है।
7.	यह शेयर वांरट जारी कर सकती है।	यह शेयर वारंट नहीं जारी कर सकती है।
8.	इसे अपने नाम के अन्त मे ''लिमिटेड'' शब्द जोड़ना अनिवार्य है।	यह नाम के अन्त में ''प्राइवेट लिमिटेड'' शब्द जोड़ती है।

1.6 निजी कम्पनी के विशेषाधिकार

कम्पनी अधि0 1956 के अन्तर्गत सभी निजी कम्पनी के कुछ विशेषाधिकार प्राप्त है।

परन्तु कुछ विशेषाधिकार तथा छूटे ऐसी है जो केवल स्वतंत्र निजी कम्पनियों को प्राप्त है।

सभी निजी कम्पनियों को निम्न विशेषाधिकार प्राप्त है :–

i. **न्यूनतम सदस्य संख्या–** निजी कम्पनी के हेतु केवल दो ही सदस्यों की आवश्यकता होती है। इसका निर्माण कि प्रक्रिया आसान है।

ii. यह समामेलन का प्रमाण पत्र प्राप्त करने के पश्चात् अपना व्यवसाय प्रारम्भ कर सकती है। इसे व्यवसाय प्रारम्भ करने के प्रमाण पत्र की आवश्यकता नहीं होती है। धारा 149(7)

iii. निजी कम्पनी को प्रविवरण या स्थानापन्न प्रविवरण के निर्गमन की आवश्कता नहीं होती है। धारा 70(3)

iv. यह शेयरों का आवंटन न्यूनतम अभिदान की राशि प्राप्त करने के पूर्व कर सकती है।

v. इसे वैधानिक सभा को करने की आवश्यकता नहीं है तथा वैधानिक प्रपत्र दाखिल करने की आवश्यकता नहीं है। धारा 165

vi. इसके संचानकों की न्यूनतम संख्या मात्र 2 होती है तथा उनकी सहमति रजिस्ट्रार के यहाँ दाखिल करने की आवश्यकता नहीं होती है। धारा 252(2), 264(3), 266(5)

vii. इसे सदस्यों के अनुक्रमांणिका रखने की आवश्यकता नहीं है।

viii. निजी कम्पनी की सभाओं में मात्र 2 सदस्यों से गणपूर्ति की आवश्यकता पूरी हो जाती है।

ix. निजी कम्पनी में अधिकतम प्रबन्धकीय प्रारिश्रमिक से संबंधित नियम लागू नहीं होते है। धारा 198(1)

x. निजी कम्पनी में प्रबन्धकीय पारिश्रमिक की अधिकतम सीमा का नियम पार नहीं होता है। धारा 198(1)

स्वतन्त्र निजी कम्पनियों कुछ अतिरिक्त विशेषाधिकार प्राप्त है जो निम्न है–

1. निदेशकों के पारिश्रमिक पर कोई प्रतिबन्ध नहीं है जबकि लोक कम्पनियाँ निदेशकों को अपने लाभ का 11 प्रतिशत से अधिक नहीं दे सकती। धारा 309
2. इसमें निदेशकों के सहमति को दाखिल करने की आवश्यकता नहीं है। धारा 260(5)
3. निदेशक किसी भी सौदे के कार्य में भाग ले सकते हैं तथा अपना मत दे सकते हैं।
4. इसमें एक व्यक्ति निदेशक के रूप में एक समय में कई कम्पनियों में कार्य कर सकता है। धारा 275–279
5. स्वतन्त्र निजी कम्पनियों में निदेशकों की नियुक्ति, पुनः नियुक्ति तथा अवकाश ग्रहण के प्रावधान लागू नहीं होते। धारा 266
6. ऐसी कम्पनियाँ बिना केन्द्र सरकार के अनुमोदन के निदेशकों की संख्या घटा तथा बढ़ा सकती है। धारा 259
7. अन्य कम्पनियों को ऋण से सम्बन्धित प्रतिबन्ध इन पर लागू नहीं होते। धारा 356(2)
8. यह कम्पनियाँ समान समूह की अन्य कम्पनियों के अंशों तथा ऋण पत्रों को क्रय कर सकती है। धारा 372(4)

निजी कम्पनी की कमियाँ :–

निजी कम्पनी को विभिन्न विशेषाधिकार प्राप्त होने के बाद भी उसमें निम्न हानियाँ निहित है:–

1. एक निजी कम्पनी को अपने सदस्यों की सूची तथा साराँश प्रति वर्ष रजिस्ट्रार के पास फाइल करना अनिवार्य है। (धारा 159)
2. एक निजी कम्पनी का सदस्य एक से अधिक प्राक्सी की नियुक्ति नहीं कर सकता है ऐसे प्राक्सी को मतदान में अतिरिक्त मत देने का अधिकार नहीं है।
3. एक निजी कम्पनी को रजिस्ट्रार को इस आशय का प्रमाण–पत्र भेजना होता है कि उसका वार्षिक टर्न ओवर विगत 3 वर्षों में कभी भी 25 करोड़ रूपये या उससे अधिक नहीं था, वह एक या अधिक लोक कम्पनी में प्रदत्त अंश पूंजी का 25% या इससे अधिक धारित नहीं करती है तथा पिछली साधारण सभा से किसी कम्पनी के पास उसके 25% या अधिक प्रदत्त अंश नहीं हैं।
4. वह अपनी सार्वमुर्द्रा से शेयर वांरट नहीं जारी कर सकती है (धारा 116)।

1.7 निजी कम्पनी का लोक कम्पनी में परिवर्तन

कम्पनी अधिनियम 1956 की धारा 43, 43अ तथा 44 के अन्तर्गत एक निजी कम्पनी लोक कम्पनी में परिवर्तित हो सकती है, जिसके प्रावधान निम्न हैं–

1. शर्तों का उल्लंघन करने पर परिवर्तन (धारा 43)–

1. यदि कोई निजी कम्पनी की धारा 3 (1(3)) के अनुसार लगाये गये प्रतिबन्धों का पालन करने में गलती करती है तो निजी कम्पनी लोक कम्पनी बन जाती है। तथा उसको भी प्राप्त सभा छूट तथा विशेषाधिकार समाप्त हो जाता है। ऐसी

दशा में उस पर लोक कम्पनी का नियम लागू होता है परन्तु निम्न दशाओं में उसे छूट प्राप्त होती है। यदि शर्तों का पालन न करना एक दुर्घटना थी या बिन जानकारी के थी।

2. यदि छूट देना न्यायोचित है।

परन्तु उपरोक्त छूट को प्रदान विवेकाधीन है तथा ऐसा कम्पनी या उसमें हित रखने वाले व्यक्ति के आवेदन पर भी किया जाता है।

2. कानून के प्रवर्तन द्वारा परिवर्तन (धारा 43–अ)–

निजी कम्पनियाँ कुछ विशेषाधिकार को प्राप्त करती हैं। जिसका आधार उनका पारिवारिक संगठन होना है जिसमें जनता प्रत्यक्ष रूप से भागी नहीं होती है। यह धारा उन निजी कम्पनियों पर लागू होती है जिनमें लोक धन की कुछ मात्रा लगी हुई है।

इस धारा के अन्तर्गत निजी कम्पनी को निम्न परिस्थितियों में लोक कम्पनी माना जायेगा–

1. यदि उसकी 25 प्रतिशत या उससे अधिक दत्त अंश पूँजी को एक या अधिक लोक कम्पनियों द्वारा ले लिया गया हो।
2. यदि वह निजी कम्पनी किसी लोक कम्पनी की 25 प्रतिशत या उससे अधिक दत्त अंश पूँजी क्रय कर लेती है।
3. यदि ऐसी कम्पनी का औसत वार्षिक टर्न ओवर विगत 3 वित्तीय वर्षों में 25 करोड से कम न हो।
4. यदि निजी कम्पनी जनता से जमा को आमन्त्रित स्वीकार तथा नवीनी करण करती है तो वह लोक कम्पनी मानी जायेगी।

3. अपनी इच्छा से परिवर्तन धारा 44 –

एक निजी कम्पनी इच्छित रूप से लोक कम्पनी बन सकती है–

1. धारा 3(1)(4) में दिये गये प्रतिबन्धों को समाप्त करने हेतु विशेष प्रस्ताव द्वारा अर्न्तनियम में प्रतिबन्धात्मक वाक्यों को हटाते हुए परिवर्तन द्वारा।
2. प्रविवरण व स्थानापन विवरण के संशाधित अन्तर नियम तथा प्रस्ताव भी प्रति रजिस्ट्रार को भेजना।
3. न्युनतम सदस्य संख्या 7 होगी।

1.8 लोक कम्पनी का निजी कम्पनी में परिवर्तन

जैसे निजी कम्पनी या लोक कम्पनी में परिवर्तन होता है, उसी प्रकार लोक कम्पनी का निजी कम्पनी में परिवर्तन होता है। इस उद्देश्य के लिये धारा 31 में दी गयी निम्न प्रक्रिया अपनायी जाती है–

1. निजी कम्पनी में विधिक प्रतिबंधों को जोड़ने के लिये, विशेष प्रस्ताव द्वारा अन्तर्नियम में परिवर्तन किया जाता है। कोई ऐसा प्रावधान , जो निजी कम्पनी से असंगत हो, को भी समाप्त कर दिया जाता है।
2. इस उद्देश्य का केन्द्र सरकार अनुमोदित लिया जाना चाहिये।
3. सरकार से अनुमोदित प्राप्ति के एक माह में अन्तर रजिस्ट्रार अनुमोदन की प्रति तथा संशोधित अन्तर्नियम की मुद्रित प्रति भेजी जाती है।

एक लोक कम्पनी उस दिन से निजी कम्पनी मानी जायेगी तथा उसके नाम के अन्त में प्राइवेट लिमिटेड शब्द जोड़ा जायेगा जिस दिन से उसे केन्द्र सरकार का अनुमोदन प्राप्त हो जाता है।

1.9 साराँश

एक कम्पनी का आशय ऐसी व्यक्तियों के समूह से है जो समान उद्देश्यों के लिये एकत्रित हुआ है, जिसमें व्यवसाय द्वारा लाभार्जन या अन्य कार्य आते है। एक कम्पनी जो कम्पनी अधि0 1956 के अन्तर्गत निर्मित तथा समामेलित हुई है, उसकी कुछ विशेष विशेषतायें हैं, जिससे कम्पनी का स्वभाव परिलक्षित होता है। कम्पनी को विभिन्न आधारों पर वर्गीकृत किया जा सकता है:–

समामेलन के अनुसार पर राजाज्ञा कम्पनी, वैधानिक कम्पनी तथा पंजीकृत कम्पनी दायित्व के आधार पर अंशों द्वारा सीमित कम्पनियाँ तथा गारण्टी और असीमित कम्पनियाँ सदस्यों की संख्या के आधार पर निजी तथा लोक कम्पनी, नियंत्रण तथा सहायक कम्पनी, स्वामित्व के आधार पर –सरकारी तथा गैर सरकारी कम्पनी, राष्ट्रीयता के आधार पर –विदेश तथा भारतीय कम्पनी ।

1.10 शब्दावली

- **कम्पनी:–** एक कम्पनी से आशय ऐसे व्यक्तियों के संगठन से है, जो समान उद्देश्य के लिये एकत्रित हुये है, जो व्यवसाय के लाभ या अन्य लाभ के उद्देश्य से हुआ है।
- **पंजीकृत कम्पनी:–** ऐसी कम्पनी जो भारत में भारतीय कमपनी अधि0 1956 या किसी पूर्ववर्ती कम्पनी अधि0 के निर्मित तथा पंजीकृत हुयी हो, पंजीकृत कहलाती है।
- **लोक कम्पनी:–** लोक कम्पनी से आशय ऐसी कम्पनी से है, जो निजी कम्पनी नहीं है।
- **सूत्रधारी कम्पनी:–** एक कम्पनी को दूसरी में सूत्रधारी कम्पनी माना जायेगा, यदि दूसरी कम्पनी, उस कम्पनी की सहायक, कम्पनी है।
- **विदेशी कम्पनी:–** कम्पनियाँ जो भारत के बाहर समामेलित हुयी है, परन्तु उनके व्यवसाय का स्थान भारत में है, विदेशी कम्पनी कहलाती है।

1.11 बोध प्रश्न

(क) खाली स्थान भरियेः–

1. एक कम्पनी .... पर वाद कर सकती है तथा .... उस कम्पनी पर वाद कर सकती है।
2. एक कम्पनी एक कृत्रिम व्यक्ति है तथा वह...................................करने में सक्षम है।
3. जब राज्य या केन्द्र सरकार के विशेष अधिनियम के द्वारा कम्पनी समामेलित होती है तो उसे .... कहते है।

4. एक कम्पनी जिसमें से सदस्यों के दायित्व की सीमा नहीं है तो वह .... कहलाती है।
5. एक निजी कम्पनी शेयर वांरट जारी .... सकती है।
6. एक निजी कम्पनी इच्छा से .... बन सकती है।
7. एक कम्पनी उस दिन से निजी कम्पनी बन जायेगी जिस दिन से उसने .... का अनुमोदन प्राप्त किया है।

(ख) सत्य/असत्य–

1. मात्र विधि की दृष्टि में कम्पनी एक विधिक व्यक्ति है।
2. कम्पनी का जीवन उसके सदस्यों के जीवन पर निर्भर है।
3. गारण्टी द्वारा सीमित कम्पनी की गारण्टी राशि का उल्लेख उसके पार्षद अर्न्तनियम में होता है।
4. सहायक कम्पनी वह कम्पनी है जो अन्य कम्पनी द्वारा नियंत्रित होती है।

1.12 बोध प्रश्नों के उत्तर

(क)

1. नाम 2. संविदा 3. वैधानिक कम्पनी 4. असीमित कम्पनी
5. नहीं 6. आवश्यकता नहीं 7. लोक कम्पनी 8. केन्द्र सरकार

(ख)

1. सत्य 2. असत्य 3. असत्य 4. सत्य

1.13 स्वपरख प्रश्न

1. कम्पनी की परिभाषा दीजिए। उसकी मुख्य विशेषता की विवेचना कीजिए।
2. विभिन्न प्रकार की कम्पनियाँ जो कम्पनी अधिनियम 1956 में होती हैं, का वर्णन कीजिए।
3. निजी कम्पनी की परिभाषा दीजिए। एक निजी कम्पनी को कौन–कौन सी विशेषाधिकार तथा छूटे प्राप्त होती है?
4. एक निजी कम्पनी कब लोक कम्पनी बन जायेगी?

1.14 सन्दर्भ पुस्तकें

1. पी0पी0 गोगना, मर्केटिंइस लॉ, एस0चन्द एण्ड कं0 नई दिल्ली।
2. एन0डी0 कपूर, कम्पनी लॉ, सुल्तान चन्द्र एण्ड कम्पनी नई दिल्ली।
3. एस0सी0 अग्रवाल, कम्पनी लॉ, धनपत राय प्रकाशन नई दिल्ली।
4. के0 आर0 बाल चन्द्र मैनेजमेन्ट कास्ट।
5. एस0 के0 अग्रवाल, व्यवसायिक विधि गलगोटिया पब्लिशिग कम्पनी नई दिल्ली।
6. एस0एस0 गुलशन व जी0के0 कपूर, विजिनेस लॉ व कम्पनी लॉ, न्यू एज इण्टरनेशनल पब्लिशर्स, नई दिल्ली।
7. एम0सी0 कुच्छल व दीपा प्रकाश, विजिनेस लेजिस्लेशन कास्ट मैंनेजमेन्ट, विकास पब्लिशिग हाउस प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली।

इकाई 2 कम्पनी का निर्माण

इकाई की रूपरेखा

2.1 प्रस्तावना
2.2 प्रवर्तन
2.3 समामेलन
2.4 पूंजी अभिदान
2.5 व्यवसाय का प्रारंभ
2.6 साराँश
2.7 शब्दावली
2.8 बोध प्रश्न
2.9 बोध प्रश्नों के उत्तर
2.10 स्वपरख प्रश्न
2.11 सन्दर्भ पुस्तकें

उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् आप इस योग्य हो सकेंगे किः–

- कम्पनी के निर्माण के चरणो की व्याख्या कर सकें।
- कम्पनी के निर्माण में प्रवर्तक की भूमिका का वर्णन कर सकें।
- कम्पनी के साममेलन हेतु आवश्यक दस्तावेज का विवेचन कर सकें।
- व्यवसाय प्रारम्भ करने की आवश्यक आपैचारिकताओं का वर्णन कर सकें।

2.1 प्रस्तावना

एक कम्पनी कुछ समान उद्देश्यों के लिये निर्मित व्यक्तियों का एक संगठन है। यह पेशेबर प्रबंधकों द्वारा संचालित किया जाने वाला जटिल केन्द्रीयकृत, आर्थिक एवं प्रशासनिक ढाँचा है, जो पूँजी को व्यवस्था विनियोजकों से करता है। यह व्यवसायिक संगठन का सबसे प्रभावशाली प्रारूप है तथा इसे व्यवसायिक ऋणों के लिये सीमित व्यक्तिगत दायित्व का विशेषाधिकार प्राप्त है। एक कम्पनी का न तो शरीर होता न ही आत्मा होती है, न ही शारीरिक सीमायें होती है, इसके बाद भी कम्पनी का विधिक दृष्टि से आस्तित्व है। कम्पनी प्राकृतिक व्यक्ति की भाति एक विधिक व्यक्ति है, परन्तु इसका शारीरिक अस्तित्व नहीं है। अतः आधुनिक औद्योगिककृत समाज, संगठन मकं कम्पनी प्रारूप का परिणाम है। भारत में कम्पनियाँ का समामेलन कम्पनी अधि0 1956 के अन्तर्गत होता है।

कम्पनी में निर्माण की प्रक्रिया को निम्न चार चरणों में वर्गीकृत किया जा सकता है–

1. प्रवर्तन 2. समामेलन 3. पूंजी अभिदान 4. व्यवसाय का प्रारम्भ

2.2 प्रवर्तन

प्रवर्तन कम्पनी के निर्माण का प्रथम चरण है। इस चरण में कम्पनी निर्माण को सभी प्रारम्भिक स्तरों का समावेश किया जाता है। इसके अर्न्तगत प्रश्नों जैसे– कम्पनी

प्राइवेट कम्पनी होगी या लोक कम्पनी होगी। कम्पनी को क्या व्यवसाय करना चाहिए, उसकी पूंजी क्या हो। परिवर्तन के अर्न्तगत कम्पनी के निर्माण में सभी प्रारम्भिक चरणों जैसे– विचार, आवश्यक प्रपत्र तैयार करना, प्रारम्भिक संविदा करना, वित्त की व्यवस्था आदि का समावेश होता है।

अतः प्रवर्तन चरण का प्रारम्भ विचारों से होता है तथा यह क्रम कम्पनी के समामेलन तक चलता रहता है। प्रवर्तन में कम्पनी के निर्माण की सभी प्रारम्भिक विधियों का समावेश किया जाता है। कम्पनी के निर्माण की आवश्यक प्रारम्भिक गतिविधियों को करने वाले व्यक्ति को प्रवर्तक कहते है।

व्यवसाय को प्रारम्भ करने तथा विभिन्न साधनों जैसे– व्यवसाय के स्थान का निर्धारण, व्यवसाय के क्षेत्र में निर्णय लेना, प्लाट व मशीनरी के क्रय से सम्बन्धित निर्णयों का संयोजन प्रवर्तन चरण के अंग है। वित की व्यवस्था के प्रयास तथा प्रारम्भिक संविदा इस चरण में सम्मिलित किया जाता है। प्रवर्तकों द्वारा कम्पनी के निर्माण के लिए आवश्यक प्रपत्रों को भी तैयार किया जाता है। इन प्रपत्रों में समानता पार्षद सीमानियम पार्षद अर्न्तनियम को सम्मिलित किया जाता है। उपरोक्त प्रपत्रों को तैयार करने के पूर्व कम्पनी रजिस्ट्रार से कम्पनी के प्रस्तावित नाम का अनुमोदन किया जाता है।

कम्पनी के प्रवर्तक–

प्रवर्तक पद न तो विधिक पद है तथा न ही कम्पनी अधि0 1956 में कही भी परिभाषित किया गया है। इसके बाद भी इसका वाणिज्यिक साहित्य का काफी उपयोग किया जा सकता है तथा कुछ स्थानों पर, कम्पनी अधिनियम द्वारा प्रवर्तनों पर दायित्व अधिरोपित करने के लिये इसका प्रयोग किया गया है । इतने अधिक उपयोग के बाद भी प्रवर्तक पर भी कोई विधिक परिभाषा नहीं है।

जर्सटनबर्ग के अनुसार :– ''प्रवर्तक का कार्य व्यावसायिक औवसरों को खोजना तत्पश्चात उसमें लाभ अर्जित करने के लिए व्यवासायिक इकाई का रूप देने के लिए धन, परिसम्पत्तियाँ एवं प्रबन्धकीय योग्यता का संगठन करना है।''

न्यायाधीश काकबर्न के अनुसारः– ''ऐसा व्यक्ति जो किसी परियोजना से संबंधित कम्पनी का गठन करता है और उसे आरम्भ करता है और जो इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए आवश्यक कार्यवाही करता है।''

अतः प्रवर्तक वह व्यक्ति हैं जो कम्पनी का निर्माण करता है या उसमें सहायता करता है या उसमें सहायता करता है। प्रवर्तक एक व्यक्ति, फर्म व्यक्तियों का समूह या कम्पनी कोई भी हो सकता है। परन्तु निर्माण या प्रवर्तन से संबंधित प्रत्येक व्यक्ति प्रवर्तक नहीं होता है। एक व्यक्ति जो पेशेवर पद या क्षमता में कार्य करता है। वह प्रवर्तक नहीं होता है। अतः अधिवक्ता पर वकील, जो प्रवक्ता की ओर प्रस्तावित कम्पनी के प्रवर्तन से संबंधित आवश्यक दस्तावेज तैयार करता है, प्रवर्तक नहीं है। इसी प्रकार लेखापालक मूल्यांकनकर्ता, सर्वेयर या इंजीनियर जो पेशेवर रूप में सहायक होते हैं, प्रवर्तक नहीं माने जाते। कम्पनी अधिनियम की धारा 62(6) ऐसे व्यक्तियों जो पेशेवर क्षमता के हैं उन्हें कम्पनी निर्माण के लिए रोकता है। परन्तु यदि कोई व्यक्ति अपने पेशे के बाहर आकर कम्पनी के निर्माण में सहयोग देता है। तो उसे

प्रवर्तक माना जाता है। एक व्यक्ति जो कम्पनी को पेटेन्ट दिलाने या किसी प्रकार के अन्य कार्य में कम्पनी की सहायता करता है, वह प्रवर्तक माना जाता है। अतः कोई व्यक्ति कम्पनी का प्रवर्तक है या नहीं, यह तथ्य का प्रश्न है जो इस पर निर्भर करता है कि कम्पनी के निर्माण में उसने किस प्रकार की भूमिका निभाई है। यह ध्यातव्य है कि कम्पनी की गवर्निंग बाडी जैसे सचालक मण्डल के गठन के पश्चात् प्रवर्तक का कार्य या भूमिका समाप्त हो जाता है।

प्रवर्तक के कार्य–

प्रवर्तक वह व्यक्ति होता है जो कम्पनी के निर्माण से संबंधित सभी प्रारंभिक औपचारिकतायें पूरी करता है। वह एक निश्चित उद्देश्य के साथ कम्पनी के निर्माण का विचार करता है तथा उसे कार्यरूप में परिणित करता है। कम्पनी के समामेलन के पूर्व उसके सभी कार्य प्रवर्तकों द्वारा किया जाते है जो निम्न हैः–

1. **नियोजनः–** प्रस्तावित व्यवसाय के स्वभाव के अनुसार योजना बनाना प्रवर्तक का आधारभूत कार्य है। क्या करना है, कब करना है कैसे करना है और कहाँ करना है आदि का निर्णय प्रवर्तक द्वारा किया जाता है। वह यह निश्चित करता है कि व्यवसाय को कितनी पूँजी की आवश्यकता है तथा किन क्षेत्रों से पूँजी प्राप्त की जा सकती है।
2. **नामकरण:–** प्रवर्तक प्रस्तावित कम्पनी का नाम भी निर्धारित करते है। वह कम्पनी के उद्देश्यों तथा उसके पंजीकृत कार्यालय के स्थान का निर्धारण करता है।
3. **आवश्यक आधरभूत सुविधाओं की व्यवस्थाः–** जैसे भूमि भवन संयत्र तथा अन्य औजारों की व्यवस्था करता है। यदि कम्पनी किसी व्यक्ति या व्यक्तियों की सम्पत्ति या व्यवसाय खरीदना चाहती है तो प्रवर्तक आवश्यकतानुसार सहायता करता है।
4. **प्रपत्रों को तैयार करनाः–** कम्पनी के समामेलन हेतु कम्पनी रजिस्ट्रार के यहाँ कुछ निश्चित प्रपत्रों को जमा करना पड़ता है। इनमें पार्षद सीमानियम तथा पार्षद अन्तर्नियम मुख्य है प्रवर्तक इन प्रपत्रों को विधिक सलाहकारों की मद्द की तैयार करते है।
5. **पूँजी की व्यवस्थाः–** पूंजी की प्राप्ति के लिये प्रवर्तक होने वली कम्पनी लोक प्रवर्तक आवश्यक व्यवस्था करते है। यदि समामेलित होने वाली कम्पनी, लोक कम्पनी है तो वह जनता को अपने प्रति भूतियों के विक्रय के लिये आमंत्रित कर सकती है। प्रवर्तक का जनता से पूंजी प्राप्त करने के लिये प्रविवरण को तैयार तथा निर्गमन करते है। इसके बावजूद समामेलन के पूर्व में व्ययों को पूरा करने के लिये प्रारंभिक पूँजी की व्यवस्था करनी पड़ती है।
6. **संचालकों की सलाहः–** प्रवर्तक कम्पनी में प्रथम संचालकों की निर्धरित करते है तथा उनसे संचलाकों को उसके कार्य करने के लिये उनकी अनुमति लेते है। कभी कभी वे स्वयं कम्पनी के संचलाक बन जाते है।

7. **नियुक्तियाँ:–** प्रवर्तक कम्पनी के बैंकर, अकेक्षक, विधि परामर्शदाता तथा दलाल की नियुक्ति करते है। कम्पनी के समामेलन के लिये प्रवर्तक पूर्व समामेलन या प्रारंभिक संविदा करते है।
8. **विविध:–** प्रवर्तक आवश्यक कानूनी औपचारिकताओं को पूर्ण करने के बाद कम्पनी रजिस्ट्रार के यहाँ आवश्यक प्रपत्र के साथ निर्धारित कोष जमा करते हैं तथा समामेलन का प्रमाणपत्र प्राप्त करते हैं । वे यदि आवश्यक हो तो लाइसेन्स की भी व्यवस्था करते हैं।

प्रवर्तक की विधिक स्थिति:–

प्रवर्तक वह व्यक्ति है जो निगम के समामेलन तथा संगठन को निर्धारित करता है। वह कम्पनी में महत्वपूर्ण स्थिति में होता है तथा उसके पास कम्पनी के निर्माण से सम्बन्धित वृहद शक्तियाँ होती है। हांलाकि विधिक दृष्टि से प्रवर्तक न तो प्रस्तावित कम्पनी का एजेण्ट है तथा न ही ट्रस्टी है। वह एजेण्ट इसलियें नहीं है क्योंकि उसके स्वामी के अस्तितव नहीं है तथा ट्रस्टी इसलिये नहीं है क्योकि वहाँ ट्रस्ट का अस्तित्व नहीं है। परन्तु इसका अर्थ यह नहीं है कि उसका प्रस्तावित कम्पनी से कोई विधिक संबंध नहीं है। कम्पनी के साथ प्रवर्तक का विश्वासाश्रित संबंध होता है।

लार्ड केयर्न्स के अनुसार:– ''कम्पनी के प्रवर्तक निस्सन्देह एक विश्वासाश्रित स्थिति में होते हैं कम्पनी का निर्माण और रचना उनके हाथ में होती है तथा उन्हें इस बात की व्याख्या करने का अधिकार है कि वह (कम्पनी) कब कैसे और किस रूप में तथा किस प्रकार के निरीक्षण के अन्तर्गत, अस्तित्व में आना प्रारम्भ करेगी तथा एक व्यापारिक निगम के रूप में कार्य करना शुरू करेगी।'' एक अन्य वाद लिण्डे व विग पूल आयरन ओर कम्पनी बनाम वी. बर्ड में लिण्डले द्वारा यह पाया गया कि यद्यपि प्रवर्तक कम्पनी के समामेलन के पूर्व न तो न्यासी होता है, न ही एजेण्ट है, ऐसे मामलों के लिये ट्रस्टीशिप, एजेन्सी अधिनियम तथा पुराने नियम पर्याप्त है।

प्रवर्तको की विश्वासाश्रित स्थिति निम्न विधिक परिस्थितियों उत्पन्न करती है:–

1. प्रवर्तक कम्पनी के खर्चों पर कोई भी गुप्त लाभ नहीं बना सकता है। यदि किसी सौदे में ऐसा पाया जाता है तो वह ऐसे गुप्त लाभ को लौटाने हेतु बाध्य है।
2. प्रवर्तक अपनी सम्पत्ति को बेचकर लाभ अर्जित नहीं कर सकता है जब तक कि सभी महत्वपूर्ण तथ्यों का खुलासा न किया गया है। इसके विपरीत स्थिति में कम्पनी या तो विक्रय को अमान्य कर सकती है या संविदा को अमान्य कर सकती है तथा लाभ को वसूल सकती है। धारा 56 के अनुसार प्रवर्तक को अर्जित लाभ को प्रविवरण में दिखाना अनिवार्य है।

प्रवर्तक का परिश्रमिक –

एक प्रवर्तक को अपनी दी गयी सेवाओं में लिये परिश्रमिक प्राप्त करने का कोई अधिकार नहीं है जब तक कि इसमें लिये कोई विशिष्ट संविदा न किया गया है। क्योंकि समामेलन के पूर्व कम्पनी का पृथक अस्तित्व नहीं होता है, इसलिये वह प्रवर्तक से कोई वैध संविदा उसकी सेंवाओं के परिश्रमिक के लिए नहीं कर सकती है।

क्लिंटन वाद में एक सिडीकेट ने कम्पनी में निर्माण में कुछ खर्चें जैसे स्टाम्प शुल्क तथा अन्य व्यय किये। बाद में कम्पनी बन्द हो गयी। वाद में निर्णित हुआ कि सिन्डीकेट अपने द्वारा किये गये व्ययों की भरपायी नहीं सकता है।

कम्पनी के समामेलन के बाद कम्पनी हुआ किसी औपचारिक संविदा के अभाव में प्रवर्तक के पास अपने पारिश्रमिक तथा अन्य प्रारंभिक व्ययों के लिए कम्पनी पर वाद करने का विधिक अधिकार नहीं है तथापि प्रवर्तकों की मूल्यंवान सेवाओं के लिये निम्न प्रकार से पारितोषिक दिया जाता है :–

1. उन्हें एक मुश्त राशि या तो नकद या कम्पनी में अंश तथा ऋणपत्र के रूप में दी जाती है।
2. उन्हें कम्पनी द्वारा क्रय किये गये व्यवसाय के क्रय मूल्य पर कमीशन दिया जाता है।
3. उन्हें संचालन मण्डल में शामिल किया जाता है।
4. वे अपनी सम्पत्ति को बढ़े हुये मूल्य पर विक्रय कर सकते है।
5. जब कम्पनी के अंशों के बाजार मूल्य में वृद्धि हो रही हो तो उन्हें सममूल्य पर ऐसे अंश क्रय करने का विकल्प दिया जा सकता है।

   जहां भी प्रवर्तकों को पारिश्रमिक का भुगतान प्रविवरण जारी होने मे दो वर्ष के अन्दर दिया जाता है, तो प्रविवरण में दिखाना होगा ।

प्रवर्तकों के दायित्व :–

प्रवर्तकों का कम्पनी के निर्माण बहुत महत्वपूर्ण योगदान है, उनका कार्य जोखिम से भरा हुआ है। उन्हें कम्पनी के निर्माण के विचार से लेकर उसके समाामेलन तक बहुत से कार्य करने पड़ते है, जिसमें लिये वे उत्तरदायी होते है। अतः प्रवर्तकों पर दायित्व का क्षेत्र बहुत व्यापक है तथा कम्पनी बनने में बाद भी वे उत्तरदायी होते है।

प्रवर्तकों का कम्पनी के साथ विश्वासाश्रित संबंध होता है। इसका लार्ड केयर्न्स ने अरलेन्गर बनाम न्यू सेमब्रेवो फास्फेट कम्पनी (1878) में विवेचन किया ''कम्पनी के प्रवर्तकों की स्थिति निस्सन्देह विश्वास की होती है। उनके हाथों में ही कम्पनी का निर्माण है तथा वे ही कम्पनी का भविष्य ही तय करते है। वे इस बात का निर्णय करते है कि कम्पनी कब और कैसे बनेगी तथा वह कैसे और किसके निरीक्षण में कार्य करेगी।''

न्यायालयों ने प्रवर्तकों को विश्वसाश्रित एजेण्ट के रूप कार्यरत रहने का महत्वपूर्ण उत्तरदायित्व सौंपा है जो निम्न हैः–

1. **गुप्त लाभ के प्रकटीकरण–** प्रवर्तक का यह कर्त्वव्य है कि वह कम्पनी के निर्माण के खर्चों से लाभार्जन न करें। यदि वह कम्पनी को बिना प्रकट किये गुप्त लाभ का निर्माण करता है तो कम्पनी द्वारा पता चलने पर उसे गुप्त लाभ को लौटाने के लिए बाध्य किया जा सकता है।
2. **अपने लाभ व ब्याज के प्रकटीकरण न करने पर दायित्व–** यह प्रवर्तक का मूल्य कर्त्वव्य है कि वह कम्पनी का निर्माण सम्पत्ति का क्रय करने के लिए कर रहा है तथा वह अंशधारियों के धन से भुगतान कर रहा है तो उसे ईमानदारी

पूर्वक सम्पत्ति के मूल्य तथा स्वभाव से सम्बन्धित सभी तथ्वों का प्रकटीकरण करना चाहिए। कम्पनी को हानि की दशा में क्षतिपूर्ति प्राप्त करने का अधिकार होगा। यदि प्रवर्तक कम्पनी को बिना सूचित किये सम्पत्ति का विक्रय कर देता है तो वह विश्वास भंग का दोषी होगा। इसके अतिरिक्त बिक्रेता से यदि वह कोई बोनस या कमीशन प्राप्त करता है तो भी विश्वास भंग का दोषी होगा। संक्षेप में प्रवर्तक का विश्वास आधारित कर्तव्य होता है कि वह कम्पनी की स्थिति जिसमें लाभ तथा व्याज शामिल है, प्रकटीकरण करे।

3. **प्रविवरण में मिथ्या वचन के लिये दायित्व–** कम्पनी अधि0 की धारा62 (1) के अनुसार प्रवर्तक ऐसे प्रत्येक व्यक्ति को क्षतिपूर्ति के लिये दायी है, यदि उस व्यक्ति ने प्रवर्तक के मिथ्यावचन पर विश्वास कर अंश या ऋणपत्र क्रय किया है तथा उसे हानि हुयी है।

   धारा 63 के अनुसार प्रवर्तक, प्रविवरण में मिथ्यावचन के लिये आपराधिक रूप से दायी है। धारा 56 में वर्णित रिपोर्ट या कुछ मामलों को छिपाने के मामले में अंशधारी उसे उत्तरदायी ठहरा सकते है।
4. **विश्वास भंग के लिये दायित्वः–** धारा 543 के अनुसार यदि कम्पनी के समापन के समय यह पाया जाता है कि प्रवर्तक ने अनुचित तरीके से कम्पनी की सम्पत्ति या धन अपने पास रखा है या कर्तव्य भंग किया है तो न्यायालय, लेनदार पर समापक के आवेदन पर उसे दायी ठहरायेगा तथा उसे वह राशि या सम्पत्ति वापस करने के लिये बाध्य करेगा।
5. **प्रारंभिक संविदा के लिये दायित्व :–** प्रवर्तक ऐसे प्रारंभिक संविदाओं के लिये दायी हैं जो उसने कम्पनी के समामेलन के पूर्व किये है। यदि इन संविदाओं के कार्यान्वयन में कोई त्रुटि होती है तो प्रवर्तक उत्तरदायी होगें।
6. **प्रवर्तक का लोक परीक्षण :–** यदि न्यायालय द्वारा किसी कम्पनी के समापन का आदेश हुआ है तथा समापक ने यह रिपोर्ट दी है कि उसके विचार में कम्पनी के निर्माण व समामेलन में प्रवर्तक द्वारा कपट किया गया है तो न्यायालय धारा 478 के अनुसार प्रवर्तक के आचरण तथा लेन–देन के लोक परिक्षण का आदेश करेगा।

2.3 समामेलन

यह कम्पनी के निर्माण की द्वितीय अवस्था है। कम्पनी या निगम के निर्माण के कृत्य को समामेलन कहते है। यह व्यक्तियों के संगठित समूह को विधिक संगठन में परिवर्तित करने की प्रक्रिया है।

धारा 12(21) के अनुसार– कम्पनी के समामेलन के लिये लोक कम्पनी की दशा में 7 या अधिक व्यक्ति या निजी कम्पनी की दशा में दो या अधिक व्यक्ति किसी विधिपूर्ण उद्‌देश्य से एकत्रित होकर, समामेलन के लिये अपना नाम पार्षद सीमानियम में लिखाते है तथा अन्य औपचारिकतायें पूरी करते है तथा एक कम्पनी का निर्माण करते हैं। ऐसी कम्पनी में दायित्व या तो सीमित होता है या असीमित। सीमित कम्पनी में दायित्व अंशों या गारण्टी द्वारा सीमित होता है। प्रस्तावित कम्पनी का उद्‌देश्य विधिपूर्ण होना चाहिये। इसे कम्पनी देश के सामान्य कानून के अनुसार होना चाहिये।

इसे कम्पनी देश के सामान्य कानून के विरूद्ध नहीं होना चाहिये। कम्पनी के पंजीकरण के लिये आवेदन तथा अन्य प्रपत्र जमा करने के पूर्व कम्पनी रजिस्ट्रार से प्रास्तवित कम्पनी के नाम का अनुमोदन करा लेना चाहिये।

कम्पनी अधिनियम 1956 की धारा 33 के अनुसार कम्पनी में समामेलन के लिये निम्न प्रपत्र राज्य के कम्पनी रजिस्ट्रार के यहाँ दाखिल किया जाता है :–

1. सदस्यों द्वारा हस्ताक्षर युक्त पार्षद सीमानियम
2. पार्षद अन्तर्नियम यह ध्यातव्य है कि अंशों द्वारा सीमित लोक कम्पनी द्वारा यदि अधिनियम की अनुसूची के तालिका अ (A) को अपनाया जाता है तो उसे पार्षद अन्तर्नियम बनाने की आवश्यकता नहीं है।
3. संविदा यदि कोई हो तो, जिसमें कम्पनी ने किसी व्यक्ति को प्रबंधक या पूर्णकालिक संचालक या प्रबंध निदेशक नियुक्त किया है।
4. इस आशय की वैधानिक घोषणा, कि कम्पनी ने समामेलन से संबंधित सभी विधिक औपचारिकताओं पूर्ण कर ली गयी है, जिस पर उच्चतम न्यायालय या उच्च न्यायालय के वकील या अटार्नी जो उच्च न्यायालय उपस्थित होने के लिये अधिकृत है या कम्पनी सचिव या चार्टर्ड एकाउटेन्ट जो कम्पनी के निर्माण से संबंधित है या कम्पनी के अन्तर्नियमों में उल्लिखित कोई व्यक्ति प्रबंध संचालक, प्रबंधक या सचिव के रूप में हो, का हस्ताक्षर होना चाहिए।
5. ऐसे व्यक्तियों की सूची जिन्होंने कम्पनी की संचालक बनने की लिखित सहमति दी हो तथा उनके द्वारा योग्यता अंश (धारा 266) के अनुसार ले लिया गया हो।
6. धारा 146 (2) के अनुसार समामेलन के 30 दिन के अन्दर कम्पनी रजिस्ट्रार को कम्पनी के रजिस्टर्ड कार्यालय के स्थित होने की सूचना देनी चाहिए।

यदि कम्पनी रजिस्टार कम्पनी द्वारा समामेलन हेतु की गयी उपरोक्त औपचारिकताओं से संतुष्ट है तो वह कम्पनी का नाम रजिस्टर में लिख लेगा तथा कम्पनी को समामेलन का प्रमाणपत्र जारी करेगा। समामेलन के समय रजिस्टार यह सत्यापित करेगा कि कम्पनी सीमित या असीमित कम्पनी है।

समामेलन का प्रमाणपत्र एक निश्चयात्मक प्रमाण –

कम्पनी अधिनियम की धारा 35 के अनुसार किसी संगठन का समामेलन का प्रमाण पत्र इस बात का निश्चययात्मक प्रमाण है कि कम्पनी ने समामेलन से संबंधित अधि0 में दी गयी सभी वैधानिक औपचारिकताओं का पालन किया है तथा कम्पनी समामेलन के लिए अधिकृत है।

कम्पनी को एक समामेलन का प्रमाणपत्र मिलने के बाद उसके समामेलन की नियमितता के विषय कोई आपत्ति नहीं उठायी जा सकती है। **पील के वाद में लार्ड केयर्न्स के अनुसार** एक बार समामेलन का प्रमाणपत्र देने के बाद, पूर्व की कार्यावाहियों की नियमितता की जाँच नहीं की जाती है।

मूसा गुलाम आरिफ बनाम इब्राहिम गुलाम आरिफ के वाद में एक कम्पनी का समामेलन का प्रमाण–पत्र पार्षद सीमानियम के आधार दिया गया जिस पर 2 वयस्क व्यक्तियों के तथा अन्य अवयस्क सदस्यों के अभिभावकों के हस्ताक्षर थे 5 अवयस्कों

के अभिभावकों के हस्ताक्षर अलग से थे। इसमें कहा गया कि समामेलन का प्रमाण–पत्र को व्यर्थ घोषित किया जाये। इसमें निर्णीत हुआ कि पार्षद सीमानियम में हस्ताक्षर करने सदस्यों में कुछ के अवयस्क होने के बाद भी रजिस्टार द्वारा निर्गमित समामेलन प्रमाणपत्र वैध है।

जुबली काटन मिल्स लिमिटेड बनाम लेबिस के वाद में 6 जनवरी की रजिस्टार को आवश्यक प्रपत्र समामेलन हेतु सौपे गये दो दिन बार रजिस्ट्रार ने समामेलन का प्रमाण–पत्र जारी किया परन्तु उस पर 8 जनवरी कुछ अंश लेबिज को समामेलन के पूर्व आवंटित किये गये। क्या ऐसा आबंटन अवैध है । प्रश्न उत्पन्न हुआ जबकि समामेलन का प्रमाणपत्र इस बात का निश्चयात्मक प्रमाण है कि सभी औपचारिकतायें पूर्णकी गयी है विधिक दृष्टि से कम्पनी 6 जनवरी को निर्मित हुयी अतः आबंटन को वैध ठहराया गया

अतः प्रमाणपत्र की वैधता पर किसी आधार पर कोई प्रश्न नहीं उठाया जा सकता है परन्तु यदि कम्पनी का उद्देश्य अवैध है तो प्रमाण–पत्र उसे वैध नहीं ठहरा सकता है। समामेलन के प्रमाण–पत्र का निम्न प्रभाव पड़ता है :–

1. कम्पनी एक पृथक विधिक व्यक्ति बन जाती है ।
2. उसे अविच्छिन्न उत्तराधिकार प्राप्त हो जाता है।
3. लिमिटेड कम्पनी के सदस्यों का दायित्व सीमित होता है।

2.4 पूंजी अभिदान

एक निजी कम्पनी या लोक कम्पनी जिसकी कोई अंश पूंजी नहीं है वह समामेलन का प्रमाणपत्र प्राप्त करने के बाद व्यवसाय आरंम्भ कर सकती है। लोक कम्पनियाँ जिनके पास अंश पूंजी है को अपने व्यवसाय में प्रारंम्भ करने या ऋण लेने के पूर्व दो और चरणों में पूरा करना पड़ता है।

कम्पनी अधिनियम 1956 की धारा 149 (1) के अनुसार, जहाँ किसी कम्पनी जिसके पास अंश पूंजी है ने अपने प्रतिभूति में क्रय हेतु जनता को आमंत्रित करने के लिये प्रविवरण का निर्गमन किया है, वहाँ उसे अभिकर्त्ता अभिगोपकों, बैकर आदि की नियुक्ति तथा प्रतिभूतियों के सूचीयन हेतु स्कन्ध विपणि की व्यवस्था, प्रविवरण का निर्गमन आदि करना अनिवार्य है। इसके बाद निम्न प्रपत्र रजिस्टार के यहाँ दाखिल किये जाते हैः–

1. प्रविवरण की प्रति
2. इस आशय की वैधानिक घोषणा, जो कम्पनी के सचिव या संचालक द्वारा सत्यापित हो –
   - क. संचालकों ने योग्यता अंश ले लिया है तथा उसका नगद भुगतान कर दिया है।
   - ख. आबंटित अंशों की राशि ,न्यूनतम अभिदान से कम नहीं है।
   - ग. अंश या ऋण पत्रों से सम्बंधित कोई राशि किसी भी कारण से, कम्पनी पर वापस करने को दायित्व नहीं है।

3. ऐसी कम्पनी जिसके पास अंश पूंजी है, ने अपने अंशों के जनता द्वारा क्रय हेतु प्रविवरण का निर्गमन नहीं किया है, तब कम्पनी अधिनियम की धारा 149 (2) के अनुसार तभी व्यवसाय का प्रारंभ कर सकती है जबकि :–
   अ. उसने स्थानापन्न प्रविवरण का निर्गमन किया है।
   ब. कम्पनी के प्रत्येक संचालकों द्वारा अपने लिये क्रय किये गये अंशों पर अन्य अंशधारियों में समान आवेदन तथा आबंटन राशि का भुगतान करना ।
   स. कम्पनी के संचालक या सचिव द्वारा आशय की वैधानिक घोषणा करना कि उपरोक्त सभी शर्तों का अनुपालन कर लिया गया है।

कम्पनी अंशों का आबंटन तभी कर सकती है, जबकि उसे प्रविवरण में उल्लिखित न्यूनतम अभिदान की राशि प्राप्त हो जाय। यदि कम्पनी प्रविवरण निर्गमन के 120 दिन के भीतर न्यूनतम अभिदान को प्राप्त करने में असफल रहती है तो आवेदन पर प्राप्त राशि लौटाना होगा (धारा 69(5)।

2.5 व्यवसाय का प्रारंभ

यह कम्पनी के निर्माण की अन्तिम अवस्था है। एक निजी कम्पनी अपने व्यवसाय का प्रारंभ, समामेलन के तुरन्त बाद कर सकती है जब लोक कम्पनी की दशा में व्यवसाय प्रारंभ के लिये धारा 149 के प्रावधानों के अनुसार व्यवसाय प्रारंभ करने का प्रमाणपत्र प्राप्त करना होगा । जब कम्पनी ने अपने अंशों के क्रय हेतु जनता को आमंत्रित करने के लिये प्रविवरण का निर्गमन किया है तब यह अनिवार्य हो जाता है । रजिस्टार द्वारा व्यवसाय प्रारंभ करने का प्रमाणपत्र तभी दिया जायेगा, जब कम्पनी के संचालक या सचिव इस आशय की वैधानिक घोषणा करेगे कि कम्पनी द्वारा निम्न औपचारिकताओं का अनुपालन कर लिया गया है। ऐसी घोषणा को रजिस्टार के यहाँ दाखिल किया जायेगा

1. पूर्णतः नकद भुगतान योग्य अंशों का आबंटन न्यूनतम अभिदान की राशि तक दिया जा चुका हो।
2. कम्पनी के प्रत्येक संचालक द्वारा खरीदे गये अंशों पर अन्य अंशधारियों के समान आवेदन तथा आबंटन राशि का भुगतान किया जा चुका हो।
3. यदि प्रविवरण में उल्लिखित है कि अंशों के क्रय विक्रय हेतु स्कन्ध विपणि में आवेदन किया जायेगा ,तो उसी रूप में आवेदन दे दिया जायेगा। यदि ऐसी अनुमति न प्राप्त हुई हो तो कम्पनी यह घोषणा करेगी कि आज्ञा प्राप्त हेतु आवेदन पत्र नहीं देने अथवा अस्वीकृत के कारण आवेदको को समस्त राशि वापस कर ली गयी है तथा अब कोई धन राशि लौटाना शेष नहीं है। यदि कोई कम्पनी व्यवसाय प्रारंभ करने का प्रमाण पत्र प्राप्त किये बिना , व्यवसाय प्रारंभ कर देती है तो ऐसे उल्लघंन के लिये दायी प्रत्येक व्यक्ति 500 रू0 प्रति दिन के जुर्माना से दण्डनीय होगा जब तक ऐसा उल्लघंन जारी रहता है।

जब रजिस्टार उपरोक्त शर्तों के अनुपालन से संतुष्ट हो जाता है तो वह व्यवसाय प्रारंभ करने का प्रमाण पत्र जारी कर देता है। यदि कोई कम्पनी समामेलन

के एक वर्ष के अन्दर व्यवसाय नहीं प्रारंभ करती है तो न्यायालय ऐसी कम्पनी के समापन का आदेश दे देगा।

2.6 सारांश

कम्पनी का निर्माण एक लम्बी प्रक्रिया है। निर्माण के निम्न चरण (1) प्रवर्तन (2) समामेलन (3) पूँजी अभिदान (4) व्यवसाय का प्रारंभ। प्रवर्तन चरण विचारोत्पत्ति से प्रारंभ होता है तथा यह समामेलन तक चलता रहता है। कम्पनी के निर्माण की प्रारंभिक औपचारिकता को पूर्ण निर्माण प्रक्रिया में सम्मिलित है। एक आवेदन संबंधित कम्पनी रजिस्टार को किया जाता है। इस आवेदन के साथ आवश्यक प्रपत्र पंजीकरण शुल्क सहित दाखिल किया जाता है। एक निजी कम्पनी या लोक कम्पनी जिसके पास अंश पूँजी नहीं हैं, समामेलन के तुरन्त बाद व्यवसाय प्रारंभ कर सकती है। लोक कम्पनी जिसके पास अंश पूंजी है, को अन्य दो चरणों पूँजी अभिदान तथा व्यवसाय का प्रारंभ को पूरा करने बार ही व्यवसाय प्रारंभ कर सकती है।

2.7 शब्दावली

प्रवर्तकः– एक व्यक्ति जो व्यवसाय प्रारंभ करने का विचार लाता है, कम्पनी के निर्माण हेतु योजना बनाता है तथ कार्यरूप में परिणित करता है।

समामेलनः– यह कम्पनी अधिनियम के अन्तर्गत पंजीकरण प्राप्त करने की प्रक्रिया है।

प्रवर्तनः– विचारों की उत्पत्ति तथा कार्यरूप में परिणित करने का चरण ।

प्रारंभिक सौदाः– समामेलन के पूर्व कम्पनी के लाभ के लिये दो पक्षों के मध्य संविदा होना।

2.8 बोध प्रश्न

क. खाली स्थान भरोः–

1. विचारों का आगमन तथा उसे कार्यरूप में परिणित करना................................ चरण से संबंधित है।
2. ....के प्रमाणपत्र की तिथि को कम्पनी के जन्म की तिथि माना जाता है।
3. प्रवर्तक तथा कम्पनी के मध्य............................. संबंध होता है।
4. ....कम्पनियों के लिये समामेलन का प्रमाणपत्र आवश्यक है।

ख. सही/गलत

1. एक लोक कम्पनी समामेलन का प्रमाण पत्र प्राप्त होने के बाद व्यवसाय आरंभ कर सकती है।
2. एक निजी कम्पनी को रजिस्टार के यहाँ स्थानापन्न प्रविवरण जमा करना होता है।
3. एक निजी कम्पनी को व्यवसाय प्रारंभ करने का प्रमाण पत्र प्राप्त कना आवश्यक नहीं है।

2.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

क.

1. प्रवर्तन 2. समामेलन 3. विश्वासाश्रित 4. सभी

ख.

1. गलत 2. गलत 3. सही 4. गलत

2.10 स्वपरख प्रश्न

1. प्रवर्तक कौन है ? उनके दायित्व की विवेचना कीजिये।
2. एक प्रवर्तक का कम्पनी से विश्वासाश्रित संबंध होता है। वर्णन कीजिये।
3. कम्पनी के निर्माण की प्रक्रिया का वर्णन कीजिये।
4. कम्पनी का निर्माण कैसे होता है इस में रजिस्टार के पास कौन–कौन से प्रपत्र दाखिल किये जाते है?

2.11 सन्दर्भ पुस्तकें

1. पी0पी0 गोगना, मर्केटिंइस लॉ, एस0चन्द एण्ड कं0 नई दिल्ली।
2. एन0डी0 कपूर, कम्पनी लॉ, सुल्तान चन्द्र एण्ड कम्पनी नई दिल्ली।
3. एस0सी0 अग्रवाल, कम्पनी लॉ, धनपत राय प्रकाशन नई दिल्ली।
4. के0 आर0 बाल चन्द्र मैनेजमेन्ट कास्ट।
5. एस0 के0 अग्रवाल, व्यवसायिक विधि गलगोटिया पब्लिशिग कम्पनी नई दिल्ली।
6. एस0एस0 गुलशन व जी0के0 कपूर, विजिनेस लॉ व कम्पनी लॉ, न्यू एज इण्टरनेशनल पब्लिशर्स, नई दिल्ली।
7. एम0सी0 कुच्छल व दीपा प्रकाश, विजिनेस लेजिस्लेशन कास्ट मैंनेजमेन्ट, विकास पब्लिशिग हाउस प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली।

इकाई 03 पार्षद सीमानियम

इकाई की रूपरेखा

3.1 प्रस्तावना
3.2 पार्षद सीमानियम का अर्थ
3.3 पार्षद सीमानियम के प्रारूप
3.4 पार्षद सीमानियम का मुद्रण एवं हस्ताक्षर
3.5 पार्षद सीमानियम की विषय सामग्री
3.6 पार्षद सीमानियम में परिवर्तन
3.7 अधिकारातीत का सिद्धान्त
3.8 सारांश
3.9 शब्दावली
3.10 बोध प्रश्न
3.11 बोध प्रश्नों के उत्तर
3.12 स्वपरख प्रश्न
3.13 सन्दर्भ पुस्तकें

उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् आप इस योग्य हो सकेंगे किः–

- पार्षद सीमानियम की परिभाषा तथा उसके विभिन्न वाक्यों का वर्णन कर सकें।
- पार्षद सीमानियम में परिवर्तन के प्रक्रिया का वर्णन कर सकें।

3.1 प्रस्तावना

पार्षद सीमानियम कम्पनी का प्रधान प्रपत्र है। यह ऐसा प्रपत्र है, जो प्रस्तावित कम्पनी के लिये बहुत महत्वपूर्ण होता है। कोई भी कम्पनी बिना पार्षद सीमानियम के पंजीकृत नहीं हो सकती है। इसलिए इसे कई बार जीवनदायी प्रपत्र कहा जाता है

3.2 पार्षद सीमानियम का अर्थ

कम्पनी के प्रपत्रों में पार्षद सीमानियम बहुत महत्वपूर्ण दस्तावेज है। यह एक महत्वपूर्ण प्रपत्र है जो कम्पनी के उद्देश्य को पारिभाषित करता है तथा उन आधारभूत शर्तों को बताता है जिन पर कम्पनी को निर्माण की अनुमति हुयी है। यह कम्पनी का चार्टर है। यह बाहय जगत के साथ कम्पनी के संबंध को नियंत्रित करती है, तथा कम्पनी के कार्यक्षेत्र को परिभाषित करता है। इसका उद्देश्य अंशधारियों, लेनदारों तथा अन्य पक्ष जो कम्पनी के साथ व्यवहार करते है, को कम्पनी की गतिविधियों की वास्तविक जानकारी देना है। यह इन पक्षों को यह जानकारी देता है कि उनके द्वारा विनियोजित धन कम्पनी कहाँ उपयोग कर रही है तथा उसका स्वभाव एवं रिस्क(क्षति) की सीमा क्या है।

कम्पनी अधिनियम की धारा(28) के अनुसार, सीमानियम का अर्थ संस्था के मूल रूप से बने हुए अथवा किसी पूर्व अधिनियम या कम्पनी अधिनियम, 1956 के अन्तर्गत संशोधित सीमानियम से है। परन्तु यह परिभाषा अपने आप में पूर्ण नहीं है।

ऐशवरी रेलवे कैटेज कं0 बनाम रिचे में केयर्न्स के अनुसार,– सीमानियम कम्पनी का चार्टर होता है तथा वह कम्पनी के अधिकार क्षेत्र की सीमाओं को परिभाषित करता है।''

पार्षद सीमानियम के दो प्रमुख कार्य है। प्रथम, कम्पनी का समामेलन क्यों हुआ है, परिभाषित करता है, दूसरे यह कम्पनी की गतिविधियों की सीमारेखा है, जिसके बाहर कम्पनी कार्य नहीं कर सकती है।

3.3 पार्षद सीमानियम के प्रारूप

कम्पनी अधिनियम 1956 की धारा 14 के अनुसार अनुसूची प्रथम में पार्षद सीमानियम चार प्रारूप दिये गये है जो निम्न है :–

तालिका 'B' अंशों द्वारा सीमित कम्पनी

तालिका 'C' गारण्टी द्वारा सीमित जिसकी अंश पूंजी नहीं है।

तालिका 'D' गारण्टी द्वारा सीमित कम्पनी जिसकी अंश पूँजी है।

तालिका 'E' असीमित दायित्व वाली कम्पनी। प्रत्येक कम्पनी को उपरोक्त में से कोई एक या अन्य कोई प्रारूप उसकी परिस्थितियों के अनुसार अपनाना पड़ता है।

3.4 पार्षद सीमानियम का मुद्रण एवं हस्ताक्षर

कम्पनी के पार्षद सीमानियम को (क) मुद्रित होना (ख) पैराग्राफ/अनुच्छेदों में विभाजित तथा क्रमबद्ध संख्या होना (ग) लोक कम्पनी की दशा में 7 या अधिक तथा निजी कम्पनी की दशा में 2 या अधिक अभिदाताओं द्वारा हस्ताक्षरित तथा सत्यापित होना चाहिये। इसके साथ ही प्रत्येक अभिदाता का नाम, पता विवरण व पेशा लिखा जाना चाहिये। प्रत्येक हस्ताक्षर कम से कम एक साक्षी द्वारा प्रमाणित होना चाहिये। साक्षी का पता विवरण तथा पेशा भी लिखा जाना चाहिये। प्रत्येक सदस्य द्वारा न्यूनतम एक अंश धारित करना चाहिये तथा उसमें नाम के सामने धारित अंशों की संख्या लिखी होनी चाहिये।

3.5 पार्षद सीमानियम की विषय सामग्री

अधिनियम की धारा 13 के अनुसार पार्षद सीमानियम में निम्न वाक्य होने चाहिये :–

1. नाम वाक्य :

कम्पनी के प्रवर्तक कम्पनी का कोई भी उपयुक्त नाम रखने को स्वतंत्र है बशर्ते :–

1. यदि कम्पनी अंशों या गारण्टी द्वारा सीमित है, जब तक ऐसी कम्पनी का पंजीकरण धारा 25 के अन्तर्गत गैर लाभ वाली संस्था के रूप में न हुआ हो। कम्पनी के नाम का अन्तिम शब्द 'लिमिटेड' होना चाहिये,
2. केन्द्र सरकार की राय में चुना गया नाम अवाछनीय न हो (20(1) धारा)

नाम में निर्धारण हेतु नियम : कम्पनी मामलों के मंत्रालय द्वारा द्वारा जारी स्पष्टीकरण के अनुसार कोई भी 'नाम' अवाछनीय माना जायेगा तथा कम्पनी का पंजीकरण नहीं होगा यदि ऐसा नाम :–

1. यदि नाम पहले से विद्यमान पंजीकृत किसी कम्पनी के नाम से मिलता जुलता है। (धारा 20(2)
2. यदि ऐसा नाम, किसी समापन होने वाली कम्पनी से मिलता है।
3. यदि प्रस्तावित नाम, किसी विद्यमान कम्पनी से मात्र इस कारण अलग है कि उसमें कोई शब्द जोड़ा या घटाया गया है। जैसे माइर्न, न्यू आदि।
4. यदि प्रस्ताविक नाम, किसी महत्वपूर्ण कम्पनी के उपनाम से मिलता है जैसे टिस्को, मेल आदि।
5. यदि प्रस्तावित नाम, चिन्ह एवं नाम दुरूपयोग, अधिनियम,1950 के प्रावधानों का उल्लघंन करता है। जैसे सम्राट महारानी, क्राउन स्टेट, यू. एन. ओ. आदि है कि उसमें सरकार की भागीदारी है जैसे प्रेसीडेन्ट यूनियन सेन्ट्रल आदि
6. यदि ऐसे नाम में सहकारी शब्द जुड़ा है।
7. यदि प्रस्तावित नाम किसी संगठन या राष्ट्रीय छवि के व्यक्ति के मिलता हो।
8. यदि प्रस्तावित नाम के बैकिंग विनियोग बीमा तथा ट्रस्ट आदि का उपयोग किया गया है जबकि कम्पनी का उद्देश्य अलग है।
9. प्रस्तावित नाम, किसी रजिस्टर्ड ट्रेडमार्क से मिलता है।

2. रजिस्टर्ड कार्यालय या स्थान वाक्य

प्रत्येक कम्पनी को उस राज्य का नाम, जिसमें कम्पनी का रजिस्टर्ड कार्यालय स्थित है, अपने पार्षद सीमानियम में अवश्य लिखना चाहिये। प्रत्येक कम्पनी को उस दिन से, जिस दिन से कम्पनी व्यापार या व्यवसाय प्रारंभ करती है अथवा समामेलन के 30 दिन के अन्दर, इनमें से जो भी तिथि पहले हो, उस स्थान को निश्चित कर लेना चाहिये जहाँ पर कम्पनी रजिस्टर्ड कार्यालय होगा जिससे उसी पते पर समस्त पत्र व्यवहार किया जा सके तथा इसकी सूचना रजिस्टार को भेजनी चाहिये। ऐसा स्थान किसी मामले में न्यायालय में वाद संस्थित करने में सहायक होता है। इसी स्थान पर कम्पनी के वैधानिक पुस्तकों को रखा जाता है। कम्पनी के पंजीकृत कार्यालय का स्थान तथा उसमें प्रत्येक परिवर्तन की सूचना रजिस्टार को समामेलन या स्थान परिवर्तन के 30 दिन के अन्दर देनी चाहिए। यदि इसके अनुपालन का उल्लघंन होता है तो कम्पनी तथा उसका प्रत्येक अधिकारी जो इसके लिये दायी है, धारा 146 (4) के अन्तर्गत दण्ड का भागी होगा।

उद्देश्य वाक्य :–

यह पार्षद सीमानियम का महत्वपूर्ण वाक्य है क्योंकि यह केवल कम्पनी के निर्माण के उद्देश्य या उद्देश्यों को ही नहीं बताता है बल्कि कम्पनी द्वारा उन उद्देश्य या उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिये, प्रयोग की जाने वाली शक्ति कि सीमा का भी निर्धारण करता है। उद्देश्यों को पार्षद सीमानियम में दिखाया जाना मात्र विधिक तकनीक नहीं है बल्कि यह व्यवहारिक रूप से बहुत महत्वपूर्ण तथा आवश्यक

है। वह व्यक्ति जो अंश क्रय कर रहा है उसे यह जानना आवश्यक है कि कम्पनी में किन उद्देश्यों में उसका धन खर्च हो रहा है।

कम्पनियाँ, जो कम्पनी (संशोधन) अधिनियम 1965 के लागू होने के पूर्व से विद्यमान है की दशा में उद्देश्य वाक्य में कम्पनी के उद्देश्यों का साधारण रूप में उल्लेख होना चाहिये जबकि संशोधन के बाद पंजीकृत कम्पनियों में उद्देश्य वाक्य पृथक रूप से उल्लिखित होना चाहिये।

1. **मुख्य उद्देश्यः–** इस उपवाक्य में कम्पनी के समामेलन के मुख्य उद्देश्य तथा उस मुख्य उद्देश्य को पूर्ण करने में सहायक उद्देश्यों का उल्लेख होता है।
2. **अन्य उद्देश्य :–** इस उपवाक्य में ऐसे अन्य उद्देश्य आते है जो उपरोक्त उपवाक्य में सम्मिलित नहीं है।

एक गैर व्यापारिक कम्पनी की दशा में जिसका उद्देश्य एक ही राज्य तक सीमित नहीं है, को कम्पनी के उद्देश्य वाक्य में विशेष रूप सें ऐसे राज्यों का उल्लेख होना चाहिये जिसकी सीमा तक उद्देश्य विस्तारित है। (धारा 13)
कम्पनी के उद्देश्य को बनाते समय निम्न तथ्यों को ध्यान में रखना चाहिये।

(i) कम्पनी का उद्देश्य विधि पूर्ण होना चाहिये।
(ii) कम्पनी के उद्देश्य,कम्पनी अधिनिमय के प्रावधानों का उल्लंघन न करते हो।
(iii) कम्पनी के उद्देश्य लोक नीति के विरूद्ध न हो। जैसे शत्रु राष्ट्र की कम्पनी से व्यापार
(iv) उद्देश्य स्पष्ट तथा निशचित हो।
(v) कम्पनी के उद्देश्यों की व्याख्या भी होनी चाहिये।

यदि कम्पनी के उद्देश्यों को वृहद रूप से उल्लेख किया जाता है तो इससे कम्पनी के साथ व्यवसायिक व्यवहार करने वाले की सुरक्षा बढ़ती है।

4. **दायित्व वाक्यः–** प्रत्येक अंश या गारण्टी द्वारा सीमित कम्पनी की दशा में पार्षद सीमानियम के दायित्व वाक्य में यह उल्लेख होना चाहिये कि सदस्यों का दायित्व सीमित है। इसका आशय है कि अंशधारी को उसके द्वारा धारित अंशों की अदत्त राशि के भाग से अधिक भुगतान हेतु बाध्य नहीं किया जा सकता है। यदि उसने एक बार धारित अंश के नाम मात्र मूल्य का पूर्ण भुगतान कर दिया है तो वह भविष्य में दायी नहीं होगा।

गारण्टी द्वारा सीमित कम्पनी की दशा में पार्षद सीमानियम में उल्लेख होना चाहिये। प्रत्येक सदस्य, कम्पनी के समापन पर, जबकि वह सदस्य हो या सदस्यता समाप्ति के एक वर्ष तक कम्पनी के ऋणों तथा दायित्वों के साथ समापन की लागत एवं व्ययों तथा अंशदायी के अधिकार के समायोजन हेतु, उसके द्वारा ली गयी गारण्टी को निश्चित राशि से अधिक नहीं होगी धारा 13(2 व 3)

पार्षद सीमानियम में ऐसा कोई परिवर्तन जिसमें सदस्य पर अधिक अंशों लेने के लिये बाध्य किया जाता है या उसके दायित्व वृद्धि होती है, व्यर्थ होगा (धारा 38)

असीमित दायित्व वाली कम्पनी के दशा पार्षद सीमानियम में इस वाक्य के आवश्यकता नहीं है। वास्तव में, पार्षद सीमानियम में इस वाक्य की अनुपस्थिति का आशय है कि उसके सदस्यों का दायित्व असीमित है।

यदि कोई कम्पनी 6 माह से अधिक समय तक व्यवसाय जारी रखती है जबकि उसके सदस्यों की संख्या लोक कम्पनी की दशा में तथा निजी कम्पनी की दशा में 2 से कम हो गयी हो तो ऐसे तथ्य का जानकार प्रत्येक सदस्य, 6 माह बीतने पर कम्पनी के प्रत्येक ऋण के लिये पायी होगा।(धारा 45)

5. पूँजी वाक्य :–

प्रत्येक अंशपूँजी वाली कम्पनी (असीमित दायित्व वाली कम्पनी को छोड़कर) के पार्षद सीमा नियम में कम्पनी की कुल अंशपूंजी की राशि तथा उसका निश्चित मूल्य के अंशों में विभाजन का विवरण होना चाहिये (धारा 13(4))

जैसे कम्पनी के अंश 10000 रू0 है जो 10 रू0 प्रत्येक अंश के 1000 अंशों में विभाजित है। यदि कम्पनी में समता तथा पूर्वाधिकार अंश दोनों है तो पूंजी के विभाजन को इन दो शीर्षकों में दिखाना होगा । असीमित दायित्व वाली कम्पनी की दशा में, पूंजी संबंधी जानकारी पार्षद अन्तर्नियम में दी जायेगी। पूंजी जिससे कम्पनी पंजीकृत है, अधिकृत या नाममात्र की पूंजी कहलाती है। नाममात्र की पूंजी जो विभिन्न अंशों में विभाजित होती है तथा उसके मूल्य इस वाक्य में उल्लिखित होते है। कम्पनी की अधिकृत या नाममात्र की पूंजी की आवश्यकता कम्पनी के मुख्य उद्देश्य को पूरा करने में पड़ती है। गारण्टी द्वारा सीमित कम्पनी की दशा प्रत्येक सदस्य द्वारा समापन के समय दी जाने निश्चित गारण्टी राशि का उल्लेख इस वाक्य में होना चाहिये। सीमानियम में उल्लिखित किसी सदस्य के पास एक अंश से अधिक अंश नहीं होना चाहिये। सीमानियम में प्रत्येक सदस्य के नाम के सामने उसके द्वारा घटित अंशों का विवरण होना चाहिये।

6. संघ या अभिदान वाक्य :–

इस वाक्य में अभिदाता यह घोषणा करते है कि वे कम्पनी बनाने के इच्छुक हैं तथा उनके नामों के सामने उल्लिखित अंशों को लेने पर सहमति है। कोई भी सदस्य एक अंश से कम अंश नहीं लेगा। सीमानियम पर अभिदाताओं की न्यूनतम संख्या, लोक कम्पनी की दशा में 7 तथा निजी कम्पनी की दशा में 2 होनी चाहिये। प्रत्येक हस्ताक्षर कर्त्ता का हस्ताक्षर कम से कम एक साक्षी द्वारा सत्यापित होना चाहिये। जो हस्ताक्षर कर्त्ताओं से भिन्न व्यक्ति हो । प्रत्येक हस्ताक्षर कर्त्ता उसके साक्षी के नाम, पता, विवरण तथा पेशा आदि कोई हो का उल्लेख होना चाहिये।

इसमें निम्नलिखित बातें लिखी होती हैः–''हम विभिन्न व्यक्ति जिनके नाम व पते निम्न है, इस बात के इच्छुक है कि हमारा निर्माण पार्षद सीमानियम के अन्तर्गत एक कम्पनी के रूप में हो जाये और हम अपने नाम के आगे लिखे हुये अंशों की संख्या को पूंजी में से लेना स्वीकार करते हैं।''

हस्ताक्षरकर्त्ता वास्तव में, कम्पनी के प्रथम निदेशक होते है। गारण्टी द्वारा सीमित या असीमित दायित्व वाली कम्पनी की दशा में तथा जिसकी कोई अंश पूँजी नहीं है, प्रत्येक हस्ताक्षरकर्त्ता द्वारा कम से कम एक अंश लेने का नियम लागू नहीं होता है।

समामेलन के बाद पार्षद सीमानियम का हस्ताक्षरकर्त्ता, किसी भी आधार पर धनराशि वापस नहीं ले सकता है।

3.6 पार्षद सीमानियम में परिवर्तन

पार्षद अन्तर्नियम परिवर्तन हेतु विस्तृत औपचारिकताओं तथा निर्धारित प्रक्रिया का अनुपालन करना पड़ता है। कम्पनी की कार्यप्रणाली को आसान तथा स्वच्छ बनाने की सीमा तक परिवर्तन की अनुमति है। परिवर्तनों में कम्पनी के सदस्यों या लेनदारों के प्रति भेदभाव रहित होना चाहिये तथा इसके द्वारा सदस्यों तथा लेनदारों के दायित्व में वृद्धि नहीं होनी चाहिये।

1. **नाम वाक्य में परिवर्तन** :– नाम वाक्य में परिवर्तन निम्न प्रकार होता है :–

(1) एक कम्पनी अपने नाम में परिवर्तन विशेष प्रस्ताव तथा केन्द्र सरकार के लिखित अनुमोदन द्वारा कर सकती है। कम्पनी के नाम में शब्द जैसे प्राइवेट जोड़ते या हटाते ,लोक कम्पनी को निजी कम्पनी में परिवर्तन या निजी कम्पनी का लोक कम्पनी में परिवर्तन होने पर केन्द्र सरकार के अनुमोदन की आवश्यकता नहीं है।(धारा 21)

(2) यदि भूत या अन्य किसी कारण से निजी कम्पनी का पंजीकरण उस नाम से हो गया है जो एक विद्यमान कम्पनी का है या उससे मिलता जुलता है। तो कम्पनी उसे साधारण प्रस्ताव पारित तथा केन्द्र सरकार पूर्व लिखित अनुमोदन लेकर बदल सकती है। (धारा 22(1)(अ) ऐसे मामलों में केन्द्र सरकार भी प्रथम समामेलन या परिवर्तित नाम के समामेलन के 12 माह के अन्दर, कम्पनी को नाम बदलने का निर्देश दे सकती है।(धारा 22)

प्रस्ताव पारित होने के 30 दिन के अन्दर उसकी प्रति रजिस्टार के पास भेजनी चाहिये। केन्द्र सरकार के अनुमोदन आदेश के 3 माह के अन्दर आदेश की रजिस्टार के यहाँ दाखिल करना चाहिए। कम्पनी रजिस्टार अपने रजिस्टार में पुराना नाम काटकर नया नाम प्रमाण पत्र लिख लेगा तथा नये नाम का समामेलन नया प्रमाणपत्र जारी करेगा।(धारा 23)

कम्पनी के नाम में परिवर्तन, उसके अधिकार या दायित्व में परिवर्तन नहीं करेगा तथा किसी वैधानिक कार्यविधि में प्रभाव नहीं डालेगा। (धारा 23)

रजिस्टर कार्यालय के स्थान वाक्य में परिवर्तन :–

कम्पनी के पंजीकृत कार्यालय के स्थान में परिवर्तन निम्न प्रकार किया जाता है:–

(1) एक ही शहर में रजिस्टर्ड कार्यालय का एक स्थान से दूसरे स्थान पर परिवर्तनः– ऐसी दशा में केवल निदेशक मण्डल की सभा का प्रस्ताव पर्याप्त होगा। ऐसे परिवर्तन की सूचना रजिस्टार को परिवर्तन के 30 दिन के अन्दर देनी चाहिये जिससे वह रिकार्ड कर सके।

(2) एक ही राज्य में, रजिस्टर्ड कार्यालय का एक शहर से दूसरे शहर में परिवर्तन :– ऐसी दशा में कम्पनी की अंशधारियों की साधारण सभा में विशेष प्रस्ताव पारित करना होगा। इसके साथ क्षेत्रीय निदेशक की स्वीकृति भी लेना होगा।तथा रजिस्टार के ऐसे परिवर्तन की सूचना 30 दिन के अन्दर देनी होगी।

(3) एक राज्य से दूसरे राज्य में रजिस्टर्ड कार्यालय का परिवर्तन :– ऐसी दशा में कम्पनी की सीमानियम के प्रावधानों में परिवर्तन करना होगा तथा ऐसा परिवर्तन अधिनियम की धारा 17(1) में दिये विशेष उद्देश्यों के लिये ही किया जा सकता है। इसके लिये निम्न कदम उठाये जाते है :–

प्रथम, एक विशेष प्रस्ताव पारित कर उसके प्रति रजिस्टार के यहाँ 30 दिन के अन्दर दाखिल करना चाहिये।

दूसरे कम्पनी विधान मण्डल की लिखित अनुमति प्राप्त की जाती है। कम्पनी विधान प्रमण्डल ऐसे परिवर्तन की अनुमति देने के पूर्व अपने को संतुष्ट करेगा कि उन लेनदारों तथा अन्य व्यक्तियों को, जिनके हित इससे प्रमाणित हो रहे है, को पर्याप्त सूचना दी गयी है तथा संदर्भ में उनकी अनुमति ली गयी है। इसके साथ साथ जो लेनदार इसमें विरोध में है उनको पूर्ण भुगतान कर दिया है। इसके कम्पनी विधान मण्डल प्रस्तावित परिवर्तन की नोटिस रजिस्टार को देगा जिससे वह परिवर्तन से संबंधित सुझाव या विरोध दर्ज करा सके। इसके पश्चात कम्पनी विधान प्रमण्डल पूर्णतः संतुष्ट होने अनुमोदन (sanction) करेगा।

तृतीय, कम्पनी विधान प्रमण्डल के अनुमति आदेश की सत्यापित प्रति के साथ परिवर्तित पार्षद सीमानियम की प्रति दोनों राज्यों में रजिस्टार को, आदेश के 3 माह के अन्दर दाखिल करना होगा।

चतुर्थ, दोनों राज्यों के रजिस्टार से स्थानान्तरण का पंजीकरण प्रमाणपत्र प्राप्त किया जाता है तथा अन्त में, रजिस्टर्ड कार्यालय को अन्य राज्य के नये स्थान पर स्थानान्तरित होने के 30 दिन के अन्दर रजिस्टार को नये पते की जानकारी देनी होगी।

उद्देश्य वाक्य में परिवर्तन :– कम्पनी अधिनियम की धारा 17(1) के अनुसार उद्देश्य वाक्य तथा स्थान वाक्य (एक राज्य से दूसरे राज्य) में परिवर्तन तभी किया जायेगा जबकि इसके कम्पनी निम्न प्रकार प्रभावित होती है:–

(1) उसमें व्यवसाय के अधिक मितव्यायितापूर्ण या प्रभावपूर्ण संचालन हेतु

(2) नये या सुधरे माध्यमों से मुख्य उद्देश्य प्राप्त करना।

(3) कम्पनी के संचालन के स्थानीय क्षेत्र में वृद्धि या परिवर्तन।

(4) यदि यह परिवर्तन किसी ऐसे व्यवसाय को चलाने में सहायक हो जो विद्यमान परिस्थितियों में लाभ तथा अथवा सुविधा के दृष्टिकोण से कम्पनी के व्यवसाय में सम्मिलित किया जा सकता हो।

(5) ऐसा परिवर्तन कम्पनी के कुछ उद्देश्यों को प्रतिबंधित करने के लिये अथवा परित्याग करने हेतु या

(6) ऐसा परिवर्तन कम्पनी के व्यवसाय का समस्त या कोई भाग बेचने या अलग करने के लिये आवश्यक हो या

(7) ऐसा परिवर्तन किसी अन्य कम्पनी से एकीकरण करने के लिये आवश्यक है।

धारा 17 कम्पनी के अंशधारियों की सभा में विशेष प्रस्ताव पारित कर उसके उद्देश्यों में परिवर्तन करने की शक्ति देती है। (संशोधन) अधिनियम 1996 के बाद से कम्पनी विधान प्रमण्डल के अनुमोदन की आवश्यकता नहीं है।

विशेष प्रस्ताव की मुद्रित या टाइपमुद्रित प्रति कम्पनी रजिस्टार के पास 30 दिन होने में भेजना चाहिये।

कम्पनी रजिस्ट्रार इन प्रपत्रों को रजिस्ट्रार भरने के एक माह में अन्य प्रमाणपत्र जारी करेगा जो इस बात का प्रमाण है की सभी आवश्यक औपचारिकतायें पूर्ण कर ली गयी है। (धारा 18) यदि आवश्यक प्रपत्र रजिस्ट्रार के यहाँ निर्धारित समय के अन्दर दाखिल नहीं किये जाते है तो ऐसा परिवर्तन उपरोक्त अवधि बीतने पर व्यर्थ हो जायेगा।(19)

4. **दायित्व वाक्य में परिवर्तन :–** साधारणतः लिये दायित्व वाक्य में परिवर्तन नहीं किया जा सकता है। धारा 38 के अनुसार सदस्यों के दायित्व में, बिना उनकी सहमति के वृद्धि नही की जा सकती है।

एक कम्पनी जिसमें अन्तर्नियम ऐसे परिवर्तन को अधिकृत करते है अपने संचालकों या प्रबंधक के दायित्व को, विशेष प्रस्ताव पारित कर तथा सीमानियम में परिवर्तन द्वारा असीमित दायित्व में परिवर्तित कर सकते है। यह नियम मात्र भावी नियुक्तियों के लिये है। ऐसा परिवर्तन विद्यमान संचालकों या प्रबंधक पर लागू नहीं होगा, जब तक कि उन्होंने लिखित सहमति न दी हो। (धारा 323)

एक असीमित दायित्व वाली कम्पनी, कम्पनी विधान के अन्तर्गत सीमित दायित्व में परिवर्तन करके अपना पंजीकरण करा सकती है। (धारा 32) इस धारा के अन्तर्गत असीमित कम्पनी का सीमित कम्पनी में पंजीकरण, में ऐसे ऋणों, दायित्वों या संविदा पर कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा जो ऐसे पंजीकरण के पूर्व में है।

5. **पूँजी वाक्य में परिवर्तन :–**धारा 94 के अनुसार, यदि अन्तर्नियम द्वारा अधिकृत हो, तो अंश पूंजी द्वारा सीमित कम्पनी साधारण सभा में एक साधारण प्रस्ताव पारित कर सीमानियम में पूँजी से संबंधित शर्तों के परिवर्तन कर सकती है जिसके :–

(1) नये अंशों के निर्गमन द्वारा अधिकृत अंश पूंजी में वृद्धि होती है या ।

(2) अपनी समस्त या कुछ अंशपूँजी को मिलाकर अथवा वर्तमान अंशों की अपेक्षा अधिक धनराशि के अंशों में विभाजित करते है।

(3) अपने समस्त या कुछ पूर्णदत्त अंशों को स्कन्ध में परिवर्तित करके।

(4) अपने समस्त या कुछ अंशों को पार्षद सीमानियम द्वारा निश्चित किये गये धन से कम राशि के अंशों में उपविभाजित करके या।

(5) जो अंश किसी के द्वारा न लिये गये हो, अनके समस्त या रद्द करके है।

एक कम्पनी उपरोक्त परिवर्तनों को साधारण प्रस्ताव द्वारा पारित करके कर सकती है, यदि अन्तर्नियम द्वारा अधिकृत हो। यदि अन्तर्नियम द्वारा अधिकृत न हो तो सर्वप्रथम कम्पनी का परिवर्तन किया जायेगा। ऐसे परिवर्तन के 30 दिन के अन्दर रजिस्टार को प्रस्ताव तथा परिवर्तित सीमानियम की प्रति भेजनी चाहिये जिससे अपने यह रिकार्ड कर सके।

3.7 अधिकारातीत का सिद्धान्त

कम्पनी का निर्माण कुछ विशिष्ट उद्देश्यों जो पार्षद सीमानियम में उल्लिखित होते है, की प्राप्ति के लिये होता है। कम्पनी, उसके पार्षद सीमानियम में दी गयी शक्तियों के बाहर कोई कृत्य नहीं कर सकती है। वह आसानी से अपने उद्देश्य

वाक्य में परिवर्तन नहीं कर सकती है। कम्पनी का पार्षद सीमानियम, सही अर्थों में, कम्पनी के उद्देश्यों को परिभाषित तथा स्पष्ट करता है। जिससे कम्पनी के साथ व्यवहार करने वाले प्रत्येक व्यक्ति को कम्पनी की गतिविधियों के कार्यक्षेत्र का सही चित्र का पता चलता है। अतः कम्पनी का सीमानियम गतिविधियों की ऐसी रेखा खींचता है जिसका कम्पनी किसी भी स्थिति उल्लंघन नहीं कर समती है। यदि कमपनी एंसा करती है, तो ऐसी गतिविधि, अधिकारातीत गतिविधि माना जायेगी।

अधिकारातीत की अंग्रेजी 'Ultra-Vires' है जो एक लैटिन शब्द है तथा दो शब्दों से बना है 'Ultra' तथा 'Vires'. Ultra का अर्थ 'परे' तथा 'Vires' का अर्थ 'शक्ति' है। अतः ''कम्पनी के Ultra Vires या अधिकारातीत से आशय ऐसे कृत्य से है जो कम्पनी की विधिक शक्ति तथा अधिकार से परे है। इस सिद्धान्त में अनुसार ऐसे कृत्य जो कम्पनी में पार्षद सीमा नियम के क्षेत्र से परे या कम्पनी अधिनियम 1956 के प्राविधानों का उल्लंघन करते हैं या भूमि के सामान्य नियम का उल्लंघन करते हैं, 'अधिकारातीत' है। नियम का उल्लंघन कृत्य पूर्णतया प्रभावहीन व्यर्थ है, जिसे सभी अंशधारी मिलकर भी न तो संशोधित कर सकते हैं तथा न ही इसे करने के लिए कम्पनी को बाध्य कर सकते हैं। यह आवश्यक नहीं है कि अधिकारातीत कृत्य अवैधानिक हो। यह हो भी सकता है और नहीं भी। यहाँ यह ज्ञातव्य है कि सिद्धान्त कम्पनी को किसी ऐसी कार्य को करने से नहीं रोकता है जो उसके–उसके उद्देश्यों के लिए उचित व तर्क सम्मत हो।

इस सिद्धान्त के दो उद्देश्य हैं – प्रथम, अंशधारियों को यह ज्ञान हो जाय कि उनके द्वारा विनियोजित धन, कम्पनी द्वारा किन कार्यों में उपयोग किया जा रहा है। दूसरे, बाह्य पक्ष अपने को सुरक्षित तथा संतुष्ट महसूस करता है कि उसके द्वारा विनियोजित धन का दुरूपयोग नहीं किया जायेगा।

अधिकार से परे या नाहर के सिद्धान्त का सर्वप्रथम प्रयोग वर्ष 1875 में इंग्लैण्ड में श्रीपति सदन (Hourse of Lord) द्वारा ऐशबरी रेलवे कैरिज एण्ड आयरन कम्पनी लिमिटेड बनाम रिचे नाम वाद में किया गया। इस वाद में कम्पनी निम्न उद्देश्यों के लिए समामेलित हुयी–

क. रेलवे कैरिज, वैगन्स तथा रेलवे प्लान्ट्स बनाने, बेचने अथवा किराये पर देने हेतु;

ख. मैकेनिकल इन्जीनियरों एवं सामान्य ठेके सम्बन्धी व्यवसाय करने हेतु

ग. खानें, खनिज पदार्थ भूमि एवं भवन क्रय करने, किरायेपर देने औ बेचने हेतु।

परन्तु कम्पनी द्वारा रिचे से बेल्जियम में रेलवे लाइन के निर्माण के वित्तीयन का अनुबन्ध किया गया। यहाँ प्रश्न उत्पन्न हुआ कि क्या यह अनुबन्ध, सामान्य अनुबन्ध में आता है ? मामले में निर्णय देते हुए लॉर्ड केयर्न्स ने लिखा है कि ''यह अनुबन्ध पूर्णतः सीमानियम में निर्दिष्ट उद्देश्यों के बाहर है। इसलिए यह अनुबन्ध करना कम्पनी की शक्ति से बाहर है अतः यह विचार करने का प्रश्न ही नही उठता कि बाद में अंशधारियों ने इस अनुबन्ध की पुष्टि की अथवा नहीं..... क्योंकि ऐसा अनुबन्ध तो प्रारम्भ से ही व्यर्थ है और कम्पनी द्वारा उसे प्रवर्तनीय नही कराया जा सकता।''

ए0 लक्ष्मी स्वामी मदलिया बनाम जीवन बीमा निगम [AIR (1963) SC 1185] के वाद में सुप्रीम कोर्ट ने इस सिद्धान्त को प्रतिस्थापित कर दिया। कम्पनी के संचालकों को किसी भी पुण्यार्थ या परोपकारी उद्देश्यों के लिये अथवा किसी सार्वजनिक, सामान्य अथवा लाभदायक कार्यों के लिये भुगतान करने का अधिकार था।'' अंशधारियों के प्रस्ताव तथा उपरोक्त आधार पर संचालकों ने 2 लाख रू0 ऐसे प्रन्यास को दिये जिसका उद्देश्य तकनीकी तथा व्यापारिक विकास करना था। ऐसा भुगतान 'अधिकार से बाहर' ठहराया गया। उच्चतम न्यायालय के कहा कि संचालक कम्पनी का धन अपने चुने हुये किसी प्रन्यास या सामान्य उद्देश्यों के लिये व्यय नही कर सकते है। वे केवल ऐसी विकास गतिविधियों पर धन व्यय कर सकते है जो कम्पनी के उद्देश्यों की पूर्ति के सहायक हो।

कभी–कभी कुछ कृत्य या लेन–देन संचालकों की सीमा से परे या अन्तर्नियम के क्षेत्र से बाहर होते है परन्तु कम्पनी की शक्ति के अन्तर्गत आते है। इन कृत्यों या लेन–देन को कम्पनी साधारण सभा में संशोधित करा सकती है।

<u>अधिकारातीत लेन–देन का प्रभाव या परिणाम</u>

जब कोई कम्पनी अधिकारातीत कृत्य या लेन–देन करती है तो उसमें निम्न परिणाम होते हैः–

1. **निषेधाना :–** जब कोई कम्पनी पार्षद सीमानियम में उल्लिखित उद्देश्यों या कृत्य से परे कार्य करती है तो कम्पनी का कोई सदस्य, कम्पनी के विरूद्ध उसमें अधिकारातीत कृत्य को रोकने के लिये न्यायालय से निषेणाज्ञा प्राप्त कर सकता है।
2. **संचालकों का व्यक्तिगत दायित्व :–** कम्पनी के संचालकों का यह परम कर्तव्य है कि वे कम्पनी की अंश–पूँजी का उपयोग केवल अधिकृत एवं वैध कार्यों के लिए ही करें, अतएव यदि वे कम्पनी की पूँजी का उपयोग पार्षद सीमानियम में उल्लिखित उद्देश्यों के अतिरिक्त अन्य कार्यों के लिए करते हैं तो वे उन कार्यों के परिणामस्वरूप होने वाली क्षति के लिए व्यक्तिगत रूप से उत्तरदायी होंगे।

   कम्पनी की पूँजी का उपयोग कम्पनी के अधिकृत कृत्यों में हो, यह देखना संचालकों का दायित्व है। यदि इसका उल्लंघन होता है तो संचालन व्यक्तिगत रूप से दायी होगे।
3. **अनुबंध का व्यर्थ होना :–** कोई अनुबंध जो कम्पनी के अधिकार से परे है, व्यर्थ है। यदि ऐसा अनुबंध संचालकों की शक्ति से परे है। परन्तु कम्पनी से परे नहीं है तो ऐसा अनुबंध साधारण सभा संशोधित किया जा सकता है। यदि ऐसा अनुबंध संशोधित नही किया जाता है तो संचालक तृतीय पक्ष के व्यक्तिगत रूप से गर्भित आश्वासन सत्ता भंग के दायी होगे।
4. **अप्रत्यक्ष प्रभाव–** अधिकार से परे लेन–देन का निम्न अप्रत्यक्ष प्रभाव होता हैः

   (1) **अधिकार से परे सम्पत्ति का अधिग्रहण–** यदि कम्पनी अधिकारातीत लेन–देन से कोई सम्पत्ति प्राप्त करती है तथा उसका उपयोग अपने ऋणों के भुगतान हेतु करती है तो यदि कम्पनी की धनराशि से अधिकार के बाहर

किसी सम्पत्ति को प्राप्त किया गया है तो कम्पनी का उस सम्पत्ति पर अधिकार सुरक्षित रहेगा। इसका कारण यह है कि यद्यपि वह सम्पत्ति गलत ढंग से प्राप्त की गई है किन्तु फिर भी वह सामूहिक पूँजी का प्रतिनिधित्व करती है।

(2) अधिकार से परे धन का लेन–देन यदि कोई कम्पनी अपने अधिकारों के बाहर किसी व्यक्ति को ऋण प्रदान करती है तो उसे वसूल करने का उसका अधिकार बना रहता है, समाप्त नही होता।

(3) यदि कोई सम्पत्ति कम्पनी द्वारा अधिकार से परे लेन–देन द्वारा प्राप्त की गयी है तो वह व्यक्ति जिसका सम्पत्ति है, वापस प्राप्त कर सकता है।

5. **अधिकार से परे अपकृत्य :–** किसी कम्पनी को उसके कर्मचारियों के अपकृत्यों के लिये दायी ठहराने हेतु निम्न सिद्ध करना होगाः–
    1. ऐसी अपकृत्य ऐसे कार्य के दौरान हुआ जो कम्पनी के सीमानियम की परिधि में है।
    2. कर्मचारी द्वारा अपकृत्य रोजगार के दौरान किया गया।

अधिकारातीत सिद्धान्त के अपवाद

ऐसी कार्य जो कम्पनी की शक्ति से बाहर है, पूर्णतः प्रभावहीन तथा व्यर्थ है। इसको क्रियान्वित नहीं कराया जा सकता है, परन्तु इस सिद्धान्त के निम्न अपवाद हैः–

1. ऐसा कार्य जो कम्पनी की शक्ति में है, परन्तु संचालको की शक्ति से बाहर है, उसे कम्पनी द्वारा संशोधित किया जा सकता है।
2. यदि कोई सम्पत्ति कम्पनी द्वारा अनाधिकृत तरीके से प्राप्त की गयी है तो उसे कम्पनी से वसूला जा सकता है, बशर्तें सम्पत्ति विद्यमान तथा पहचान योग्य हो।
3. यदि कोई कार्य पार्षद अन्तर्नियम से परे है, तो ऐसे कार्य के लिये कम्पनी की शक्ति के अन्तर्गत अन्तर्नियम में परिवर्तन किया जा सकता है।
4. यदि कोई कृत्य कम्पनी के अधिकार में है, परन्तु अनियमित ढ़ग से किया गया है तो उसे अंशधारकों द्वारा संशोधित किया जा सकता है।
5. यदि कोई व्यक्ति कम्पनी से अधिकारातीत संविदा के अन्तर्गत ऋण लेना है तो कम्पनी को धन की वसूल ने हेतु वाद लाने का अधिकार है।

यदि कोई कम्पनी अधिकारातीत ऋण लेती है तथा उससे अपने ऋणों का भुगतान करती है, तो ऋणदाता उस लेनदार की स्थिति में आ जाता है जिसका कम्पनी ने भुगतान किया है, तथा अपना धन वापस माँग सकता है।

3.8 सारांश

कम्पनी में निर्माण का प्रथम चरण पार्षद सीमानियम को तैयार करना है। चर ऐसा प्रपत्र है जिसमें कम्पनी के समामेलन की आधारभूत शर्तें समाविष्ट होती है। सीमानियम को विषय वस्तु अनिवार्य वाक्य कहलाते है– नाम वाक्य, पंजीकृत कार्यालय वाक्य, उद्‌देश्य वाक्य, दायित्व वाक्य, पूँजी वाक्य, हस्ताक्षर वाक्य।

कम्पनी अधिनियम की धारा 16 के अनुसार कम्पनी पार्षद सीमानियम में, अधिनियम में दिये प्रावधानों की सीमा तथा विधि की छोड़कर परिवर्तन नही कर सकती है। कम्पनी

की गतिविधियाँ पार्षद सीमानियम के उद्देश्य वाक्य में स्पष्ट रूप से उल्लिखित होती है तथा यदि कोई कम्पनी इसके बाहर कार्य करती है तो वह कार्य अधिकारातीत हो जाता है। ऐसे कार्यो की अधिकार से बाहर घोषित करने का उद्देश्य अंशधारियों तथा अन्य पक्ष जो कम्पनी के साथ व्यवहार कर रहे है, के हितों की सुरक्षा करना ळें

3.9 शब्दावली

पार्षद सीमानियम – यह ऐसा प्रपत्र है जो कम्पनी के उद्देश्य को परिभाषित करता है तथा समामेलन के लिये आधारभूत शर्तें को पूरा करता है।

अधिकार से परे सिद्धान्त :– यह सिद्धान्त, कम्पनी के ऐसे कार्य को जो कम्पनी में कार्यक्षेत्र से बाहर किया गया है, को प्रभावहीन तथा व्यर्थ घोषित करता है।

3.10 बोध प्रश्न

क. खाली स्थान भरो।

1. पार्षद सीमानियम कम्पनी तथा..................के मध्य संबंध को विनियमित करता है।
2 पार्षद सीमानियम के उद्देश्य में परिवर्तन हेतु........................आवश्यक है।
3. कोई कार्य जो कम्पनी के अधिकार से बाहर है, ...तथा प्रभावहीन है।
4. कम्पनी का उद्देश्य.........................तथा स्पष्ट रूप से परिभाषित होना चाहिये।

सही/गलत

1. पार्षद सीमानियम का निर्माण, कम्पनी के समामेलन का अन्तिम चरण है।
2. पार्षद सीमानियम के किसी हस्ताक्षरकर्ता या सदस्य के पास 100 से कम अंश नही होना चाहिये।
3. कम्पनी के दायित्व वाक्य में परिवर्तन नहीं किया जा सकता है।
4. प्रत्येक कम्पनी में उसका अपना पार्षद सीमानियम होना आवश्यक है।

3.11 बोध प्रश्नों के उत्तर

(A)

(1)बाहय विश्व (2) विशेष प्रस्ताव तथा कम्पनी लॉ बोर्ड का अनुमोदन (3) व्यर्थ (4) विधिपूर्ण

(B)

1. False, 2. False, 3. False, 4. True.

3.12 स्वपरख प्रश्न

1. पार्षद सीमानियम क्या है? उसमें विभिन्न वाक्यों विवेचन कीजिये?
2. पार्षद सीमानिमय के विभिन्न वाक्यों के किस प्रकार परिवर्तन किया जाता है?
3. एक लिमिटेड कम्पनी के पार्षद सीमानियम के संदर्भ में अधिकारातीत सिद्धान्त का विवेचन कीजिये।
4. पार्षद सीमानियम के उद्देश्य वाक्य में परिवर्तन हेतु कौन–कौन से चरण आवश्यक है?

3.13 सन्दर्भ पुस्तकें

1. पी0पी0एस0 गोगना, मर्केन्टाइल ला, एस0 चन्द्र एण्ड कम्पनी, नई दिल्ली।

2. एन0डी0 कपूर, कम्पनी लॉ, सुल्तान चन्द्र एण्ड सन्स, नई दिल्ली।
3. एस0सी0 अग्रवाल, कम्पनी लॉ, धनपत राय पब्लिकेशन, नई दिल्ली।
4.. एस0एस0 गुलशन व जी0के0 कपूर, बिजनेस लॉ व कम्पनी लॉ, न्यू ऐज इण्टरनेशनल पब्लिशर्स, नई दिल्ली।
5.. के0आर0 बालचन्द्री, बिजनेस लॉ फॉर मैनेजमेन्ट, हिमालय पब्लिकेशन हाउस, नई दिल्ली।
6. एस0के0 अग्रवाल, बिजनेस लॉ, गलगोटिया पब्लिशिंग कम्पनी, नई दिल्ली।
7. एम0सी0 पुच्छल व दीपा प्रकाश, बिजनेस लेजीलेशन फॉर मैनेजमेन्ट, विकास पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली।

इकाई 04 पार्षद अन्तर्नियम

इकाई की रूपरेखा

4.1 प्रस्तावना
4.2 पार्षद अन्तर्नियम का अर्थ
4.3 पार्षद अन्तर्नियम की विषयवस्तु
4.4 पार्षद अन्तर्नियम के प्रकार या प्रारूप
4.5 पार्षद अन्तर्नियम में परिवर्तन
4.6 पार्षद सीमा नियम तथा पार्षद अन्तर्नियम में अन्तर
4.7 पार्षद सीमा नियम तथा पार्षद अन्तर्नियम का प्रभाव
4.8 पार्षद सीमा नियम तथा पार्षद अन्तर्नियम की रचनात्मक सूचना
4.9 आन्तरिक प्रबंध का सिद्धान्त
4.10 साराँश
4.11 शब्दावली
4.12 बोध प्रश्न
4.13 बोध प्रश्नों के उत्तर
4.14 स्वपरख प्रश्न
4.15 सन्दर्भ पुस्तकें

उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् आप इस योग्य हो सकेंगे किः–

- पार्षद अन्तर्नियम की परिभाषा तथा उसके विषय वस्तु की व्याख्या कर सकें।
- पार्षद अन्तर्नियम के संशोधन की प्रक्रिया का विवेचन कर सकें।
- कम्पनी के पार्षद अन्तर्नियम के बाध्यकारी प्रभाव की व्याख्या कर सकें।
- रचनात्मक सूचना तथा आन्तरिक प्रबंध के सिद्धान्तों का वर्णन कर सकें।

4.1 प्रस्तावना

कम्पनी में निर्माण का अगला चरण पार्षद अन्तर्नियम को तैयार करना है। इसमें कम्पनी के आन्तरिक प्रबंध के नियमों का उल्लेख होता है। इसमें पार्षद सीमा नियम में दिये गये उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिये नियम तथा उपनियम दिये होते हैं।

4.2 पार्षद अन्तर्नियम का अर्थ

कम्पनी में समामेलन के लिये, रजिस्ट्रार के यहाँ, पार्षद सीमा नियम केसाथ पार्षद अर्नियम को दाखिल करना होता है। कम्पनी अधिनियम की धारा 2(2) के अनुसार, पार्षद अन्तर्नियम से आशय एक ऐसे अन्तर्नियम से है जो पिछले कम्पनी अधिनियमों अथवा इस कम्पनी अधिनियम के अधीन मूलरूप से बनाया गया अािवा समय–समय पर परिवर्तित किया गया है।''

पार्षद अन्तर्नियम, कम्पनी में आन्तरिक मामलों को विनियमित करने के लिये नियम कानून तथा उपनियम है। इसमें कम्पनी के आन्तरिक नियमन हेतु कम्पनी में

प्रबंधन तथा उसके संचालकों, अधिकारियों एवं अंशधारियों की शक्तियों का वर्णन होता है। इसमें कम्पनी में व्यवसाय को चलाने की विधि तथा नियम दिये होते हैं।

कम्पनी के अन्तर्नियम को बनाते समय यह ध्यान रखना चाहिये कि उसके नियम कम्पनी की शक्ति से परे न हो। इसके साथ–साथ अन्तर्नियम के नियम, पार्षद सीमा नियम में वाक्यों का उल्लंघन न करते हों ऐसे सभी अन्नर्नियम के वाक्य जो सीमा नियम तथा कम्पनी अधिनियम का उल्लंघन करते हैं, पूर्णतः प्रभावहीन तथा व्यर्थ होते हैं।

कम्पनी अधिनियम की धारा 26 के अनुसार निम्नलिखित कम्पनियों को समामेलन के समय अपने पार्षद अन्तर्नियम, सीमा नियम के साथ रजिस्ट्रार की जमा करना आवश्यक है।

(i) निजी लिमिटेड कम्पनी

(ii) गारण्टी द्वारा लिमिटेड कम्पनी

(iii) असीमित कम्पनी

निजी कम्पनी में पार्षद अन्तर्नियम में कुछ वैधानिक प्रतिबंध होते हैं जो उसे निजी कम्पनी बनाते हैं। गारण्टी द्वारा सीमित कम्पनी को अपने अन्तर्नियम में कम्पनी प्रस्तावित समामेलन में सदस्यों की संख्या का उल्लेख करना चाहियें तथा असीमित कम्पनी को कम्पनी प्रस्तावित सभी सम्मेलन में सदस्यों की संख्या तथा अधिकृत पूँजी की राशि, दोनों का उल्लेख करना चाहिये।

पार्षद अन्तर्नियम छपे हुये, पैराग्राफ में विभाजित एवं क्रमबद्ध होना चाहिये एवं पार्षद सीमा नियम के प्रथम हस्ताक्षरकर्ता के हस्ताक्षर के साथ पता, विवरण तथा पेशे का विवरण होना चाहिये। प्रत्येक हस्ताक्षरकर्ता को कम से कम एक साक्षी भी उपस्थिति में हस्ताक्षर करना चाहिये, जिसका पते तथा पेशे का उल्लेख भी होना चाहिये।

4.3 पार्षद अन्तर्नियम की विषय वस्तु

पार्षद अन्तर्नियम में निम्न विषयों से संबंधित प्रावधान होते हैं–

1. तालिका 'A' लागू होने की सीमा
2. अंशो की विभिन्न श्रेणियाँ तथा उसके अधिकार
3. अंश पूँजी को जारी करने की विधि
5. अंश पर ग्रहणाधिकार
6. अंशों का हरण तथा उसके पननिर्गमन की विधि
7. अंशों की माँग के मध्य समयान्तराल
8. अंशों का स्टाक में परिवर्तन
9. अंशों तथा श्रणपत्रों में अभिगोपकों को कमीशन का भुगतान
10. प्रारंम्भिक संविदा को अपनाने का नियम
11. अंश पूँजी का पुनर्गठन
12. अंश पूँजी में परिवर्तन
13. संचालकों की ऋण लेने की शक्ति

14. अंशों का हस्तान्तरण तथा पारेषण
15. सभाओं का आयोजन
16. सदस्यों व प्राक्सी के मताधिकार
17. लाभांश का भुगतान तथा कोष का निर्माण
18. संचालकों की नियुक्ति, शक्ति, दायित्व, योग्यता पारिश्रमिक आदि
19. कम्पनी की सार्वमुद्रा का उपयोग
20. पुस्तकों का रख रखाव तथा उनके अंकेक्षण
21. अंकेक्षकों की नियुक्ति व पारिश्रमिक आदि
22. बोर्ड (मण्डल) सभा तथा उसकी कार्यविधि
23. प्रस्ताव के नियम
24. प्रबंध निदेशक, प्रबंधक तथा सचिव को नियुक्ति, अधिकार, शक्ति, दायित्व, पारिश्रमिक, योग्यता आदि।
25. लाभों का पूंजीकरण
26. मध्यस्थता में प्रावधान
27. समापन के नियम
28. ऐसी शक्तियों के प्रावधान जो बिना अन्तर्नियम के उपयोग नहीं की जा सकती है जैसे शोधनीय पूर्वाधिकार अंशों का निर्माण।

उपरोक्त विषयों के अतिरिक्त असीमित कम्पनी को अपने अन्तर्नियम में प्रस्तावित सदस्यों की संख्या का उल्लेख तथा यदि कम्पनी के द्वारा पूँजी है तो पंजीकरण के समय अंश पूँजी की राशि धारा 27(1) गारण्टी द्वारा समिति कम्पनी की दशा में प्रस्तावित पंजीकरण के सदस्यों की संख्या धारा 27(2) अंश पूँजी वाली निजी कम्पनी के अन्तर्नियम में धारा 3(i)(iii) में दिये गये चार प्रतिबंध।

4.4 पार्षद अन्तर्नियम के प्रारूप

अधिनियम की अनुसूची I में विभिन्न कम्पनियों के पार्षद सीमा नियम तथा अन्तर्नियम के विभिन्न प्रारूप दिये गये हैं। अनुसूची 1 निम्न तालिका में विभाजित है–

(i) तालिका अ (Table-A) में अशों द्वारा सीमित कम्पनी

(ii) तालिका 'ब' (Table - B) में अशों द्वारा सीमित कम्पनी के लिए पार्षद सीमा नियम का प्रारूप उल्लिखित है।

(iii) तालिका 'स' (Table - C) में गारण्टी द्वारा सीमित कम्पनी जिसमें अंश पूँजी नहीं है के लिये।

(iv) तालिका 'द' (Table - D) में गारण्टी द्वारा सीमित कम्पनी के लिये जिसमें अंश पूँजी है, के पार्षद सीमा नियम तथा अन्तर्नियम के माडल प्रारूप उल्लिखित है।

(v) तालिका 'इ' (Table - E) में असीमित कम्पनी के लिये पार्षद सीमा नियम तथा अन्तर्नियम के माडल प्रारूप उल्लिखित है।

एक लोक कम्पनी का अपना पार्षद अन्तर्नियम होना चाहिये। यदि उसका अपना पार्षद अन्तर्नियम नहीं है तो वह अधिनियम की अनुसूची–I के तालिका 'अ'

(Table-A) को अपना सकती है। लोक कम्पनी के लिये तीन प्रकार के वैकल्पिक प्रारूप है, जिसे वह अपना सकती है–

1. कम्पनी तालिका 'अ' (Table-A) को पूरा अपना सकती है।
2. कम्पनी तालिका 'अ' को पूर्णतः त्याग करते हुये अपना पार्षद अन्तर्नियम बना सकती है।
3. कम्पनी अपने अन्तर्नियम के साथ अंशतः तालिका 'अ' (Table -A) में अपना सकती है।

4.5 पार्षद अन्तर्नियम में परिवर्तन

पार्षद अन्तर्नियम, जो कम्पनी का आन्तरिक प्रबंध का नियमन करता है, को कम्पनी स्वतंत्रता पूर्वक परिवर्तित कर सकती है। अन्तर्नियम में कुछ परिवर्तन करने या जोड़ने का अधिकार स्पष्ट रूप से धारा 31 में उल्लिखित है। इसके अनुसार कम्पनी मात्र विशेष प्रस्ताव पारित करके, जब भी आवश्यक हो, अन्तर्नियम में संशोधन कर सकती है। उपरोक्त प्रस्ताव पारित होने के 30 दिन के अन्दर, विशेष प्रस्ताव जो संशोधन को अधिकृत करता है, की प्रति तथा संशोधित अन्तर्नियम की प्रति, रजिस्टर में दाखिल करनी आवश्यक है। ऐसा संशोधन रजिस्ट्रार द्वारा पंजीकृत होने की तिथि से प्रभावी होता है।

अन्तर्नियम में संशोधन की शक्ति कानून द्वारा प्रदत्त वैधानिक शक्ति है जिसे किसी भी तरह नहीं हटाया जा सकता है। कम्पनी पार्षद सीमनियम/अन्तर्नियम में वाक्य जोड़कर या संविदा द्वारा या किसी भी तरह अपने संशोधन से अलग नहीं कर सकती है, इसके साथ–साथ अन्तर्नियम को पुनः संशोधित किया जा सकता है तथा इसे भूतलक्षी प्रभाव से संशोधित किया जा सकता है। कम्पनी को अन्तर्नियम में संशोधन की स्वतंत्रता कुछ सीमाओं के अन्तर्गत मिली है जो निम्न हैः–

अन्तर्नियम में संशोधन की सीमायें–

1. **संशोधन, कम्पनी अधिनियम या किसी अन्य अधिनियम के प्रावधानों से असंगत नहीं (धारा 31)–** कोई कम्पनी अपने अन्तर्नियम में संशोधन द्वारा अंशधारी के कम्पनी के समापन के लिये वाद प्रस्तुत करने के अधिकार को कम या समाप्त नहीं कर सकती है क्योंकि ऐसा अधिकार धारा 439 द्वारा दिया गया है।

   यह संभव है कि कम्पनी अन्तर्नियम संशोधन द्वारा अधिनियम की अपेक्षा, कठोर शर्तों को लगा सकती है, उदाहरण– विधि के अनुसार किसी कार्य के लिये सामान्य बहुमत अपेक्षित है परन्तु अन्तर्नियम संशोधन द्वारा उसे विशेष बहुमत कर दिया जाता है।
2. **संशोधन, सीमा नियम या की शर्तों से असंगत न हो (धारा 31)–** अन्तर्नियम में ऐसा संशोधन नहीं किया जा सकता है, जिसकी शक्ति सीमा नियम द्वारा न दी गयी हो।
3. **संशोधन, कम्पनी ला बोर्ड में संशोधन आदेश से असंगत न हो–** धारा 397 तथा 398 के अन्तर्गत "Oppresion तथा कुप्रबंध' को दूर करने के लिये कम्पनी ला बोर्ड के पास पार्षद सीमा नियम तथा अन्तर्नियम में संशोधन करने

की शक्ति है। यदि कम्पनी ला बोर्ड ऐसा संशोधन करती है, तो कम्पनी ऐसा कोई संशोधन नहीं कर सकती है जो कम्पनी ला बोर्ड के संशोधन आदेश को असंगत हो।

4. **कुछ मामलों में केन्द्र सरकार का अनुमोदन आवश्यक–** निम्न मामलों में संशोधन तभी वैध होगा जबकि ऐसा संशोधन केन्द्र सरकार द्वारा अनुमोदित हो–

   (a) ऐसे संशोधन द्वारा एक लोक कम्पनी, निजी कम्पनी में परिवर्तित हो जाती है। (धारा 31)

   (b) एक लोक कम्पनी की दशा में, यदि संशोधन, संचालक या पूर्ण कालिक संचालन या प्रबंध संचालन की नियुक्ति या पुनर्नियुक्ति, जो चक्रानुसार रिटायर होने के लिये दायी न हो, के प्रावधान सेसंबंधित हो, तथा प्रस्तावित संशोधन, अनुसूची XIII में इस संबंध में उल्लिखित शर्तों से सुसंगत नहीं है (धारा 288, अनुसूची XIII)

   (c) लोक कम्पनी की दशा में यदि संशोधन के परिणामस्वरूप संचालक (जिसमें प्रबंध या पूर्णकालिक संचालक शामिल है) के परिश्रमिक में ऐसी वृद्धि होती है, जो अनुसूची XIII की सीमा से बाहर है। (धारा 316, अनुसूची XIII)

   जहाँ संशोधन का अनुमोदन सरकार द्वारा दिया गया है, तो अनुमोदन आदेशि की प्राप्ति के एक माह के अन्दर रजिस्टार को, संशोधि अन्तर्नियम की मुद्रित प्रति दाखिल करनी चाहिये।

5. **संशोधन द्वारा किसी व्यक्ति को संविदा के अन्तर्गत उसके अधिकारों से वंचित नहीं रखा जा सकता है** किसी व्यक्ति के संविदा द्वारा प्राप्त अधिकारों को अन्तर्नियम में संशोधन द्वारा समाप्त नहीं किया जा सकता है। एलन बनाम वेस्ट अफ्रीका गोल्ड सेक्स के वाद से लार्ड लिण्डसे के अनुसार ''चूँकि एक व्यक्ति अन्तर्नियम के प्रावधानों तथा एक स्वतंत्र सेवा संविदा केअन्तर्गत 2000 रू0 प्रतिमाह पर निदेशक नियुक्त हुआ, इसलिये उसे MOA कमें संशोधन द्वारा 2000/– प्रतिमाह से कम राशि लेने के लिये बाध्य नहीं किया जा सकता है। यदि अर्न्तनियम द्वारा नियुक्ति होती है तो ऐसा संशोधन वैध तथा बाध्यकारी होगा।

6. संशोधन द्वारा अल्पमत पर कपट का सृजन नहीं होना चाहिए।

4.6 पार्षद समिनियम तथा पार्षद अन्तर्नियम में अन्तर

1. **अर्थ–** पार्षद सीमानियम कम्पनी का चार्टर है। इसमें उन आधारभूत शर्तों का समावेशन होता है जिनके आधार पर कम्पनी का समामेलन हुआ है। पार्षद अन्तर्नियम में कम्पनी के आन्तरिक प्रबंध को विनियमित करने हेतु नियम तथा उपनियम दिये होते हैं।

2. **संशोधन की विधि–** पार्षद सीमानियम में आसानी से संशोधन नहीं हो सकता है। इनमें संशोधन विशिष्ट उद्देश्यों तथा अधिनियम द्वारा निर्धारित नियम व विधि के अनुसार ही किया जा सकता है। कुछ मामलों में कम्पनी ला बोर्ड की अनुमति आवश्यक होती है तो कुछ मामलों में न्यायालय की अनुमति आवश्यक है। पार्षद अन्तर्नियम पर सदस्यों का पूर्ण नियंत्रण होता है। सदस्य, विशेष प्रस्ताव पारित करके तथा अन्य शर्तों को संतुष्ट करके अन्तर्नियम में संसोधन कर सकते हैं। सामान्य संशोधन में न्यायालय तथा सरकार की अनुमति को आवश्यकता नहीं है।
3. **क्षेत्र–** पार्षद सीमा नियम कम्पनी के उद्देश्यों तथा शक्तियों को परिभाषित करता है। यह कम्पनी के क्षेत्र तथा गतिविधियों की सीमा को निर्धारित करता है। अन्तर्नियम, कम्पनी के उपनियम को बनाता है तथा ऐसे नियम बनाता है जिसके अन्तर्गत कम्पनी के उद्देश्य तथा शक्तियाँ क्रियान्वित किये जा सके। यद्यपि दोनों लोक प्रपत्र है, सीमा नियम कम्पनी बाह्य पक्ष के संबंध को परिभाषित करता है, जबकि अन्तर्नियम, कम्पनी व सदस्य, परस्पर सदस्यों के मध्य संबंध को विनियमित करता है।
4. **विषय वस्तु–** पार्षद सीमा नियम में ऐसा कोई वाक्य नहीं होना चाहिये जो कम्पनी अधिनियम के प्रावधानों से असंगत हो। पार्षद अन्तर्नियम, पार्षद सीमा नियम तथा कम्पनी अधिनियम का सहायक है। पार्षद अन्तर्नियम को विधिक प्रावधानों तथा सीमा नियम से असंगत नहीं होना चाहिये।
5. **सुधार–** सीमा नियम के क्षेत्र के बाहर, कम्पनी द्वारा किया गया कोई भी कार्य पूर्ण तथा व्यर्थ होता है तथा इसे सभी अंशधारियो के मतों से नही सुधारा जा सकता है। परन्तु अन्तर्नियम की परिधि के बाहर कम्पनी द्वारा किया गया कार्य अनियमित होता है, व्यर्थ नहीं तथा इसे आसानी से अंशधारियों द्वारा अनुमोदित या सुधारा जा सकता है।

4.7 पार्षद सीमानियम तथा पार्षद अन्तर्नियम का प्रभाव

इस धारा का उद्देश्य सीमा नियम तथा अन्तर्नियम पर संविदा बल को लगाना है। इन प्रावधानों का प्रभाव यह है कि ये कम्पनी के पार्षद सीमा नियम तथा अन्तर्नियम के माध्यम से कम्पनी तथा प्रत्येक सदस्य के मध्य संविदा का निर्माण करते हैं। इस धारा का प्रभाव इस पर निर्भर है कि सीमा नियम तथा अन्तर्नियम निम्न को कितना बाध्य करते हैं।

1. **सदस्यों को कम्पनी के प्रति–** सीमा नियम तथा अन्तर्नियम, कम्पनी तथा प्रत्येक सदस्य के मध्य संविदा का निर्माण करते हैं। कम्पनी का प्रत्येक सदस्य, पार्षद सीमा नियम तथा पार्षद अन्तर्नियम के विभिन्न प्रावधानों का पालन करतने को बाध्य है, यदि उसने उस पर हसताक्षर किया है। अतः कम्पनी, पार्षद अन्तर्नियम से सदस्य को बाध्य कर सकती है।
2. **कम्पनी का सदस्य के प्रति–** जिस प्रकार सदस्य कम्पनी के प्रति बाध्य होते हैं उसी प्रकार कम्पनी भी सदस्यों के प्रति पार्षद सीमा नियम तथा अन्तर्नियम के प्रावधानों से बाध्य होती है। अतः कम्पनी अपने सदस्यों के विरूद्ध

अधिकारों का उपयोग केवल पार्षद सीमा नियम तथा पार्षद अन्तर्नियम के अनुसार ही कर सकती है। इस प्रकार कम्पनी का प्रत्येक सदस्य कम्पनी को अधिकारों से बाहर कार्य करने से रोकने के लिये कम्पनी पर वाद प्रस्तुत कर सकता है। इसी प्रकार यदि अन्तर्नियम द्वारा अंशधारी को कम्पनी की सभा में मतदान का अधिकार है, सभा का अध्यक्ष, अंशधारी को मत देने से नहीं रोक सकता है।

इसी प्रकार एक अंशधारी, अन्तर्नियम के अनुसार साधारण सभा में घोषित लाभांश को प्राप्त करने का अधिकार है।

3. **सदस्यों का एक दूसरे के प्रति–** पार्षद सीमा नियम तथा पार्षद अन्तर्नियम परस्पर कम्पनी के सदस्यों के मध्य स्पष्ट अनुबंध का निर्माण नहीं करते हैं। तथापि कम्पनी का प्रत्येक सदस्य, अन्य सदस्य के प्रति, गर्भित संविदा के आधार पर बाध्य होता हैं अन्तर्नियम कम्पनी में परस्पर सदस्यों के अधिकारों को विनियमित करता है। परन्तु इन अधिकारों को केवल कम्पनी के माध्यम से ही लागू कराया जा सकता है।
4. **कम्पनी का बाह्य पक्ष के प्रति–** अन्तर्नियम कम्पनी तथा बाह्य पक्ष के मध्य किसी संविदा का निर्माण नहीं करते हैं, क्योंकि बाह्य पक्ष, संविदा का पक्षकार नहीं होता है और इसलिये उस पर वाद नहीं किया जा सकता है। एक बाहरी व्यक्ति, अन्तर्नियम द्वारा दिये गये अधिकार का उल्लंघन कम्पनी द्वारा करने पर, अन्तर्नियम को, कम्पनी के विरूद्ध लागू नहीं करा सकता है। 'बाह्य पक्ष' शब्द क अर्थ ऐसे व्यक्ति से है जो कम्पनी का सदस्य नहीं है। कम्पनी के सदस्य यदि कम्पनी का संचालन कर अधिवक्ता बन जाता है तो उसे बाह्य पक्षकार माना जायेगा तथा वह अपने अधिकारों को कम्पनी के विरूद्ध लागू नहीं करा सकता है।

4.8 पार्षद सीमानियम तथा पार्षद अन्तर्नियम की रचनात्मक सूचना

कम्पनी के सीमा नियम तथा अन्तर्नियम रजिस्ट्रार के यहाँ समामेलित होते हैं। ये लोक दस्तावेज होते हैं तथा जनता में निरीक्षण हेतु उपलब्ध होते हैं। प्रत्येक व्यक्ति जो कम्पनी के साथ अनुबंध कर रहा है, उसे तत्वों के बारे में पूर्ण जानकारी होनी चाहिये तथा उसे अपने को आश्वस्त कर लेना चाहिये कि संविदा उपरोक्तानुसार है, अन्यथा वह कम्पनी पर वाद नहीं कर सकता है।

कम्पनी में समामेलन पर सीमा नियम तथा अन्तर्नियम सार्वजनिक दस्तावेज हो जाते हैं। इन दस्तावेजों को कम्पनी कार्यालय या कम्पनी रजिस्ट्रार के कार्यालय में निर्धारित शुल्क देकर, कोई भी व्यक्ति देख सकता है तथा उसकी प्रति प्राप्त कर सकता है। (धारा 610)

प्रत्येक व्यक्ति जो कम्पनी के साथ व्यवहार करता है, चाहे वह अंशधारी हो या बाह्य पक्ष हो, यह माना जाता है कि उन्होंने कम्पनी के पार्षद सीमा नियम तथा अन्तर्नियम को पढ़ लिया है तथा उस प्रपत्रों की विषय वस्तु को जानते हैं।

इसलिये इन प्रपत्रों तथा उनकी विषय वस्तु के ज्ञान को पार्षद सीमा नियमतथा अन्तर्नियम को रचनात्मक सूचना कहते हैं।

यह माना जाता है कि बाह्य व्यक्ति जो कम्पनी के साथ व्यवहार कर रहे हैं, उनहोंने इन दस्तावेजों को न केवल अध्ययन किया है, बल्कि उसका उपयुक्त अर्थ भी समझ लिया है। जहाँ कोई व्यक्ति कम्पनी के साथ ऐसा व्यवहार करता है, जो सीमा नियम या अन्तर्नियम में प्रावधानों से असंगत है, अथवा ऐसा व्यवहार करता है जो कम्पनी की शक्ति से परे है, ऐसे व्यवहारों से उत्पन्न परिणामों के लिये व्यक्तिगत रूप से दायी होगा।

4.9 आन्तरिक प्रबंध का सिद्धान्त

आन्तरिक प्रबंध का सिद्धान्त, रचनात्मक सूचना के नियम का अपवाद है। यह माना जाता है कि एक व्यक्ति जो कम्पनी के साथ व्यवहार कर रहा है की सीमा नियम तथा अन्तर्नियम का ज्ञान है। इसलिये यदि वह कम्पनी के साथ ऐसा लेन–देन करता है, जो सीमा नियम या अन्तर्नियम से परे है, तो वह उस लेन–देन को करने के लिये कम्पनी को बाध्य नहीं कर सकता है। दूसरी तरफ, यदि कोई व्यवहार, सीमा नियम तथा अन्तर्नियम के अनुसार है, वह पूर्णतः अवैध होगा यदि कम्पनी अपने दायित्व यह कहते हार जाती है कि व्यवहार करते समय कम्पनी मामलों में कुछ अनियमितता थी, जबकि बाह्य पक्ष को इस अनियमितता की जानकारी नहीं थी तथा न ही इसे जानने का साधन था।

इस नियम का प्रतिपादन लॉर्ड हाथर्ले ने किया, जिसे 'आन्तरिक प्रबंध का सिद्धांत कहा जाता है।

अतः यह माना जाता है कि बाह्य पक्षकार कम्पनी में संविधान के बारे में जानता है, परन्तु कम्पनी के अन्दर या बन्द दरवाजों में क्या हो रहा है, जानने की अपेक्षा नहीं की जाती है।

अपवाद– आन्तरिक प्रबंध का सिद्धान्त के निम्न अपवाद हैं–

1. **अनियमितता की जानकारी होना–** यदि कम्पनी से व्यवहार करने वाले बाहरी व्यक्ति को व्यवहार की विषय वस्तु के सम्बंध में आन्तरिक प्रबंध की अनियमितता की जानकारी थी, तो बाहरी लाभ नही ले सकता है। उदाहरण अन्तर्नियमों के अन्तर्गत संचालकों को साधारण सभा की अनुमति के बिना कम्पनी की तरफ से 1000 पौण्ड का उधार लेने का अधिकार था तथा अनुमति लेकर और धन ले सकते थे। संचालकों ने कम्पनी 3500 पौण्ड दिये तथा ऋणपत्र लिये। ऐसे ऋणों को अधिकृत करने के लिये सामान्य सभा में कोई प्रस्ताव नहीं पारित हुआ। कम्पनी का समापन हो गया। यह निर्धारित हुआ कि कम्पनी 1000 पौण्ड तक की सीमा तक ही दायी थी तथा संचालन अतिरिक्त राशि प्राप्त करने के अधिकारी नहीं है क्योंकि उन्हें अनियमितता की जानकारी थी। (हावर्ड बनाम पेटेण्ट आइवरी मेनु फैक्चरिंग कम्पनी [(1888) 38 Ch.D156])
2. **जालसाजी–** यदि कम्पनी से व्यवहार करने वाला व्यक्ति किसी ऐसे प्रलेख पर निर्भर रहा है जिसमें जालसाजी की गयी है, तो आन्तरिक प्रबंध का

सिद्धान्त लागू नहीं होगा। जालसाजी वाले व्यवहार के पक्ष में नियम नहीं बदला जा सकता है। ऐसा व्यवहार व्यर्थ तथा प्रारम्भतः अवैध होता है।

उदाहरण– रूबेन ने अंश प्रमाण पत्र के आधार पर कम्पनी को धनराशि उधार दी। सचिव ने प्रमाण पत्र दो संचालकों के फर्जी हस्ताक्षर किये तथा बिना अधिकार के मुहर लगा दी। कम्पनी ने अंश प्रमाण पत्र को रजिस्टर में लिखने से मना कर दिया। रूबेन ने हर्जाने की मॉग की। वाद में निर्धारित हुआ कि रूबेन ऐसा नहीं कर सकता है क्योंकि जहाँ प्रपत्र जालसाजी से तैयार किया गया है वहाँ नियम नहीं लागू होता है। (रूबेन बनाम ग्रेट किंगाल कनसालिडेटेड कं0 1906) जालसाजल के अनतर्गत मुहर तथा हस्ताक्षर की नकल करना आती है। इसके अन्तर्गत बिना अधिकार के एजेण्ट द्वारा हस्ताक्षर को भी शामिल किया जाता है।

3. **कार्य जो प्रत्यक्ष रूप से अधिकार के बाहर हो–** यदि किसी अधिकारी द्वारा ऐसा कृत्य किया जा रहा है जो अधिकारी या कम्पनी के अधिकार क्षेत्र से बाहर है, तो वहाँ सिद्धांत नहीं लागू होगा तथा बाह्य पक्ष इसके विरूद्ध कोई सुरक्षा नहीं मांग सकता है।

   उदाहरण– पी ने कम्पनी को सम्पत्ति का हसतान्तरण, जो उसके लेखपाल ने किया था, स्वीकार किया। क्योंकि यह लेन–देन लेखपाल के अधिकार खेत्र से बाहर है इसलिये व्यर्थ है। (आनन्द बिहारी लाल बनाम बिनरा एण्ड कम्पनी ए0आई0आर0 1942, अवध 417)

4. **पार्षद अन्तर्नियम की विषय वस्तु का ज्ञान न होना–** एक व्यक्ति जिसने वास्तव में कम्पनी में पार्षद सीमानियम तथा अन्तर्नियम का अध्ययन नहीं किया है तथा अनुबंध करते समय उसके तथ्यों या विषय से अनभिज्ञ था, वहां पर नियम नहीं लागू होगा।

5. **लापरवाही–** एक व्यक्ति अनियमितता या लापरवाही से सम्बन्धित लाभ के लिये दावा नहीं कर सकता है।

   आन्तरिक प्रबंध का नियम कम्पनी के पक्ष में संचालित होता है, उसके विरूद्ध नहीं।

4.10 सारांश

पार्षद अन्तर्नियम में कम्पनी के आन्तरिक प्रबंध से संबंधित नियम होते हैं। अन्तर्नियम, कम्पनी अधिनियम तथा किसी अन्य अधिनियम, जो लागू है, के प्रावधानों का उल्लंघन नहीं कर सकता है। पार्षद अन्तर्नियम मुद्रित, पैराग्राफ में विभाजित तथा पार्षद सीमानियम के प्रत्येक हस्ताक्षरकर्ता द्वारा हस्ताक्षरित होना चाहिये। कम्पनी का समामेलन होने पर पार्षद सीमानियम तथा अन्तर्नियम लोक दस्तावेज हो जाते हैं तथा कोई भी व्यक्ति कम्पनी रजिस्ट्रार के कार्यालय में नाममात्र का शुलक जमाकर इनका निरीक्षण कर सकता है। इसलिये जब कोई व्यक्ति कम्पनी से व्यवहार करता है तो यह माना जाता है कि उसे कम्पनी के दोनों महत्वपूर्ण प्रपत्रों के विषय में पूर्ण जानकारी है। इसी जानकारी को लोक दस्तावेजों की रचनात्मक सूचना कहा जाता है। रचनात्मक सूचना के सिद्धान्त का एक अपवाद है जिसे आन्तरिक प्रबंध का

सिद्धान्त कहा जाता है।

4.11 शब्दावली

- **पार्षद अन्तर्नियम–** पार्षद अन्तर्नियम में मापनी के आन्तरिक मामलों के नियमन हेतु नियम, विनियम तथा उपनियम दिये होते हैं।
- **रचनात्मक सूचना का सिद्धान्त–** यह सिद्धान्त घोषणा करता है कि कम्पनी के समामेलन के बाद पार्षद सीमा नियम तथा अन्तर्नियम लोक दस्तावेज हो जाते हैं कम्पनी के साथ व्यवहार कने वाले बाह्य पक्ष से यह अपेक्षा की जाती है उसे दोनों प्रपत्रों के विषय का ज्ञान तथा सूचना है।
- **आन्तरिक प्रबंध का सिद्धान्त–** इस सिद्धान्त के अनुसार बाहरी व्यक्ति जो कम्पनी से व्यवहार कर रहा है यह मान लेता है कि कम्पनी की आन्तरिक औपचारिकताओं को कम्पनी में प्रबंधन द्वारा विधि पूर्वक तथा अन्तर्नियम के अनुरूप संचालित किया जा रहा है। यह सिद्धांत, रचनात्मक सूचना के सिद्धान्त का अपवाद है।

4.12 बोध प्रश्न

1. पार्षद अन्तर्नियम में संशोधन के लिये........................ आवश्यक है।
2. पार्षद अन्तर्नियम एक....................... प्रपत्र है।
3. कम्पनी द्वारा किया गया कोई कार्य, जो सीमा नियम के क्षेत्र से बाहर है, पूर्णतः व्यर्थ है तथा इसे अंशधारियों के सम्पूर्ण मतों से भी.....................सुधारा जा सकता है।
4. .... द्वारा सीमित कम्पनी द्वारा पार्षद अन्तर्नियम की तालिका 'अ' (A) को अपनाया जाता है।

(ब) सही/गलत

1. पार्षद अन्तर्नियम का निर्माण प्रत्येक कम्पनी के लिये अनिवार्य है।
2. बाह्य पक्ष, जो कम्पनी से व्यवहार कर रहा है, से अपेक्षा की जाती है कि उसे पार्षद सीमा नियम तथा पार्षद अन्तर्नियम का ज्ञान है।
3. आन्तरिक प्रबंध का सिद्धान्त तथा रचनात्मक सूचना का सिद्धान्त दोनों समान पद है।
4. पार्षद अन्तर्नियम कम्पनी की राजाज्ञा है।

4.13 बोध प्रश्नों के उत्तर

(अ) 1. विशेष प्रस्ताव 2. लोक 3. नहीं 4. अंशो

(ब) 1. गलत 2. सही 3. गलत 4. गलत

4.14 स्वपरख प्रश्न

1. पार्षद अन्तर्नियम क्या है? इसकी विषय वस्तु क्या है?
2. पार्षद सीमा नियम तथा पार्षद अन्तर्नियम में अन्तर कीजिये।
3. पार्षद अन्तर्नियम कम्पनी के परस्पर सदस्यों तथा कम्पनी और सदस्यों के मध्य संविदा का निर्माण करता हैं स्पष्ट कीजिये।

4. रचनात्मक सूचना का सिद्धान्त तथा आन्तरिक प्रबंध के नियम को समझाइये। आन्तरिक प्रबंध के नियम के क्या अपवाद हैं?
5. पार्षद अन्तर्नियम के बाध्यकारी प्रभावों का वर्णन कीजिये। पार्षद अन्तर्नियम के संशोधन के सम्बंध में कम्पनी की शक्ति की सीमाओं का उल्लेख कीजिये।

4.15 सन्दर्भ पुस्तकें

1. पी0पी0एस0 गोगना, मर्केन्टाइल ला, एस0 चन्द्र एण्ड कम्पनी, नई दिल्ली।
2. एन0डी0 कपूर, कम्पनी लॉ, सुल्तान चन्द्र एण्ड सन्स, नई दिल्ली।
3. एस0सी0 अग्रवाल, कम्पनी लॉ, धनपत राय पब्लिकेशन, नई दिल्ली।
4. एस0एस0 गुलशन व जी0के0 कपूर, बिजनेस लॉ व कम्पनी लॉ, न्यू ऐज इण्टरनेशनल पब्लिशर्स, नई दिल्ली।
5. के0आर0 बालचन्द्री, बिजनेस लॉ फॉर मैनेजमेन्ट, हिमालय पब्लिकेशन हाउस, नई दिल्ली।
6. एस0के0 अग्रवाल, बिजनेस लॉ, गलगोटिया पब्लिशिंग कम्पनी, नई दिल्ली।
7. एम0सी0 पुच्छल व दीपा प्रकाश, बिजनेस लेजीलेशन फॉर मैनेजमेन्ट, विकास पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली।

इकाई 5 प्रविवरण

इकाई की रूपरेखा

5.1 प्रस्तावना
5.2 प्रविवरण का अर्थ तथा विषय वस्तु
5.3 स्थानापन्न प्रविवरण
5.4 प्रविवरण में असत्य कथन पर दायित्व
5.5 शेल्फ प्रविवरण
5.6 सूचना ज्ञापन
5.7 सारांश
5.8 शब्दावली
5.9 बोध प्रश्न
5.10 बोध प्रश्नों के उत्तर
5.11 स्वपरख प्रश्न
5.12 सन्दर्भ पुस्तकें

उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् आप इस योग्य हो सकेंगे किः–

- कम्पनी के प्रविवरण की परिभाषा तथा प्रविवरण की विषय वस्तु का वर्णन कर सकें।
- स्थानापन्न प्रविवरण के महत्व की विवेचना कर सकें।
- प्रविवरण में गलत कथन पर दायित्व की व्याख्या कर सकें।
- शेल्फ प्रविवरण तथा सूचना मेमोरैण्डम का वर्णन कर सकें।

5.1 प्रस्तावना

निजी तौर पर लोक कम्पनी के निदेशक, कम्पनी के समामेलन का प्रमाण पत्र प्राप्त करने के बाद निजी तौर पर यदि कम्पनी लिए आवश्यक पूँजी जुटाने में असमर्थ रहते हैं तो जनता को अंशो तथा ऋणपत्रों को बेचकर पूजी इकट्ठा करते हैं। यह कार्य प्रविवरण के निर्गमन द्वारा किया जाता है। प्रविवरण जनता से पूँजी जुटाने के लिये कम्पनी द्वारा निर्गमित प्रलेख है। सारांशतः प्रविवरण कम्पनी की सम्भावनायें तथा उद्देश्य तय करता है, जिसके लिये पूँजी एकत्रित की गयी है, प्रविवरण से प्रस्तावित कम्पनी में विनियोजकों का इण्टरनेट ध्यान आकर्षित किया जाता है तथा कम्पनी के अंशों तथा ऋणपत्रों के विनियोग हेतु प्रोतसाहित किया जाता है।

5.2 प्रविवरण का अर्थ तथा विषय–वस्तु

एक प्राइवेट कम्पनी में उसमें अन्तर्नियमों द्वारा अंशों तथा ऋणपत्रों में विनियोग हेतु जनता को आमंत्रित करने करने पर प्रतिबंध होता है, जबकि लोक कम्पनी, जनता को पूँजी सहभागिता हेतु आमंत्रित कर सकती है। कम्पनी, प्रविवरण के माध्यम से जनता को अंशों एवं ऋणपत्रों में विनियोग हेतु आमंत्रित करती है। प्रविवरण एक प्रलेख है जो भावी विनियोजकों को कम्पनी के भविष्य की जानकारी देता है तथा

कम्पनी के पूँजी लेने के उद्देश्य के बारे में बताता है जिससे भावी विनियोजक, कम्पनी में अंशों तथा ऋणपत्रों में पूँजी विनियोजन के संबंध में निर्णय लेता है। प्रविवरण से भावी विनियोजकों को कम्पनी के विभिन्न पक्षों के संबंध में उपयोग जानकारी मिलती है। एक लोक कम्पनी के लिये प्रविवरण का निर्गमन अनिवार्य नहीं है। यदि प्रवर्तक, पूँजी की व्यवस्था अपने मित्रों एवं संबंधियों से करने के प्रति आश्वस्त है, तो उन्हें प्रविवरण के निर्गमन की आवश्यकता नहीं है, ऐसी दशा में, कम्पनी को रजिस्ट्रार के यहाँ स्थानापन्न प्रविवरण दाखिल करना होता है।

कम्पनी अधिनियम 1956 की धारा 2(36) के अनुसार प्रविवरण से आशय ऐसे प्रविवरण–पत्र, सूचना, परिपत्र, विज्ञापन, अथवा अन्य प्रलेख से है (जो जनता से निक्षेप आमन्त्रि करता है अथवा) जो एक समामेलित संस्था के अंशों या ऋण–पत्रों का क्रय करने के लिए जनता से अभिदान या प्रस्ताव आमन्त्रित करता है। अतः प्रविवरण जनता को अभिदान के लिये आमंत्रण है, जो एक समामेलित संस्था के उद्देश्यों एवं ऋणपत्रों के क्रय करने के लिये जनता से अभिदान आमंत्रित करता है। प्रविवरण, प्रस्ताव नहीं है क्योंकि स्वीकृति पर वह संविदा बना जाता, जो कानून द्वारा प्रवर्तनीय होता है। प्रविवरण जनता को कम्पनी के अंशों में एवं ऋणपत्रों के निवेश लिये प्रस्ताव का आमंत्रण है, तथा यह कम्पनी पर है कि प्रस्ताव स्वीकार करे या नहीं।

प्रविवरण, सूचना, परिपत्र, विज्ञापन आदि के रूप में एक लिखित प्रलेख है। मौखिक आमंत्रण, प्रविवरण की श्रेणी में नहीं आता है। पी0 नाथ सन्याल बनाम काली कुमार दत्त, ए0आई0आर0 1925, कलकत्ता 714 के बाद में एक समाचार पत्र विज्ञापन दिया गया जो निम्न था– ''कम्पनी के प्रविवरण की शर्तों के अनुसार कुछ अंश विक्रय हेतु उपलब्ध है, जो आवेदन द्वारा प्राप्त किया जा सकता हैं'' बाद में इसे प्रविवरण माना गया।

लोक निर्गम–

'निर्गमन' से आशय जनता को प्रविवरण के निर्गमन से है, परन्तु प्रविवरण का निर्गमन जनता को किया गया या नहीं, यह प्रत्येक मामले की परिस्थितियों पर निर्भर करता है–

केस–1 प्रविवरण, जिस पर ''केवल व्यक्तिगत वितरण हेतु' अंकित है, की कुछ प्रतियाँ) एक गैस कम्पनी के अंशधात्रियों के मध्य वितरित की गयी, इसे जनता में विज्ञापित नही किया गया। उसमें यह कथन था कि इसकी प्रति कम्पनी रजिस्ट्रार के यहाँ दाखिल की गयी है। यह निर्धारित हुआ कि प्रविवरण जनता का अर्थों के लिये आमंत्रण था। (साउथ ऑफ इग्लैण्ड नेचुरल गैस कम्पनी बनाम पेट्रोलियम कम्पनी लिमिटेड (1911)

केस–2 प्रविवरण की 1000 प्रतियाँ, जिस पर ''पूर्णतः निजी तथा गोपनीय'' अंकित था, मुद्रित करायी गयी। इसकी 200 प्रतियाँ निदेशकों ने स्वयं लिया तथा प्रवर्तकों के मित्रों व संबंधियों को वितरित किया यह अभिनिर्धारित हुआ हकि यह जनता को आमंत्रण नहीं थां (शैरवेल बनाम कम्बाइन्ड आइ0एम0 सिंडीकेट (1407)

मामला– कम्पनी के संचालकों द्वारा एक प्रलेख, प्रविवरण के रूप में तैयार किया गया तथा इस पर पूर्णतः निजी तथा गोपनीय शब्द अंकित था। इस प्रलेख में कम्पनी

अधिनियम द्वारा निर्धारित सभी महत्वपूर्ण तथ्यों का विवरण नहीं दिया गया था। इसे जनता के बीच विज्ञापित नही किया गया। कम्पनी के सह–संचालक द्वारा इसे अधिवक्ता को भेजा गया। अधिवक्ता ने इसे अपने मुवक्किल को दे दिया। मुवक्किल ने इसे अपने संबंधी को भेज दिया। इस प्रकार प्रलेख, संचालक के मित्रों के छोटे समूह में वितरित हो गया। इस प्रकार निर्धारित हुआ कि प्रलेख को प्रविवरण नहीं कहा जा सकता है। (लैश बनाम लिण्डे)। यह आवश्यक नहीं कि प्रविवरण का निर्गमन कम्पनी द्वारा ही किया जाना। इसका निर्गमन कम्पनी के एजेण्ट जैसे– लिस्टिंग हाउस भी कम्पनी की तरफ से कर सकते हैं।

प्रविवरण निर्गमन हेतु आवश्यक नियम–

प्रविवरण निर्गमन को वैध बनाने के लिये निम्न वैधानिक औपचारिकताओं को संतुष्ट होना चाहिये–

1. सभी संचालकों द्वारा हसताक्षरित तथा तिथिबद्ध प्रविवरण की प्रति रजिस्ट्रार के यहाँ पंजीकृत होना चाहिये। पंजीकरण के लिये दी गयी प्रति के साथ निम्न प्रपत्र संलग्न होना चाहिये–
   - (i) विशेषज्ञों की लिखित सहमति, यदि प्रविवरण में रिपोर्ट छपी हो। ऐसे विशेषज्ञ कम्पनी के प्रबंधन या प्रवर्तन से असम्बद्ध हो।
   - (ii) प्रत्येक महत्वपूर्ण संविदा तथा प्रत्येक ऐसी संविदा, जो प्रबंधकीय कर्मचारियों की नियुक्ति तथा पारिश्रमिक से संबंधित हो, की प्रति।
   - (iii) कम्पनी के अंकेक्षकों तथा लेखपालकों की लाभ–हानि, सम्पत्ति व दायित्व, लाभाँश की दरों आदि से संबंधित रिपोर्ट में समायोजन (चाहिये) से संबंधित लिखित कथन
   - (iv) कम्पनी के अंकेक्षकों, विधिक सलाहकार, बैंकर तथा दलाल आदि भी लिखित सहमति (धारा 60)
2. प्रविवरण का निर्गमन, उसकी प्रति के पंजीकरण हेतु सुपुर्दगी में 90 दिन के भीतर हो जाना चाहये। यदि निर्धारित अवधि में प्रविवरण निर्गमित नहीं किया जाता है तो प्रविवरण रजिस्ट्रार के यहाँ गेर पंजीकृत माना जायेगा। इस स्थिति में कम्पनी तथा प्रत्येक व्यक्ति, जो जानबूझकर गैर पंजीकृत प्रविवरण के निर्गमन में पक्षकार है, 50000/– रू0 तक के दण्ड का भागी होगा।

   प्रविवरण ऐसा प्रलेख है, जिससे भावी निवेशक कम्पनी की भावी संभावनाओं के बारे अनुमान लगाकर कम्पनी में विनियोग से संबंधित निर्णय लेता है। एक छोटा असत्य कनि भावी निवेशकों का ध्यान भटका कम्पनी अधिनियम ने प्रविवरण निर्गमन से संबंधित वृहद संख्या में विनियमों को बनाया है। यह नियम प्रवर्तकों के कपट से जनता के हितों की रखा के लिये बनाये गये हैं। सरकार ने प्रविवरण का प्रारूप कम्पनी अधिनियम 1956 को अनुसूची II में दिया है। प्रविवरण निग्रमन के प्रावधानों के अनुपालन न करने पर अपराध माना जायेगा तथा यह जुर्माना या कारावास दण्ड या दानों से

दण्डनीय होगा। इसलिये प्रविवरण को बनाते समय बड़ी सावधानी रखनी चाहिये।

कम्पनी अधिनियम की धारा 56 के अनुसार प्रत्येक प्रविवरण में अधिनियम की अनुसूची II में उल्लिखित बातों को होना चाहिये। यह अनुसूची तीन भागों में विभाजित है। भाग–I तथ्यों के प्रकटीकरण, भाग–II रिपोर्ट से तथा भाग–III भाग–I व II की व्याख्या है।

भाग–I

1. **सामान्य सूचना**

   यह शीर्षक निम्न के संबंध में है–

   1. कम्पनी के पंजीकृत कार्यालय का नाम व पता
   2. उस सकन्ध त्रिपाठी या विपणियों का नाम जहॉ कम्पनी ने अपनी प्रतिभूतियों के सूचीयन हेतु आवेदन किया है।
   3. निर्गम राशि की वापसी की घोषणा, यदि निर्गम बन्द होने के 120 दिनों अन्दर 90 प्रतिशत न्यूनतम अभिदान राशि न प्राप्त हुयी हो।
   4. आवंटन पत्र/वापसी के जारी होने की घोषणा तथा विलंब की दशा में निर्धारित दर से ब्याज (धारा 73)
   5. निर्गम जारी होने की तिथि
   6. निर्गम बन्द होने की तिथि
   7. कम्पनी के अंकेक्षकों तथा लीड प्रबंधकों के नाम व पता
   8. अंशों/ऋण पत्रों के प्रस्तावित निर्गम के संबंध में CRISIL या अन्य श्रेणीयन संस्था द्वारा किया श्रेणीयन (Rating)
   9. अभिगोपकों के नाम व पता तथा उसके द्वारा अभिगोपित राशि

2. **कम्पनी का पूँजी ढाँचा–**

   1. अधिकृत, निर्गमित, प्रार्थित तथा दत्त पूँजी
   2. वर्तमान निर्गम का आकार, प्रवर्तकों की प्राथमिक आवंटन हेतु पृथक आरक्षण
   3. वर्तमान निर्गम की शर्तें

   1. भुगतान की शर्तें 2. आवेदन कैसे करना है 3. कोई विशेष कर लाभ

4. **निर्गम का विवरण**

   1. उद्देश्य 2. प्रोजेक्ट लागत 3. वित्तीयन के माध्यम

5. **कम्पनी प्रबंध तथा प्रोजेक्ट**

   1. कम्पनी का इतिहास, उसके मुख्य उद्देश्य तथा वर्तमान व्यवसाय
   2. प्रवर्तक तथा उनकी पृष्ठभूमि
   3. प्रोजेक्ट का स्थान
   4. समझौते (यदि कोई हो)
   5. उत्पाद का स्वभाव, निर्यात संभावनायें
   6. भावी संभावनायें

7. स्कन्ध विपणि की तिथि

6. विगत 3 वर्षों में समान प्रबंधन के अन्तर्गत सूचीबद्ध कम्पनियों द्वारा किये गये पूँजी निर्गम से संबंधित निर्धारित विवरण।

7. अनुसूची XIII के अन्तर्गत कम्पनी के संचालकों या कम्पनी के विरूद्ध आपराधिक या वित्तीय माले से संबंधित वाद या कार्यवाही।

8. क्षति तत्वों (rish Factor) के प्रति प्रबंधन का दृष्टिकोण।

भाग–II

अनुसूची II का भाग II कम्पनी की विस्तृत जानकारी देता है। यह भाग भी तीन भागों में विभाजित है, सामान्य जानकारी, वित्तीय जानकारी तथा वैधानिक व अन्य जानकारी।

सामान्य जानकारी में निम्न तथ्यों की जानकारी समावेशित है–

1. कम्पनी के संचालकों, अंकेक्षकों, अधिवक्ता निर्गम प्रबंधक, रजिस्ट्रार, बैंकर, का निर्गमन के संबंध में सहमति।
2. विगत 3 वर्षों में संचालकों तथा अंकेक्षकों में परिवर्तन, यदि कोई हो, तथा उसके कारण
3. अंश आवंटन तथा प्रमाण पत्र निर्गमन की प्रक्रिया ताा समय सारिणी
4. निर्गम से संबंधित कम्पनी के सचिव, वित्तीय सलाहकार, लीड प्रबंधक, सह प्रबंधकों, अंकेक्षकों, बैंकर तथा दलालों के नाम व पता
5. निर्गम में प्राधिकारी तथा प्राप्ति प्रस्ताव के विवरण

वित्तीय जानकारी में निमन प्रतिवेदन सम्मिलित हैं:–

1. कम्पनी के लाभ–हानि, समपत्तियों, देनदारी तथा प्रविवरण केनिर्गमन से पूर्व के 5 वर्षों में से प्रत्येक वर्ष में वितरित लाभॉश के संबंध में अंकेक्षकों का प्रतिवेदन।
2. विगत 5 वर्षों के कम्पनी में लाभ हानि के संबंध में (नाम सहित) अंकेक्षक को प्रतिवेदन।

विधिक तथा अन्य जानकारी में निम्न शामिल है:–

1. न्यूनतम अभिदान, 2. निर्गम व्यय, 3. अभिगोपन कमीशन तथा दलाली, 4. पिदले लोक या अधिकार निर्गम, यदि कोई हो, आवंटन, वापसी की तिथि, अधिमूल्यन, दर का विवरण, 5. रोकड़ के अतिरिक्त अन्य प्रकार से आंशों का निर्गम, 6. पिछले निर्गम पर कमीशन या दलाली, 7. सम्पत्ति के क्रय का विवरण, यिद हो, 8. सम्पत्तियों का पुनर्मूल्यांकन, 9. महतवपूर्ण संविदा तथा समय व स्थान जहाँ ऐसे प्रपत्र निरीक्षण हो सकता है, 10. निर्गमित ऋणपत्र तथा शोधनीय पूर्वाधिकार अंश या अन्य प्रपत्र की प्रविवरण निर्गमित होने की तिथि पर अदत्त राशि।

अनुसूची II का भाग III

इस भाग के प्रावधान अनुसूची II के भाग I तथा भाग II पर लागू होते हैं। इन प्रावधानों का सारांश निम्न है–

1. ऐसी कम्पनी जो विगत 5 से कम वित्तीय वर्षों से कम अवधि से व्यवसाय कर रही है, की दशा में, अनुसूची में भाग II के विवरण से आशय उन वर्षों से है जिनमें कम्पनी ने व्यवसाय किया है।
2. ऐसे लेखापालक या लेखापालकों द्वारा भाग II का प्रतिवेदन, जो कम्पनी अधिनियम के अनतर्गत कम्पनी में अंकेक्षक नियुक्त होने की योग्यता रखते हों।
3. समय तथा स्थान, जहाँ सभी आर्थिक चिट्ठे तथा लाभ–हानि खाते, महत्वपूर्ण संविदा तथा प्रपत्र आदि का निरीक्षण किया जा सकता है।
4. अन्त में यह घोषणा कि कम्पनी अधिनियम 1956 के प्रावधानों तथा सरकार द्वारा जारी दिशा निर्देशों का पालन किया गया है तथा प्रविवरण में ऐसा कोई कथन नहीं किया गया है जो कम्पनी अधिनियम 1956 के नियमों का उल्लंघन करता हो।

5.3 स्थानापन्न प्रविवरण

एक कम्पनी जो अपने वित्तीयन में लिये जनता के पास नहीं जाती है तथा निजी संसाधनों से पूँजी की व्यवस्था करते हैं। ऐसी दशा में जनता को प्राविवरण निर्गमन की आवश्यकता नही है। परन्तु कम्पनी के प्रवर्तक को प्रविवरण की तरह ही एक प्रपत्र तैयार करना आवश्यक है, जिसे अस्थानापन्न प्रविवरण कहते हैं यह प्रपत्र अधिनियम की अनुसूची–III में दिये गये प्रारूप में होना चाहिये तथा इसमें वह सभी जानकारी होनी चाहिये जो प्रविवरण में आवश्यक है। यदि कोई निजी कम्पनी अपने को लोक कम्पनी में परिवर्तित करती है तो उसे प्रविवरण या स्थानापन्न प्रविवरण का निर्गमन करना आवश्यक है।

अंशों के प्रथम आवंटन के कम से कम तीन दिन पूर्व प्रपत्र को पंजीकरण के लिये रजिस्ट्रार के यहाँ भेजना चाहिये। यह पूँजी निर्गम की शर्तों के अधिकृत रिकार्ड को संरक्षित करने के लिये किया जाता है। यह प्रपत्र प्रत्येक निदेशक या प्रस्तावित निदेशक या उसके एजेण्ट द्वारा हस्ताक्षरित होना चाहिये। यदि कोई कम्पनी स्थानापन्न प्रविवरण को सुपुर्द करने में असफल रहती है, तो वह अंशों व ऋणपत्रों का आवंटन नहीं कर सकती है।यदि ऐसा आवंटन किया गया है तो वैधानिक सभा के दो माह के अन्दर या वैधानिक सभा न होने पर आवंटन के दो माह के अन्दर आवंटन द्वारा Notify करने पर व्यर्थनीय होगा।

यदि कम्पनी उपरोक्त शर्तों को पूर्ण करने में असफल रहती है तो कम्पनी तथा उसका प्रत्येक अधिकारी, जो उल्लंघन के लिये दोषी है, 1000/– रू0 तक के जुर्माने से दण्डनीय होगा।

उपरोक्त प्रावधान निजी कम्पनी पर लागू होते हैं। (धारा 70)

5.4 प्रविवरण में असत्य कथन पर दायित्व

प्रविवरण तैयार करने के स्वर्णिम नियम : प्रविवरण, कम्पनी तथा अंशों/ऋण पत्रों के क्रेता के मध्य संविदा का आधार तैयार करता है। ऐसे व्यक्ति कम्पनी के अन्दर है उन्हें संस्था की वर्तमान स्थिति तथा भविष्य की संभावना के बारे पूर्ण

जानकारी होती है तथा निवेशन जनता को जानकारी नहीं होती है। यह उचित होगा कि कम्पनी के प्रवर्तकों को अपने ज्ञान के अनुसार न केवल संस्था में सभी मामलों का प्रकटीकरण करना चाहिये, बल्कि निवेशक के विभाग को प्रभावित करने मामलों को शुद्ध तथा पक्षपात रहित होकर प्रकट करें। एक प्रविवरण को सत्य केवल सत्य तथा सत्य के अतिरिक्त कुछ भी नहीं होना चाहिये। इसके अतिरिक्त प्रविवरण में प्रकट करने योग्य तथ्य को छिपाना नही चाहिये। इसे प्रविवरण तैयार करने का स्वर्णिम नियम कहा जाता है। इसका प्रतिपादन न्यू नस्तिक आदि कम्पनी बनाम दी मुगरिज में वी0सी0 किण्डरस्ले द्वारा किया गया।

असत्य कथन क्या है?

यह जानना आवश्यक है कि असत्य कथन क्या है? कोई कथन असत्य है या नहीं, इसका निर्णय कथन की संपूर्णता तथा कथन के समय वातावरण पर निर्भर करता है। धारा 65(1) के अनुसार, प्रविवरण का कोई कथन असत्य माना जायेगा, यदि कथन जिस रूप तथा संदर्भ में कहा गया है mislead (धोखा देता है) कोई कथन किसी असत्य कथन में गलत कथन, कथन छिपाना या मिटाना सम्मिलित है। जहाँ कोई महत्वपूर्ण तथ्य या मामला प्रविवरण में नहीं दिया गया है तो ऐसी त्रुटि, असत्य कथन की श्रेणी में मानी जायेगी। यदि सम्पूर्ण प्रविवरण के संदर्भ में तथ्य का गलत अर्थ प्रस्तुत होता है, तो साहित्यिक रूप से सही कथन होने पर भी, संविदा को Set aside कर दिया जायेगा।

एक व्यक्ति जो प्रविवरण में अध्ययन के परिणामस्वरूप अंशों को ले रहा है प्रविवरण के कथनों का परीक्षण करने को बाध्य नहीं है शुद्धता तथा कथन के असत्य होने पर संविदा त्याग सकता है, भले ही उसके पास अशुद्धता को खोलने के साधन उपलब्ध रहे हों। गलत कथन या भ्रमित प्रविवरण में तथ्य का गलत कथन होना चाहिये, विधि का नहीं।

वाद कौन कर सकता है–

जहाँ किसी व्यक्ति ने प्रविवरण पर विश्वास करके अंशों का क्रय किया था जो प्रविवरण में छूटने के कारण या गलत कथन होने कें कारण भ्रमित करने वाला है, की दशा में निम्न के विरूद्ध विधिक उपचार प्राप्त होगाः'–

1. कम्पनी, 2. प्रत्येक निदेशक, 3. प्रत्येक व्यक्ति जिसका नाम प्रस्तावित निदेशक के रूप में प्रविवरण में है, 4. प्रत्येक प्रवर्तक तथा, 5. प्रत्येक व्यक्ति जो प्रविवरण निर्गमित करने के लिये अधिकृत थें

सबूत का भार– आबंटी को सिद्ध करना होगा–

1. तथ्य गलत ढंग से भ्रमित करता हैं,
2. वह महत्वपूर्ण तथ्य से संबंधित था
3. उस गलत कथन पर कार्य किया हो
4. इसके फलस्वरूप उसे क्षति हुआ

1. **कम्पनी के विरूद्ध उपचार–** व्यक्ति जिसे अंश लेने के लिये भ्रमित किया गया। वह 1. संविदा त्याग सकता है, 2. हर्जाने का दावा कर सकता है।

1. संविदा के परित्याग का उपचार– जहॉ किसी व्यक्ति ने प्रविवरण पर विश्वास करके अंशों का क्रय किया, परन्तु प्रविवरण में असत्य या भ्रामक कथन है जो कपटपूर्ण नहीं है, तो वह संविदा का परित्याग कर सकता है। यह अधिकार इस आधार पर मिला है कि महत्वपूर्ण तथ्यों के असत्य कथन से प्रभावित संविदा व्यर्थनीय होती है तथा वह पीड़ित पक्षकार की इच्छा पर परित्याग कर सकता है। अनुबंध के परित्याग का अधिकार तभी उपलब्ध होगा, जब निम्न सिद्ध कर दे–

(i) **प्रविवरण का निर्गमन कम्पनी अधिकृत अन्य व्यक्ति द्वारा किया गया था–** यह तथ्य स्थापित करना होगा कि प्रविवरण का निर्गमन कम्पनी द्वारा या अन्य प्राधिकृत व्यक्ति द्वारा किया गया था। यदि प्रविवरण का निर्गमन प्रवर्तकों द्वारा किया गया तथा संचालन मण्उल ने उसे ratified तथा adopt किया, तो कम्पनी उत्तरदायी होगी।

(ii) **कथन को असत्य होना चाहिये–** प्रविवरण में असत्य कथन होना चाहिये, चाहे वह कपटपूर्ण हो या Innocent हो। गलत कथन उस समय होता है जबकि महत्वपूर्ण तथ्यों का असत्य कथ्नि मिला हो या उसे छिपाया गया हो। धारा 65 के अनुसार प्रविवरण में कोई कथन असत्य माना जायेगा यदि वह जिस संदर्भ तथा प्रारूप में सम्मिलित किया गया वह भ्रामक है। इस धारा में यह भी प्रावधान है कि प्रविवरण में किसी तथ्य का छूट जाना भ्रामक की श्रेणी में सम्मिलित होगा तथा ऐसी त्रुटि से प्रभावित प्रविवरण असतय कथ्नि वाला तथा भ्रामक माना जायेगा।

(iii) **कथन महत्वपूर्ण होना चाहिये–** प्रविवरण में शासित असत्य कथन, अंशों /ऋणपत्रों के क्रय की दृष्टि से महत्वपूर्ण है। कोई कथन महत्वपूर्ण हो या नहीं यह प्रत्येक मामले में तथ्य पर निर्भर करता है। कोई असत्य कथन महत्वपूर्ण माना जायेगा यदि प्रतिभूतियों में क्रय का निग्रय उसको वह कथन प्रभावित करता है।

(iv) असत्य/भ्रामक कथन ने अंशधारी को अंश क्रय करने के लिये प्रेरित किया तथा उसने कथन पर विश्वास कर अंश के लिये आवेदन किया था परन्तु यह आवश्यक नहीं है कि उसने विश्वास करने में पूर्व उसका सत्यापन किया हो। संविदा का त्याग तभी किया जा सकता है जबकि अंशों को क्रय करने के लिये प्रभावित करने वाले कारकों में प्रविवरण का भ्रामक होना है। जहाँ किसी व्यक्ति ने भ्रामक/असत्य प्रविवरण को अनदेखा करते हुये केवल स्वतंत्र प्रतिवेदन पर विश्वास किया, तो वह भ्रामक प्रविवरण की शिकायत नहीं कर सकता है।

(v) **भ्रामक/असत्य प्रविवरण तथ्यों के विषय में होना चाहिये, विधि में नहीं–** जिस भ्रामक/असत्य कथन से प्रेरित होकर अंशों का क्रय किया गया, वह तथ्यों के संबंध में होना चाहिये, मात्र विचारों या अनुमानों का प्रकटीकरण नहीं होना

चाहिये। प्रकटीकरण केवल वत्रमान तथ्यों का होना चाहिये। भावी लाभों के गणना वर्तमान तथ्यों का कथन नहीं है।

तथ्यों का भ्रामक/असत्य कथन अंशधारी को संविदा के त्याग का अधिकार देता है, परन्तु विधि का भ्रामक/असत्य कथन संविदा में त्याग का आधार नहीं हो सकता है।

(vi) संविदा के त्याग के लिये अंशधारी ने तवरित कार्यवाही की– इसके लिये अंशधारी को न्यायोचित समय में तथा कम्पनी के समापन के पूर्व कार्यवाही करनी चाहिये।

अनुबंध के परित्याग के अधिकार से मुक्ति निम्न मामलों में प्रतिभूतिधारी को अनुबंध परित्याग का अधिकार नहीं होगा।

1. **बिना कारण देरी–** प्रविवरण की भ्रामकता या असत्य कथन की जानकारी के बाद भी प्रतिभूतिधारी द्वारा उपयुक्त समय में कार्यवाही न करने पर वह परित्याग का अधिकार खो देता है। अंशधारी को संविदा को स्वीकार या अस्वीकार करने के बारे में अपनी राय बना लेनी चाहिये।
2. **स्वीकार करना–** प्रविवरण की भ्रामकता/असत्य कथन के विषय में जानकारी होने के बाद भी यदि अंशधारी, अंशों के क्रय की संविदा को स्वीकार कर लेता है तो उसके बाद वह संविदा का परित्याग नहीं कर सकता हो। यद्यपि संविदा की स्वीकृत स्पष्ट या गर्भित हो सकता है।
3. **समापन का प्रारम्भ–** यदि कम्पनी का समापन का प्रारम्भ होने तक अंशधारी द्वारा संविदा का त्याग नहीं किया जाता है तो वह परित्याग का अधिकार खो देता है।

2. **हर्जाने का अधिकार–** यदि यह सिद्ध हो जाता है असत्य/भ्रामक प्रविवरण से कपट हुआ है तो पीड़ित पक्षकार कम्पनी पर हर्जाने के लिये वाद करने का अधिकारी है। यह उपचार कम्पनी के समापन पर जाने पर भी उपलब्ध रहता है। वह कम्पनी के विरूद्ध हर्जाने तथा अंशों की प्राप्ति एक साथ नहीं कर सकता है। जहाँ कम्पनी में समापन का प्रारम्भ होने के कारण परित्याग संभव नहीं है, वहाँ हर्जाने की कार्यवाही भी नहीं की जा सकती है।

ऐसी कार्यवाही उन व्यक्तियों जैसे संचालों या प्रवर्तकों आदि के विरूद्ध की जायेगी जो प्रविवरण में कपटपूर्ण असत्य कथन के लिये उत्तरदायी है। यदि हर्जाने की कार्यवाही प्रवर्तकों तथा संचालकों के विरूद्ध की जाती है तो वहाँ संविदा में परित्याग की आवश्यकता नहीं होती है।

II. संचालकों, प्रवर्तकों तथा विशेषों के विरूद्ध उपचार– कोई भी व्यक्ति जिसने असत्य/भ्रामक प्रविवरण पर विश्वास कर अंशों का क्रय किया है, निमन पर वाद कर सकता है–

1. प्रत्येक निदेशक, 2. प्रत्येक व्यक्ति जिसका नाम प्रविवरण में प्रस्तावित निदेशकके रूप में दर्ज है, 3. प्रत्येक प्रवर्तक, 4. प्रत्येक व्यक्ति जो प्रविवरण के निर्गमन के लिय अधिकृत था। पीड़ित पक्षकार निम्न पर दावा कर सकता है।

1. **क्षतिपूर्ति (धारा 62)–** कम्पनी के निदेशक, प्रवर्तक तथा अन्य व्यक्ति जो प्रविवरण निग्रमन के लिये उत्तरदायी है, वे सभी असत्य कथन वाले प्रविवरण से प्रेरित होकर अंशों का क्रय करके हानि उठाने वाले व्यक्ति को, क्षतिपूर्ति के लिये दायी हैं यह महत्वपूर्ण नहीं है कि निदेशक ने प्रविवरण देखा है या नहीं तथा उसका प्रविवरण निर्गमन को अधिकृत करना ही पर्याप्त है। इसके अतिरिक्त आबंटी को यह सिद्ध करना आवश्यक नहीं है कि निदेशक को प्रविवरण के विषय में ज्ञान था।

दायित्व का आशय पीड़ित पक्षकार को क्षतिपूर्ति के भुगतान से है। मुआवजे का मापन, भारतीय अनुबंध अधिनियम की धारा 73 की भांति होता है। अंश आवंटन की तिथि को अंश का मूल्य तथा अंश/ऋणपत्र प्राप्त करने में चुकाये गये मूल्य के अन्तर के बराबर मुआवजे का भुगतान किया जाता है।

निदेशकों, प्रवर्तकों आदि के बचाव (धारा 62 (2) के अन्तर्गत निम्न दशाओं में प्रविवरण निग्रमन के लिये उत्तरदायी प्रत्येक व्यक्ति अपने दायित्व से मुक्त होंगे अर्थात वे क्षतिपूर्ति के लिये उत्तरदायी नहीं होंगे, यदि–

(i) **सहमति को वापस लेना–** निदेशक आदि अपने दायित्व से मुक्त हो सकते हैं यदि वे सिद्ध कर दें कि प्रविवरण निर्गमन के पूर्व उन्होंने अपनी सहमति वापस ले ली थी तथा अनुमति के बिना प्रविवरण का निर्गमन हुआ था।

(ii) **बिना जानकारी के प्रविवरण निर्गमन–** निदेशक दायी नहीं होगा यदि प्रतिवरण उसकी सहमति के बिना जारी किया गया था तथा इसकी जानकारी होने पर उसने जनता में इसकी सूचना दे दी थी।

(iii) **असत्य कथन की जानकारी न हो–** कभी–कभी निदेशक को प्रविवरण के असत्य कथन की जानकारी नहीं होती है। ऐसे में निदेशक यह सिद्ध करके अपना बचाव कर सकता है कि प्रविवरण निर्गमन के बाद, परन्तु आवंटन से पूर्व जैसे ही उसे उसका कथन का पता चला तो उसने अपनी सहमति वापस ले ली थी तथा इस सम्बन्ध में सार्वजनिक सूचना दे दी थी।

(iv) **विश्वास करने का उचित कारण–** एक निदेशक कभी भी अपना बचाव कर सकता है यदि वह सिद्ध कर दे कि उसके पास विश्वास करने का पर्याप्त कारण था तथा अंश व ऋण पत्र के आवंटन तक कथन के साथ होने का विश्वास था।

(v) **विशेषज्ञ का कथन–** एक निदेशक तब भी दायी नहीं होगा यदि वह सिद्ध कर दे वह असत्य कथन योग्य तथा अनुभवी विशेषज्ञ द्वारा प्रमाणित किया गया था तथा विशेषज्ञ ने अपनी सहमति वापस नही ली थी।

(vi) **सरकारी प्रलेख की सत्य प्रतिलिपि–** नियोजक तब भी दायी नही होगा यदि वह सिद्ध कर दे कि कथन, सरकारी प्रलेख की सत्य प्रतिलिपि है।

विशेषज्ञ की दायित्व से मुक्ति (धारा 62(3)–

एक विशेषज्ञ दायी नहीं होगा यदि वह सिद्ध कर दे–

(i) उसने प्रविवरण निर्गमन की अपनी सहमति, प्रविवरण कोपंजीकरण हेतु रजिस्ट्रार को सुपुर्दगी से पूर्व लिखित रूप में वापस ले ली थी।

(ii) उसे सुपुर्दगी के पश्चात तथा आवंटन से पूर्व, असत्य कथन के विषय में ज्ञान हुआ तथा उसने सार्वजनिक व लिखित रूप में कारण बताते हुये अपनी सहमति वापस ले ली थी।

(iii) वह कथन बनाने में सक्षम था तथा उसके पास कनि की सतयता पर विश्वास करने के पर्याप्त कारण थें

2. **धारा 56 का अनुपालन न करने पर क्षतिपूर्ति–** धारा 56 के अनतर्गत आवश्यक तथ्य में प्रविवरण में न होने पर, पीड़ित पक्षकार जिसको प्रविवरण की भ्रमकता से हानि हुयी हो, मुआवजे का अधिकारी है।

इस स्थिति में अंशधारी को मुआवजे का अधिकार है, अनुबंध के परित्याग को अधिकार नहीं है। परन्तु जहाँ ऐसे छिपाव से कपट का गठन होता है, तो उसे भारतीय अनुबंध अधिनियम, 1872 की धारा 19 के अनुसार परित्याग का अधिकार होगा।

व्यक्ति दायी नहीं होगा यदि वह सिद्ध कर दे–

a. प्रविवरण में छिपाये गये तथ्यों के बारे में उसे कोई जानकारी नहीं थी।

b. छिपाये गये तथ्य महत्वपूर्ण नहीं थे तथा नयायालय की राय में इसे माफ किया जा सकता है।

3. **सामान्य विधि के अन्तर्गत मुआवजा–** आवंटी, भारतीय अनुबंध अधिनियम 1872 की धारा 19 के सामान्य नियम के अन्तर्गत निदेशकों के विरूद्ध के पद decert की कार्यवाही का सकता है।

सामान्य विधि के अन्तर्गत निम्न उपचार उपलब्ध है–

(i) कम्पनी के विरूद्ध त्याग का अधिकार

(ii) कम्पनी का समापन होना है।

परन्तु वादी 1 अंशधारी का निम्न तथ्यों को स्थापित करना होगा–

a. **कपटपूर्ण कथन का होना–** संचालकों के विरूद्ध कपट के बाद में आवंटी को यह सिद्ध करना होगा कि जिसे कथन पर उसने कार्य किया वह असत्य था तथा संचालकों को इसकी जानकारी थी या ऐसा कथन असावधानीपूर्वक किया गया था। परन्तु यदि संचालकों ने ईमानदारी से प्रविवरण जारी किया था तथा उन्हें कथन के साथ होने का विश्वास था, तो संचालन क्षतिपूर्ति के लिये दायी नहीं होंगे।

b. **गलत/असत्य कथन, विद्यमान महत्वपूर्ण तथ्यों से सम्बद्ध है–** पीड़ित पक्षकार को यह भी सिद्ध करना होगा कि कपटपूर्ण कथन का सम्बन्ध अंशों के क्रय की संविदा में कुल विद्यमान महत्वपूर्ण तथ्यों से थां

c. **वादी का वास्तविक आवंटी होना–** प्रविवरण में गलत कथन के लिये संचालक केवल वास्तविक आवंटदी के प्रति दायी होंगे।

संचालकों का आपराधिक दायित्व–

प्रत्येक व्यक्ति जो असत्य प्रविवरण जारी करने के लिये अधिकृत है, वह 2 वर्ष की सजा या 50000 रू0 जुर्माना या दोनों से दण्डनीय होगा। आरोपी व्यक्तिदायी नहीं होगा यदि वह सिद्ध कर दे कि–

(i) कथन महत्वपूर्ण नहीं था।

(ii) प्रविवरण निर्गमन के समय उसे सत्य मानने मे उसके पास उचित कारण थे।

कपट के लिये दण्ड (धारा 68) कोई व्यक्ति जो व्यक्तियों को कम्पनी में धन लगाने के लिये प्रेरित करने के उद्देश्य से प्रविवरण में असत्य, भ्रामक या कपटपूर्ण कथन करता है तो वह 5 वर्ष तक कारावास या 100000 रू0 या दोनों दण्डनीय होगा।

बनावटी नामों से अंशों का निर्गमन तथा आवंटन (धारा 68–ए)– बैनामी अंशधारिता तथा बनावटी नाम से अंशधारिता समान है। इसका उद्देश्य कर की चोरी है। धारा 68–ए के अनुसार ऐसे मामालों में 5 वर्ष तक के कारावास के दण्ड का प्रावधान है।

5.5 शेल्फ प्रविवरण

कम्पनी (संशोधन) अधिनियम 2000 ने दो धारायें लायी है– धारा 60ए तथा 60बी जो क्रमशः Shelf प्रविवरण' तथा सूचना memorandum' से संबंधित है। कम्पनी (संशोधन) अधिनियम, 2000 ने 'Shelf प्रविवरण' की नयी अवधारणा लाया गया। Shelf प्रविवरण से आशय ऐसे प्रविवरण से है जो किसी बैंक या वित्तीय संस्थाओं द्वारा एक या अधिक प्रतिभूतियों के निर्गमन के लिये जारी किया जाता है।

विभिन्न प्रतिभूतियों के माध्यम से जनता से धन का वित्तीयन एक समय साध्य प्रक्रिया है। फर्म आवंटन के लिये विभिन्न पक्षों से समझौतों को अंतिम रूप देना पड़ता है। सेवी के दिशा निर्देशों के अनुसार प्रविवरण में दिखायी जाने तथ्य वृहद रूप में पूर्णतः जानकारी देने वाले होने चाहिये। वर्तमान समय में विकास संस्थाओं जैसे IDBI तथा ICICI ने सफलतापूर्वक बाण्ड के निर्गमन द्वारा जनता से धन एकत्रित किया है। इस प्रभार के प्रत्येक निर्गमन में प्रविवरण आवश्यक है, जिसमें बहुत समय लगता है। ऐसी संस्थाओं पर भार को कम करने के लिये नई अवधारणा shelf प्रविवरण लायी गयी, जो shelf प्रविवरण के खुलने के प्रथम दिन से एक वर्ष तक वैध होगी। इसके बाद प्रतिभूति निर्गमन हेतु सूचना memorandum, जिसकी विभिन्न मदों में सूचना को अद्यतन किया जाता है, को दाखिल करते हैं। इसमें एक सेट में shelf प्रविवरण तथा सूचना Memorandum मिलकर प्रविवरण बनते हैं को सामान्य जनता में वितरित किया जाता है। इस प्रक्रिया से प्रविवरण में निर्माण तथा निर्गमन पर होने वाले व्ययों में कमी आती हैं धारा 60ए के प्रावधान निमन है–

(i) कोई लोक वित्तीय संस्था, सार्वजनिक बैंक, या अधिसूचित बैंक जिसका मुख्य उद्देश्य वित्तीयन है, को shelf प्रविवरण जारी करना पड़ेगा।

(ii) Shelf प्रविवरण जारी करने वाली कम्पनी को एक वर्ष तक रजिस्ट्रार को प्रस्ताव के प्रत्येक स्तर पर प्रविवरण दाखिल करना आवश्यक नहीं है।

(iii) Shelf प्रविवरण जारी करने वाली कम्पनी को, सभी महत्वपूर्ण तथ्यों जो प्रथम प्रस्ताव तथा बाद के प्रस्ताव के मध्य वित्तीय स्थिति में परिवर्तन आदि विवरण देते हुये सूचना Memorandum दाखिल करना चाहिये।

(iv) सूचना Memorandum के साथ shelf प्रविवरण को जनता को जारी किया जाता है।

(v) सूचना Memoranum अद्यतन प्रतिभूतियों के प्रत्येक प्रस्ताव के समय जारी करना आवश्यक है। Memorandum ने Shelf प्रविवरण मिलकर प्रविवरण बनते हैं।

5.6 सूचना ज्ञापन

सूचना ज्ञापन से आशय प्रविवरण दाखिल करने में पूर्व अपनायी जाने वाली ऐसी प्रक्रिया से है जिसके द्वारा जाति की जाने वाले वाली प्रतिभूतियों की माँग में वृद्धि की जाती है, तथा नोटिस, परिपत्र, विज्ञापन या प्रलेख के माध्यम से ऐसी प्रतिाूतियों के मूलय तथा शर्तों को जाना जाता है। धारा 308 में प्रावधान इस संबंध में निम्न है– (धारा 2(19बी)

5.7 सारांश

कम्पनी के अंशों या ऋण पत्रों के अभिदान के लिये जनता को आमंत्रित करने वाला प्रपत्र, प्रविवरण कहलाता है। प्रविवरण एक ऐसा प्रलेख है जिससे भावी निवेशक कम्पनी में धन निवेश करने के बारे में राय बनाता है। कम्पनी अधिनियम की धारा 56 के अनुसार प्रत्येक प्रविवरण में अधिनियम की सद्वितीय अनुसूची में उल्लिखित मामलों को होना चाहिये। एक अंश पूजी वाली सार्वजनिक कम्पनी जिसके प्रविवरण नहीं जारी किया है को रजिस्ट्रार की स्थानापन्न प्रविवरण अंश आवंटन के 3 दिन पूर्व दाखिल करना आवश्यक है। प्रविवरण जारी करने का स्वर्णिम नियम कहते हैं। यदि प्रविवरण में महत्वपूर्ण तथ्यों को छिपाया या असत्य कथन किया गया तो वहाँ सिविल तथा आपराधिक दायित्व उत्पन्न होगा।

5.8 शब्दावली

- **प्रविवरण–** ऐसा प्रलेख जो कम्पनी के अंशों या ऋण पत्रों के अभिदान के लिये जनता को प्रस्ताव का आमंत्रण देता है, प्रविवरण कहलाता है।
- **Shelf प्रविवरण–** ऐसा प्रविवरण जो बैंक या वित्तीय संस्थाओं द्वारा एक या एक से अधिक प्रतिभूतियों के निर्गमन के लिये जारी किया जाता है, को shelf प्रविवरण कहते हैं।

5.9 बोध प्रश्न

(अ) रिक्त स्थान भरो–

1. मौखिक आमंत्रण प्रविवरण................................. है।

2. प्रविवरण कम्पनी तथा अंश क्रय करने वाले व्यक्ति के माध्य............. का आधार तैयार करता है।
3. प्रविवरण में असत्य कथन, अंश क्रय करने के अनुबंध के..................... तथ्यों से संबंधित होना चाहिये।
4. असत्य कथन वाला प्रविवरण आवंटी को अनुबंध के ....का अधिकार देता है।

(ब) **सही / गलत**

(i) निजी कम्पनी को रजिस्ट्रार के यहां स्थानापन्न प्रविवरण दाखिल करना होता है।
(ii) कम्पनी के समामेलन के पूर्व प्रविवरण नहीं जारी किया जा सकता है।
(iii) जनता को आमंत्रण पद में जनता का प्रत्येक वर्ग सम्मिलित है।
(iv) प्रविवरण तथा 'Shelf प्रविवरण' पर्यायवाची शब्द है।

5.10 बोध प्रश्नों के उत्तर

(अ) 1. नहीं, 2. अनुबंध, 3. महतवपूर्ण 4. परित्याग

(ब) 1. गलत, 2. गलत 3. सही 4. गलत

5.11 स्वपरख प्रश्न

1. प्रविवरण से क्या आशय है, उसकी विषय वस्तु की विवेचना कीजिये। प्रविवरण को निर्गमित करने में विधिक आवश्यकताओं का उल्लेख कीजिये।
2. प्रविवरण निर्माण का स्वर्णिम नियम क्या है तथा प्रविवरण में गलत/भ्रामक कथन के परिणामों की विवेचना कीजिये।
3. प्रविवरण में असतय कथन के सिविल तथा आपराधिक दायित्वों का वर्णन कीजिये।
4. स्थानापन्न प्रविवरण कब जारी करना चाहिये? क्या प्रविवरण तथा स्थानापन्न प्रविवरण में कोई महत्वपूर्ण अन्तर है?
5. टिप्पणी कीजिये–
   (i) Shelf प्रविवरण
   (ii) सूचना Memorandum

5.12 सन्दर्भ पुस्तकें

1. एन0डी0 कपूर, कम्पनी लॉ, सुल्तान चन्द्र एण्ड सन्स, नई दिल्ली।
2. एस0सी0 अग्रवाल, कम्पनी लॉ, धनपत राय पब्लिकेशन, नई दिल्ली।
3. एस0के0 अग्रवाल, बिजनेस लॉ, गलगोटिया पब्लिशिंग कम्पनी, नई दिल्ली।
4. के0आर0 बालचन्द्री, बिजनेस लॉ फॉर मैनेजमेन्ट, हिमालय पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली।
5. एस0एस0 गुलशन एण्ड जी0के कपूर, बिजनेस लॉ, न्यू ऐज इण्टरनेशनल पब्लशर्स नई दिल्ली।
6. एस0सी0 पुच्छल, मर्केन्टाइल लॉ, विकास पब्लिशिंग हाउस नई दिल्ली।

इकाई 6 वैधानिक पुस्तकें

इकाई की रूपरेखा

6.1 प्रस्तावना
6.2 लेखा पुस्तकें तथा उनका स्थान
6.3 लेखा पुस्तकों के संरक्षण की अवधि
6.4 अवहेलना पर दण्ड
6.5 लेखा पुस्तकों का निरीक्षण
6.6 लेखा की वैधानिक पुस्तकें तथा वैधानिक रजिस्टर
6.7 वार्षिक खाते तथा आर्थिक चिट्ठा
6.8 सारांश
6.9 शब्दावली
6.10 बोध प्रश्न
6.11 बोध प्रश्नों के उत्तर
6.12 स्वपरख प्रश्न
6.13 सन्दर्भ पुस्तकें

उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् आप इस योग्य हो सकेंगे कि:–

- लेखा पुस्तकों को रखने का स्थान तथा उसकी अवधि का वर्णन कर सकें।
- लेखा पुस्तक तैयार करने वाले व्यक्तियों के दायित्व की व्याख्या कर सकें।
- कम्पनी के वार्षिक खातों का अर्थ, प्रकार तथा विषयवस्तु की व्याख्या कर सकें।

6.1 प्रस्तावना

प्राचीन काल में कम्पनी के लेखा पुस्तकों का रख रखाव, कम्पनी तथा उसके अंश धारियों का व्यक्तिग या घरेलू मामला माना जाता था। कानून, कम्पनी के आन्तरिक प्रशासन तथा प्रबंध में हसतक्षेप नहीं करता था फिर भी, कम्पनी अधिनियम 1956 में लेखा तथा अंकेक्षण कराने से संबंधित कई प्रावधान सम्मिलित है–

1. प्रारम्भिक रूप में, कम्पनी की सभी सदस्यों को उनके मामलों से संबंधित आवश्यक जानकारी की उपलब्धता को सुनिश्चित करना।
2. दूसरे, कम्पनी के लोक महत्व के मामलों की भी कीमत पर जानकारी उसके लेनदारी, कर्मचारियों तथा जनता को उपलब्ध कराना।

6.2 लेखा पुस्तकें तथा उनका स्थान

अधिनियम की धारा 209(1) के अनुसार प्रत्येक कम्पनी की अपने पंजीकृत कार्यालय में निम्न से संबंधित लेखा पुस्तकों को रखना होगा।

(i) कम्पनी द्वारा प्राप्त तथा व्यय किये गये धन का योग।

(ii) कम्पनी द्वारा किये गये माल के सभी क्रय एवं विक्रय

(iii) कम्पनी की सभी सम्पत्तियों तथा दायित्व

(iv) उत्पादन, निर्माण या खदान गतिविधियों में संलग्न कम्पनियों की दशा मे सामग्री या श्रम या अन्य मदों की उपयोग लागत से संबंधित विवरण।

लेखा पुस्तकों को रखने का स्थान–

धारा 209 के अनुसार लेखा पुस्तकों को कम्पनी के पंजीकृत कार्यालय में रखा जायेगा फिर भी धारा 209 (1) कम्पनी को लेखा पुस्तकों को भारत में किसी अन्य स्थान पर रखने की अनुमति देता है, जैसा कम्पनी का निदेशक मण्डल निश्चित करे तथा इस निण्रय के 7 दिन में अन्दर रजिस्ट्रार को ऐसे स्थान (पूरे पता संहित) की लिखित नोटिस दाखिल करना आवश्यक है।

जहाँ किसी कम्पनी का शाखा कार्यालय है, तो शाखा से संबंधित लेन देन की लेखा पुस्तकों को शाखा कार्यालय में रखा जायेगा तथा उसका संक्षिप्त लेखे अधिकतम 3 माह के अन्तराल कम्पनी में पंजीकृत कार्यालय भेजा जायेगा। कम्पनी तथा उसके शाखा कार्यालय के लेखा पुस्तकों को सही व उचित चित्र प्रस्तुत करना चाहिये।

6.3 लेखा पुस्तकों के संरक्षण की अवधि

कम्पनी अधि0 की धारा 209(4ए) के अनुसार प्रत्येक कम्पनी को अपनी लेखा पुस्तकों को जर्नल इन्ट्री तथा उसके प्रमाणक सहित, चालू वर्ष से पूर्व के 8 वर्षों की अवधि का परीक्षण करना आवश्यक है।

लेखा पुस्तकों के परीक्षण का दायित्व प्रबंध निदेशक या प्रबंधक पर होता है। जहाँ पर कम्पनी में प्रबंध निदेशक या प्रबंधक नहीं है, वह कम्पनी का प्रत्येक निदेशक उत्तरदायी होगा। सभी मामलों में कम्पनी में प्रत्येक अधिकारी, कर्मचारी तथा ऐजेण्ट को दायित्व है कि वे ध्यान दे कि लेखा पुस्तकें ठीक ढंग रखी जा रही है या नहीं बैकर अंकेक्षण तथा विधि सलाहकार इस उद्देश्य के लिये कम्पनी के एजेण्ट नही होते हैं (धारा 209)

धारा 209(6) के अनुसार निम्न व्यक्तियों को लेखा पुस्तकों को रखने तााि धारा 209 के अनुपालन में लिये दायी है–

(i) जहाँ कम्पनी में प्रबंध निदेशक या प्रबंधक है, वहाँ प्रबंध निदेशक या प्रबंधक है, वहाँ प्रबंध निदेशक या प्रबंधक ।

(ii) जहाँ कम्पनी में न तो प्रबंध निदेशक है तथा न ही प्रबंधक है, वहाँ कम्पनी की प्रत्येक निदेशक ।

(iii) अधिनियम की धारा 204(6) में परिभाषित प्रत्येक अधिकारी, कर्मचारी तथा एजेण्ट।

6.4 अवहेलना पर दण्ड

धारा 209(5) के अनुसार, लेखा पुस्तकों को तेयार करने तथा रख रखाव के लिये दायी उपरोक्त व्यक्ति यदि उसका अनुपालन करने में जानबूझकर या बिना जाने असफल रहते हैं तो वह 6 माह तक के कारावास या 10000 रू0 तक जुर्माना या दोनों से दण्डित होगा।

6.5 लेखा पुस्तकों का निरीक्षण

धारा 209(4) के अनुसार, लेखा पुस्तकों तथा अन्य पुस्तकों व प्रपत्रों को कोई भी निदेशक, निरीक्षण के लिये व्यवसायिक कार्य घंटों में खोल सकता है। धारा 209(1) के अनुसार, केन्द्र सरकार की ओर से अधिकृत रजिस्ट्रार या कोई अधिकारी भी कम्पनी के कार्य घण्टों में लेखा पुस्तकों, प्रपत्रों व अन्य पुस्तकों का निरीक्षण कर सकता है।

1. **निदेशकों तथा अधिकारियों द्वारा निरीक्षण में सहायता का दायित्व–** धारा 209ए(2) के अनुसार कम्पनी के प्रत्येक निदेशक, अधिकारी या कर्मचारी का दायित्व है कि उनके नियंत्रण में आने वाले सभी ऐसी पुस्तकों तथा लेखा पुस्तकों को निरीक्षण में लिये व्यक्ति के सम्मुख प्रस्तुत करें। धारा 209(3) के उनका यह भी दायित्व है कि वे निरीक्षण के लिये आये व्यक्ति की सहायता करें।
2. निरीक्षण करने वाले अधिकारी की शक्ति– इस धारा के अनतर निरीक्षण करने वाला व्यक्ति लेखा पुस्तकों भी प्रतियाँ बना सकता है तथा निरीक्षण में समय कोई चिनह लगा सकता है। उसको वही शक्तियाँ प्राप्त है, जो रजिस्ट्रार की जाँच के दौरान प्राप्त होती है। इसके साथ–साथ उसे सिविल प्रक्रिया विधि 1908 में लेखा पुस्तकों व अन्य प्रपत्रों की खोज सम्मन, जातियों की किसी स्थान पर उपस्थिति, शपथ एवं किसी भी स्थान पर लेखा पुस्तकों, अन्य पुस्तकों, प्रपत्रों में नियंत्रण से संबंधित शक्तियाँ प्राप्त है। ऐसे निरीक्षण के बाद निरीक्षण करने वाला केन्द्र सरकार को प्रतिवेदन देगा। (धारा 209ए(4) से (7)

6.6 लेखा की वैधानिक पुस्तकें तथा वैधानिक रजिस्टर

यद्यपि कम्पनी अधिनियम में तैयार की जाने वाली लेखा पुस्तकों के नाम का उल्लेख नहीं है, तथापि अधिनियम के अनुसार कम्पनी को सभी ऐसी पुस्तकें तैयार तथा 8 वर्ष तक सुरक्षित रखना आवश्यक है जो वार्षिक खातों का सही एवं उचित चित्र प्रस्तुत करते हैं तथा कम्पनी की आर्थिक स्थिति को बताते हैं। लेखा पुस्तकों में न तो असत्य सूचना होनी चाहिये तथा न ही कोई सूचना छिपायी जानी चाहिये। शाखा कार्यालयों को आवश्यक खाते तैयार करना चाहिये तथा प्रत्येक 3 माह के अन्तराल पर कम्पनी के पंजीकृत कार्यालय में भेजना चाहिये।

इसके अतिरिक्त उपरोक्त लेखा पुस्तकों की गतिविधियों की अभिलिाति करने तथा अंशधारियों व लेनदारों के हितों को सुरक्षित रखने के लिये कम्पनी अधिनियम विशेष रूप से निश्चित पुस्तकों या रजिस्टर का रख–रखाव आवश्यक है। ऐसी पुस्तकों को वैधानिक पुस्तकें या रजिस्टर कहा जाता है जो निम्न हैः–

1. विनियोगों का रजिस्टर (धारा 49)
2. प्रभार का रजिस्टर (धारा 143)
3. सदस्यों का रजिस्टर (धारा 150 और 151)
4. ऋणपत्र धारियों का रजिस्टर (धारा 152 से 153)
5. वार्षिक खाते (धारा 159)
6. कार्यवृत पुस्तकें (धारा 193 से 196)
7. संविदा का रजिस्टर (धारा 301)
8. निदेशक का रजिस्टर (धारा 303)

9. निदेशक की अंशधारिता का रजिस्टर (धारा 307)
10. समान प्रबंध के अन्तर्गत कम्पनयिों के क्षण का रजिस्टर (धारा 370) (11) अन्य कम्पनियों के अंशों में विनियोगों का रजिस्टर (धारा 372)

1. **अन्य व्यक्तियों के नाम से रखे गये विनियोगों के रजिस्टर–** सामान्यतः, एक कम्पनी, विनियोग कम्पनी को छोड़कर, अपने स्वयं के नाम से विनियोग करती है। निम्न मामलों कम्पनी को अन्य व्यक्तियों के नाम से विनियोग की अनुमति दी जाती है।

   (i) एक कम्पनी, अपने तथा उस व्यक्ति के नाम से, जिसे कम्पनी, अन्य कम्पनी में निदेशक नियुक्त करने वाली हो संयुक्त रूप से अंशों का क्रय कर सकती है। परन्तु अन्य व्यक्ति के अंशों का मूल्य, निदेशक के योग्यता अंशों के मूल्य से अधिक नहीं होना चाहिये।

   (ii) एक कम्पनी, सहायक कम्पनी के अंशों को अपने नामिनी पर कम्पनी के नामिनी के नाम धारित कर सकती है जिसको सहायक कम्पनी में वैधानिक रूप से न्यूनतम सदस्य संख्या को बरकरार रखा जा सके।

   प्रत्येक कम्पनी को ऐसे विनियोगों तथा उसे धारित रने वाले व्यक्तियों के पूर्ण विवरण जिन्हें कम्पनी ने अपने नाम से नहीं धारित किया है, के पूर्ण विवरण को अभिलिखित करने के लिये रजिस्टर रखना चाहिये। ऐसे रजिस्टर की सदस्यों तथा ऋण पत्र धारियों केनिरीक्षण के लिये सभी कार्य दिवसों में प्रत्येक दिन कम से कम 2 घंटे खुला रखना चाहिये। उपरोक्त की अवहेलना होने पर कम्पनी तथा उसका प्रत्येक दायी अधिकारी 50000 रू0 तक के जुर्माने से दण्डित होगा। कम्पनी द्वारा निरीक्षण कराने से मनाक रने पर केन्द्र सरकार रजिस्टर के तुरंत निरीक्षण का आदेश दे सकती है।

2. **प्रभारों का रजिस्टर–** प्रत्येक कम्पनी को अपनी पंजीकृत कार्यालय में प्रभारों का रजिस्टर रखना चाहिये तथा उसमें सभी प्रमाणों विशेषतः जो कम्पनी की सम्पतित को प्रभावित करते हैं, के प्रत्येक मामले में निम्न विवरण को लिखना आवश्यक हैः–
   1. प्रभारित संम्पत्ति का संक्षिप्त विवरण
   2. प्रभार की राशि
   3. प्रतिभूतियों के धारक को छोड़कर, प्रभार के लिये अधिकृत व्यक्तियों के नाम यदि कम्पनी का कोई अधिकारी जानबूझकर किसी ऐसे लेखे को छिपाता है या अधिकृत करता है या छिपाने की अनुमति देता है, जिसका प्रकटीकरण उपरोक्त प्रावधानों के अनुसार आवश्यक है, तो ऐसा व्यक्ति 5000/– रू0 तक के जुर्माने से दण्डनीय होगा। इसमें अतिरिक्त रजिस्टर लोक परीक्षण के लिये खुला रहेगा तथा मॉग पर उसकी प्रति भी दी जायेगी।

3. **सदस्यों का रजिस्टर–** ाप्रत्येक कम्पनी की अपने सदस्यों का रजिस्टर निम्न विवरण के साथ रखना अनिवार्य है–

क. प्रत्येक सदस्य का नाम, पता तथा पेशा

ख. अंश पूंजी वाली कम्पनी की दशा में, प्रत्येक सदस्य द्वारा धारित अंश तथा उन अंशों के लिये चुकानयी गयी धनराशि

ग. तिथि, जिस पर प्रत्येक सदस्य को सदस्य के रूप में रजिस्टर में शामिल किया गया

घ. तिथि, जिस पर किसी व्यक्ति के सदस्य रहने पर प्रतिबंध लगाया गया।

कम्पनी द्वारा अंशों का स्टाक में परिवर्तन तथा इस परिवर्तन की सूचना रजिस्ट्रार को देने की दशा में, रजिस्ट्रार को प्रत्येक सदस्य को अंशों के बदले में मिले स्टाक की राशि काप्रकटीकरण करना होगा। रजिस्टर के रख–रखाव की उपरोक्त प्रक्रिया में अवहेलना होने पर 500/– रूपये प्रतिदिन के जुर्माने से दण्डनीय होगा, जब तक कि ऐसी अवहेलना जारी रहती है।

सदस्यों की अनुक्रमणिका– सदस्यों की संख्या 50 से अधिक होने पर सदस्यों की अनुक्रमणिका रखना आवश्यक है। इस रजिस्टर को वही बनाया जायेगा, जहाँ सदस्यों का रजिस्टर रखा जाता है। सदस्यों के रजिस्टर में परिवव्रन की सूचना के 14 दिन के अन्दर परिवव्रन प्रभावी होगा। इस अनुक्रमणिका के रख–रखाव में अवहेलना होने पर प्रत्येक उत्तरदायी अधिकारी 500/– रू0 तक के अर्थदण्ड से दण्डनीय होगा। (धारा 151)

4. ऋण पत्र धारियों का रजिस्टर–

प्रत्येक कम्पनी को ऋणपत्र धारियों का रजिस्टर रखना आवश्यक है जिसमें निम्न विवरण होने चाहिये–

(i) प्रत्येक ऋण पत्र धारी का नाम, पता व पेशा

(ii) प्रत्येक ऋण पत्र धारी द्वारा धारित ऋण पत्रों की संख्या तथा उसके लिये भुगतान की गयी राशि

(iii) तिथि, जिस दिन ऋणपत्र धारी का नाम रजिस्टर पर चढ़ाया गयां

(iv) वह तिथि, जिस दिन से किसी व्यक्ति के ऋणपत्र धारी होने से प्रतिबंधित किया गया।

ऋणपत्रधारियों के रजिस्टर के रख–रखाव के संबंध में वही नियम लागू होंगे जो नियम सदस्यों के रजिस्टर में लागू होते है। इसमें किसी भी प्रकार की अवहेलना होने पर कम्पनी का प्रत्येक उत्तरदायी अधिकारी 500/– रू0 तक अर्थदण्ड से दण्डनीय होगा।

5. वार्षिक प्रपत्र–

(क) अंश पूँजी वाली कम्पनी की दशा में वार्षिक प्रपत्रः– (धारा 159)– प्रत्येक अंश पूँजी वाली कमपनी को उसकी वार्षिक साधारण सभा में 60 दिन के अन्दर, एक प्रपत्र तैयार करना तथा रजिस्टार के यहॉ जमा करना होगा, जिसमें अनुसूची V के भाग I में निर्दिष्ट विवरण होने चाहिये जो निम्न से संबंधित हो।:–

(i) उसका पंजीकृत कार्यालय

(ii) उसके सदस्यों का रजिस्टर

(iii) उसमें ऋणपत्रधारियों का रजिस्टर

(iv) उसके अंश तथा ऋणपत्र

(v) उसकी ऋणग्रस्तता

(vi) भूत तथा वर्तमान में उसके सदस्य तथा ऋणपत्रधारी

(vii) भूत तथा वर्तमान में उसके निदेशक, प्रबां निदेशक प्रबंधक तथा सचिव के प्रारूप ऐसा प्रपत्र अनुसूची V के भाग II के प्रारूप या जेसी परिस्थितियाँ हो, के अनुसार भरा तथा जमा किया जायेगा।

(ख) बिना अंश पूँजी वाली कम्पनी द्वारा वार्षिक प्रपत्र (धारा–160):–

प्रत्येक बिना अंश पूँजी वाली कम्पनी को रजिस्ट्रार को, वार्षिक साधारण सभा में 60 दिन के अन्दर निम्न विवरणों के साथ प्रपत्र दाखिल करना आवश्यक है:–

(i) कम्पनी के पंजीकृत कार्यालय का पता

(ii) गत वर्ष के बाद से वार्षिक सभा से बने नये सदस्य में नाम तथा उनकी तिथि तथा प्रतिबंधित सदस्यों के नाम तथा उनके प्रतिबंधित होने की तिथि

(ii) ऐसे व्यक्तियों से संबंधित सभी विवरण जो प्रपत्र की तिथि पर धारा 303 के अनुसार कमपनी के निदेशक, प्रबंधक या उसके सचिव थे

(iii) इस अधिनियम के अनुसार रजिस्ट्रार के यहाँ सभी प्रभारों में पंजीकृत होने की तिथि पर कम्पनी की ऋणग्रस्तता की सम्पूर्ण राशि से संबंधित प्रपत्र

6. **कार्यवृत पुस्तक –**

कार्यवृत पुस्तक कम्पनी की सभाओं में घटित संभव घटनाओं का संक्षिप्त प्रमाणित अभिलेख है, जिससे अनुपस्थित अंशधारी तथा निदेशक, सभा के संबंध में जानकारी प्राप्त कर सके।

7. **संविदा का रजिस्टर–**

प्रत्येक कम्पनी अपने सभी संविदाओं का विवरण रखने के लिये बाध्य है जिसें उसका या उसके निदेशकों का हित हो। इसमें संविदा की तिथि पक्षकार महत्वपूर्ण शर्तें, तिथि जिस पर संविदा निदेशक मण्डल के सामने रखा गया हो तथा संविदा के पक्ष तथा विपक्ष में मतदान करने वाले निदेशकों के नाम का विवरण को निदेशक मण्डल की सभा में संविदा के अनुमोदन के 7 दिन के अन्दर (जहां अनुमोदन आवश्यक है) रजिस्टर मे अभिलिखित होना चाहिये। अन्य दशाओं में ऐसे विवरण कम्पनी के रजिस्टर्ड कार्यालय में संविदा की प्राप्ति के 7 दिन के रजिस्टर में अभिलिखित होना चाहिये। उपरोक्त प्रावधान निम्न पर लागू नहीं होंगे–

(i) कोई सविदा (वस्तु, सामग्री, सेवा के क्रय–विक्रय) जिस कुल मूल्य या लागत एक वर्ष में 1000/– रू0 से अधिक न हो।

(ii) बैंकिंग कम्पनी द्वारा अपने सामान्य व्यवसाय के क्रम में बिलों का संग्रहण किया जाता है।

ऐसा रजिस्टर जनता के निरीक्षण हेतु उपलब्ध रहेगा तथा उसकी प्रतियाँ भी जनता को दी जायेगी।

उपरोक्त प्रावधानों के उल्लंघन की दशा में कम्पनी तथा उसका प्रत्येक अधिकारी 5000/– रू0 तक जुर्माने से दण्डित होगा।

8. **निदेशकों का रजिस्टर–**

कम्पनी अधिनियम की धारा 303 में अनुसार प्रत्येक कम्पनी को अपने पंजीकृत कार्यालय में उसके निदेशकों, प्रबंध निदेशक, प्रबंधक तथा सचिव का रजिस्टर रखना आवश्यक है, जिसमें निम्न विवरण हो–

(i) व्यक्ति की दशा में, उसका वर्तमान नाम व उपनाम, पूर्व का नाम व उपनाम (यदि हो), उसके पिता का नाम उपनाम या जहाँ व्यक्ति एक विवाहित स्त्री हो, तो उसके पति का पूर्व नाम व उपनाम, उसके निवासीय पता, राष्ट्रीयता, उसका व्यवसाय पेंशन (यदि हो), यदि वह अन्य कम्पनी में निदेशक, प्रबंध निदेशक, प्रबंधक या सचिव के दर पर हो तो उसके कार्यालय का पूर्ण विवरण उसकी जन्म तिथि।

(ii) कम्पनी की दशा में, कम्पनी का नाम, उसका पंजीकृत कार्यालय तथा पूर्ण नाम, पता, राष्ट्रीयता, भिन्न राष्ट्रीयता होने पर राष्ट्रीयता का उद्भव, जहां निदेशक विवादित स्त्री है वहाँ उसके पति का पूर्ण नाम तथा जहां वह अन्य कम्पनी में प्रबंधक सचिव आदि हो तो ऐसे प्रत्येक कार्यालय का विवरण।

(iii) फर्म की दशा में, फर्म का नाम, पूर्ण नाम, पता, राष्ट्रीयता, भिन्न राष्ट्रीयता होने पर उसकी राष्ट्रीयता, पिता का नाम या जहाँ साझेदार विवाहित स्त्री है वहॉ उसके पति का नाम तथा तिथि जिस दिन वह साझेदार तथा यदि फर्म किसी अन्य कम्पनी में प्रबंधक या सचिव हो तो कार्यालय का विवरण।

(iv) यदि कोई निदेशक अन्य कम्पनी में नामांकित है तो उसका कम्पनी का नाम तथा कम्पनी के संबंध में सभी विवरण

(v) यदि कोई निदेशक फर्म द्वारा नामांकित किया गया है तो उस फर्म का नाम, तथा फर्म से संबंधित विवरण।

उपरोक्त विवरण के प्रथम नियुक्ति तथा रजिस्टर कोई भी परिवर्तन की सूचना, घटित होने के 30 दिन के अन्दर रजिस्ट्रार को भेजना चाहिये।

यह रजिस्टर सदस्यों के बाह्य व्यक्तियों के निरीक्षण के लिये उपलब्ध रहेगा तथा उसकी प्रति भी दी जायेगा। उपरोक्त प्रावधानों का उल्लंघन

की दशा में कम्पनी तथा उसके प्रत्येक अधिकारी 500/— तक में दण्ड से भागी हों।

9. **समान प्रबंध वाली कम्पनियों द्वारा लिये गये ऋणों का रजिस्टर—**

धारा 307 के अनुसार कम्पनी को निदेशकों की अंशधारिता का रजिस्टर रखना अनिवार्य है। रजिस्टर में निदेशकों द्वारा धारित अंशों व ऋण पत्रों की मात्रा व राशि का विवरण सम्मिलित है।

ऐसा रजिस्टर कम्पनी की वार्षिक साधारण सभा के 14 दिन पूर्व तथा 3 दिन बाद तक प्रत्येक कार्य दिवस में कम से कम 2 घंटे सदस्यों व ऋण पत्र धारकों के निरीक्षण के लिये उपलब्ध होगा।

10. **अन्य कम्पनियों द्वारा अंशों में विनियोग का रजिस्टर—**

प्रत्येक ऋण देने वाली कम्पनी एक रजिस्टर रखे जिसमें निम्न विवरण होगाः—

1. समान प्रबंध केअर्न्तत आनोली सभी ऋणदाता, कम्पनियों के नाम तथा प्रत्येक फर्म का नाम, जिसमें समान प्रबंध के अन्तर्गत ऋणदाता कम्पनी साझेदार है तथा
2. समान प्रबंध के अन्तर्गत प्रत्येक कम्पनी द्वारा अन्य कम्पनी को उपलब्ध कराये गये ऋण, ली दी यी प्रतिभूति के निम्न रिण दिखाये जायेंगे—
   - कम्पनी जिसको ऋण दिया गया है।
   - तिथि जिस पर गारण्टी दी या ली गयी है।

प्रत्येक ऋण, गारण्टी का रिण सौदा होने के 3 दिन के अन्दर रजिस्टर होने चाहिये।

उपरोक्त प्राधान का उल्लंघन की दशा में कम्पी तथा उसका प्रत्येक अधिकारी 500/— रू0 तक के दण्ड का भागी होगा।

11. **अन्य कम्पनियों के अंशों में विनियोग का रजिस्टर—**

प्रत्येक कम्पनी को अपने द्वारा किये गये विनियोग का रजिस्टर रखना आवश्यक है जिसमें प्रत्येक विनियोग के संबंध में निम्न विवरण है—

(i) उस कम्पनी का नाम जहां विनियोग किया गया है।

(ii) विनियोग करने की तिथि

(iii) जहां विनियोजक कम्पनी तथ दूसरी कम्पनी दोनों समान समूह के अन्तर्गत आती है तो समान समूह में आने की तिथि

(iv) उस समान समूह की सभी कम्पनियों के नाम, जिसमें विनियोजक कम्पनी आती है।

उपरोक्त प्रावधानों में उल्लंघन की दशा में कम्पनी तथा प्रत्येक अधिकारी जो उल्लंघन के लिये उत्तरदायी है, 500/— रू0 तक के दण्ड का दायी होगा तथा उल्लंघन जार रहने तक 50/— रू0 प्रति दिन जुर्माना होगा।

विनियोग का रजिस्टर विनियोजक कम्पनी के पंजीकृत कार्यालय में सदस्यों के निरीक्षण हेतु रखा जायेगा तथा इसमें संबंध में वही नियम लागू होंगे जो सदस्यों के रजिस्टर के संबंध में लागू होते हैं। (धारा 372)

6.7 वार्षिक खाते तथा आर्थिक चिट्ठा

लाभ न कमाने वाली कम्पनियों को उसकी वार्षिक साधारण सभा मे लाभ हानि खाते के स्थान पर आय–व्यय खाते को प्रस्तुत करना पड़ता है।

खातों की अवधि : प्रथम वार्षिक साधारण सभा की दशा में, कम्पनी के समामेलन से सभा के 9 माह के अन्दर का लाभ हानि खाता तथा बाद की साधारण सभा की दशा में पिछले लेखों के तुरन्त बाद की तिथि से सभा में 6 माह तक लाभ–हानि खाते की अवधि होगी।

लेखा अवधि को कम्पनी का वित्तीय वर्ष कहा जाता है जो कैलेन्डर वर्ष से कम या अधिक हो सकता है। यह अवधि 15 माह सेअधिक नहीं होना चाहिये, परन्तु रजिस्ट्रार द्वारा विशेष अनुमति की दशा में 18 माह तक हो सकता है। (धारा 210)

लाभ–हानि खाते और आर्थिक चिट्ठे का प्रारूप व विषय वस्तु : प्रत्येक कम्पनी के आर्थिक चिट्ठे वित्तीय वर्ष के अन्त में कम्पनी की स्थिति का सही एवं उचित चित्र प्रस्तुत करना चाहिये। यह अधिनियम के अनुसूची VI के भाग I या परिस्थितिनुसार था जैसा केन्द्र सरकार अनुमोदित करें, में प्रारूप में होना चाहिये।

लाभ हानि खाते का प्रारूप : लाभ हानि खाते को कम्पनी केलाभ हानि का सत्य एवं उचित चित्र प्रस्तुत करते हुये अधिनियम के अनुसूची VI के भाग II का अनुपालन करना चाहिये।

उपरोक्त प्रावधान बैंकिंग कम्पनी, बीमा कम्पनी, विद्युत कम्पनी या ऐसी अन्य कम्पनी पर लागू नहीं होते हैं, जिनके लाभ हानि खाता तथा आर्थिक चिट्ठे का प्रारूप अन्य या विशेष अधिनियम द्वारा दिया गया है।

केन्द्र सरकार लोक हित में कम्पनी को अनुसूची VI के अनुपालन से छूट दे सकती है। (धारा 211)

कम्पनी के लाभ–हानि खाता व आर्थिक चिट्ठा निदेशक मण्डल की ओर से हस्ताक्षरित तथा अंकेक्षण हेतु दाखिल करने के पूर्व निदेशक मण्डल द्वारा अनुमोदित होना चाहिये। (धारा 215)

लाभ–हानि खाता तथा आर्थिक चिट्ठे को अधिकृत करना : निदेशक मण्डल की ओर से लाभ–हानि खाता व आर्थिक चिट्ठे पर निम्न द्वारा हस्ताक्षरित होना चाहिए–

(i) बैंकिंग कम्पनी की दशा में बैंकिंग कम्पनी अधिनियम की धारा 29 में निर्दिष्ट व्यक्ति का हस्ताक्षर होना चाहिये। इस धारा के अनुसार लाभ–हानि खाता व आर्थिक चिट्ठे पर कम्पनी के प्रबंधक या मुख्य अधिकारी तथा उसे अधिक निदेशक की दशा 3 निदेशकों का तथा उसे कम निदेशक होने पर सभी निदेशकों का हस्ताक्षर होना चाहिये।

(ii) अन्य कम्पनी की दशा में, उसके प्रबंधक या सचिव, यदि हो तथा कम से कम 2 निदेशक जिसमें 1 प्रबंध निदेशक हो, का हस्ताक्षर होना चाहिये। उस समय यदि एक ही निदेशक भारत में है तो वह लाभ हानि खाते व आर्थिक चिट्ठे पर हसताक्षर करेगा। इसके साथ–साथ उसे इस धारा को प्रावधानों का पालन न करने के कारण का कथन लाभ–हानि खाते व आर्थिक चिट्ठे के साथ संलग्न करना होगा। कम्पनी का लाभ हानि खाता व आर्थिक चिट्ठा, निदेशक मण्डल की ओर से हस्ताक्षरित तथा अंकेक्षण हेतु दाखिल करने के पूर्व निदेशक मण्डल द्वारा अनुमोदित होना चाहिये। (धारा 215) कम्पनी का लाभ –हानि खाता व आर्थिक चिट्ठा, अंकेक्षक रिपोर्ट के साथ संलग्न होना चाहिये। (धारा–216)

6.8 सारांश

प्रत्येक कम्पनी को अपने पंजीकृत कार्यालय में लेखा पुस्तकों को रखना आवश्यक है किसी कमपनी की शाखायें होने की दशा में, मुख्य कम्पनी को ऐसी शाखाओं का संक्षिप्त लेखा 3 माह में अन्तराल पर रखना चाहिये। इसके अतिरिक्त प्रत्येक कम्पनी को चालू वर्ष से पूर्व के 8 वर्षों की लेखा पुस्तकें प्रमाणकों सहित, अच्छी स्थिति में सुरक्षित तथा संरक्षित रखना अनिवार्य है।

6.9 शब्दावली

- **सुरक्षित रखने की अवधि–** प्रत्येक कम्पनी को चालू वर्ष से पूर्व के 8 वर्षों की लेखा पुस्तकें, प्रमाणकों सहित सुरक्षित तथा अच्छी स्थिति में संरक्षित रखना आवश्यक है।
- **मण्डल का प्रतिवेदन–** प्रत्येक आर्थिक चिट्ठे में निदेशक मण्डल के प्रतिवेदन को संलग्न कर उसे कम्पनी की साधारण सभा में प्रस्तुत करना चाहिये।
- **वार्षिक खाते–** इसके अन्तर्गत कम्पनी को वैधानिक रिपोर्ट के साथ लाभ–हानि खाते तथा आर्थिक चिट्ठे को सम्मिलित करते हैं।

6.10 बोध प्रश्न

(क) खाली स्थान भरो–

1. कम्पनी में शाखा कार्यालय............................ माह के अन्तराल पर, अपने आवश्यक खाते तथा सारांशित खाते, पंजीकृत कार्यालय को प्रेषित करेंगे।
2. प्रत्येक कम्पनी, संविदा का रजिस्टर रखने के लिये बाध्य है जिसमें ऐसे संविदा का पूर्ण विवरण हो, जिसमें उसके किसी................... का हित है।
3. लेखा पुस्तकों को कम्पनी की अन्तिम खातों का सही एवं................. चित्र प्रस्तुत करना चाहिये।

(ख) सही / गलत

1. ऐसी कमपनी की दशा में, जो लाभ कमाने के लिये व्यवसाय नहीं कर रही है, उसे कम्पनी की वार्षिक साधारण सभा में, लाभ–हानि खाते के स्थान पर आय–व्यय खाता प्रस्तुत करना चाहिये।

2. कम्पनी की लेखा पुस्तकों को केवल उसके पंजीकृत कार्यालय में रखना चाहिये।
3. एक कम्पनी को अपना लेखा, लेखांकन की रोकड़ पद्धति के अनुसार करना चाहिए।
4. लेखा पुस्तकों की जाूच केवल चार्टर्ड एकाउण्टेण्ट द्वारा की जा सकती है।

6.11 बोध प्रश्नों के उत्तर

(क) 1. तीन 2. निदेशकों, 3. उचित

(ख) 1. सही 2. गलत 3. गलत 4. गलत

6.12 स्वपरख प्रश्न

1. कम्पनी अधिनियम में लेखों के निरीक्षण, रख–रखाव, अनुमोदन तथा जमा करने से संबंधित प्रावधानों का उल्लेख कीजिये।
2. एक कम्पनी को किन लेखा पुस्तकों को कहाॅ पर रखना आवश्यक है? ऐसे कौन से व्यक्ति हैं जो इस पुस्तकों का निरीक्षण कर सकते हैं?
3. कौन–कोन सी वैधानिक पुस्तकें सभी के निरीक्षण के लिये खुली रहती है तथा कौन–कोन सी सदस्यों तथा ऋणपत्रधारियों के निरीक्षण के लिये खुली रहती है।
4. कम्पनी की लेखा पुस्तकों का निरीक्षण कौन कर सकता है? कम्पनी की लेखा पुस्तकों को कितनी अवधि के लिये संरक्षित रखना चाहिये।

6.13 सन्दर्भ पुस्तकें

1. एन0डी0 कपूर, कम्पनी ला, सुल्तान चन्द एण्ड सन्स, नई दिल्ली।
2. एस0सी0 अग्रवाल, कम्पनी ला, धनपत राय पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली।
3. एस0के0 अग्रवाल, बिजिने लॉ, गलगोरिया पब्लिशिंग कम्पनी नई दिल्ली।
4. के0आर0 बालचान्दरी, बिजने लॉ फार मैनेजमेन्ट, हिमालय पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली।
5. एस0एस0 गुलशन एण्ड जी0के0 कपूर, बिजिनेस लॉ न्यू एज इण्टरनेशनल पब्लिशर्स, नई दिल्ली।
6. एस0सी0 कुच्छल, मर्केन्टाइल लॉ, विकास पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली।

इकाई 07 अंश

इकाई की रूपरेखा

7.1 प्रस्तावना
7.2 परिभाषा
7.3 अंशों के प्रकार
7.4 अंशों के निर्गमन की प्रक्रिया
7.5 अंशों के निर्गमन की शर्तें
7.6 अंशों का अधिमूल्य पर निर्गमन
7.7 अंशों का कटौती पर निर्गमन
7.8 अंशों का हरण
7.9 बोनस अंशों का निर्गमन
7.10 अधिकार अंश
7.11 अंशों का समर्पण
7.12 विभेदात्मक मताधिकार वाले अंश
7.13 सारांश
7.14 शब्दावली
7.15 बोध प्रश्न
7.16 बोध प्रश्नों के उत्तर
7.17 स्वपरख प्रश्न
7.18 सन्दर्भ पुस्तकें

उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप इस योग्य हो सकेंगे कि –

- अंशों का वर्णन कर सकें।
- अंशों के निर्गमन की प्रविधि की व्याख्या कर सकें।
- बोनस अंशों का निर्गमन की व्याख्या कर सकें।
- अंशों के समर्पण की विवेचना कर सकें।

7.1 प्रस्तावना

एक संयुक्त सकन्ध कम्पनी अपनी पूँजी को समान वर्ग की इकाइयों में विभाजित करती है। प्रत्येक इकाई को अंश कहते हैं। यह इकाइयों जैसे अंश को पूँजी की प्राप्ति के लिये, विक्रय का प्रस्ताव किया जाता है। इस प्रक्रिया को अंशों का निर्गमन कहते हैं। एक व्यक्ति जो अंशो का क्रय करता है, अंशधारी कहलाता है। अंशों के अधिग्रहण के द्वारा वह कम्पनी के स्वामियों से एक होता है। अतः अंश, पूँजी की एक अविभाज्य इकाई है। यह कम्पनी तथा अंशधारी के मध्य स्वामित्व का संबंध दर्शाता है। अंश पर मुद्रित मूल्य, सम मूल्य कहलाता है। कम्पनी की सम्पूर्ण पूँजी, अंशों में विभाजित होती है।

समता अंश तथा पूर्वाधिकार अंश में अन्तर

आधार	समता अंश	पूर्वाधिकार अंश
1. लाभांश की दर	निश्चित नहीं	पूर्व निर्धारित
2. लाभांश भुगतान	इन अंशों पर लाभांश का भुगतान पूर्वाधिकार अंशधारियों को भुगतान के बाद होता है।	इन अंशों पर लाभांश का भुगतान समता अंश धारियों के भुगतान के पूर्व किया जाता है।
3. समापन की दशा में वापसी	कम्पनी की समापन की दशा में समता अंशधारियों को पूँजी की वापसी पूर्वाधिकार अंशधारियो को पूँजी की वापसी के बाद की जाती है।	कम्पनी समापन की दशा में पूर्वाधिकार एवं अंश धारियों को पूँजी की वापसी समता अंशधारियों के पूर्व की जाती है।
4. मताधिकार	इन्हें सभी मामलों में मतदान का अधिकार होता है।	पूर्वाधिकार अंश धारियों को विशेष परिस्थितियों में मतदान का अधिकार होता है।
5. वापसी	इन अंशों पर पुनर्भुगतान या वापसी कम्पनी के पूरे जीवनकाल में नहीं होती।	इन अंशों में एक निश्चित समय के बाद पुनर्भुगतान होता है।

7.2 परिभाषा

भारतीय कम्पनी अधिनियम की धारा 2(46) के अनुसार ''अंश, कम्पनी

- कम्पनी की सम्पूर्ण पूँजी, समान मूल्य की सुविधाजनक इकाईयों में विभाजित होती है तथा प्रत्येक इकाई को अंश कहते हैं।

7.3 अंशों के प्रकार

कम्पनी अधिनियम के अनुसार एक कम्पनी निम्न प्रकार में अंशों का निर्गमन कर सकती है–

(क) समता अंश

(ख) पूर्वाधिकार अंश

(क) समता अंश– समता अंश, अंश पूँजी का वह भाग है, जो पूर्वाधिकार अंश पूँजी नहीं है। इसका आशय ऐसे सभी अंशों से है जो पूर्वाधिकार अंश नहीं है। समता अंशों का सामान्य या साधारण अंश भी कहा जाता है। समता अंशधारिता को लाभाँश का भुगतान, कम्पनी के लाभ में से पूर्वाधिकार अंशधारियों को लाभॉश के भुगतान के पश्चात, किया जाता है। समता अंशधारियो को कम्पनी के निदेशकों के चुनाव का अधिकार होता है।

समता अंश के लाभ– समता या साधारण अंश वे अंश है जो पूर्वाधिकार अंश नहीं है। पूर्वाधिकार अंशधारियों को निश्चित दर से लाभॉश के भुगतान के पश्चात समता अंशों पर लांश का भुगतान होता है। समता अंशों पर लाभॉश की दर निश्चित न होकर, उपलब्ध लाभ तथा निदेशक मण्डल के निर्णय पर निर्भर करती है। कम्पनी के समापन की दशा में, समता पूँजी की वापसी, कम्पनी के सभी अन्य दायित्वों तथा पूर्वाधिकारी अंशों की पूँजी की वापसी, के बाद होती है। समता पूँजी की उल्लेखनीय विशेषता यह है कि इसका धारक कम्पनी का स्वामी होता है तथा कम्पनी के सम्पत्तियों व लाभों पर असीमित हित रखता है। वह कम्पनी के सभी व्यवसायिक मामलों पर मताधिकार रखता है। वह ऊँची दर के लाभांश का अर्जन करता है तथा उसे शून्य लाभांश का भी जोखिम होता है। साधारण अंशों के निर्गमन का महत्व यह है कि कोई भी लाभ कमाने वाले संगठन का अस्तित्व बिना समता अंश पूँजी के नहीं हो सकता है। इसे जोखिम पूँजी कहा जाता है।

कम्पनी के लाभ– समता अंशों के निर्गमन के निम्न लाभ होते हैं–

1. **दीर्घ अवधि तथा स्थायी पूँजी–** यह दीर्घकालीन वित्त का उत्तम स्रोत है। एक कम्पनी को उसके जीवनकाल में समता पूँजी को लौटाने की आवश्यकता नहीं है, इसलिये यह पूँजी का स्थायी स्रोत है।
2. **लाभ होने पर ही लाभाँश का भुगतान–** समता अंशों पर लाभाँश का भुगतान, कम्पनी के लाभों की उपलब्धता तथा निदेशक मण्डल के निर्णय पर निर्भर करता है। लाभ न होने की दशा में लाभाँश का भुगतान समता अंशधारी को नहीं होता है। अतः समता पूँजी विकास की दशा में सुरक्षा कवच प्रदान करती है।

विनियोजकों का लाभ– विनियोजक निम्न लाभ प्राप्त करते हैं–

1. अधिक आय, 2. कम्पनी के प्रबंधन तथा नियंत्रण में भाग लेने का अधिकार, 3. अंशों के बाजार मूल्य में वृद्धि होने पर समता अंशों का विक्रय मद पूँजी लाभ अर्जित किया जाता है। 4. समता अंश कम मूल्य वर्ग का होने के कारण सीमित आय वाले व्यक्तियों के पूँजी विनियोजन हेतु उपयुक्त होते हैं।

(1) **कम्पनी को हानि–** समता अंश से कम्पनी को निम्न हानि होती है–

(i) **नियंत्रण में कमी–** समता अंशों का प्रत्येक विक्रय वर्तमान अंशधारियों के मताधिकार में कभी कर नये अंशधारियों के मताधिकार में वृद्धि करता है।

(ii) **समता पर व्यापार सम्भव नहीं–** यदि केवल समता अंशों का निर्गमन किया जाता है तो कम्पनी समता पर व्यापार नहीं कर सकती है।

(iii) **अति पूँजीकरण–** समता अंशों का अत्यधिक निर्गमन अति पूँजीकरण को जन्म देता है। इस स्थिति पर प्रति अंश लाभाँश कम हो जाता है जो विनियोजकों को विपरीत रूप में प्रभावित करता है।

(iv) **पूजी ढॉचे में लोच का आभाव–** कम्पनी के जीवन काल में समता अंशों का वापस भुगतान नहीं किया जा सकता है। यह विशेषता कमपनी में पूँजी ढांचे आलोचशीलता को जन्म देती है।

(v) **अधिक लागत–** अन्य प्रतिभूतियों की तुलना में समता अंशों के वित्तीयन, जैसे विक्रय लागत तथा अभिगोपन कमीशन, पर अधिक लागत आती है।

(2) **विनियोजकों को हानि–** समता अंशों से विनियोजकों को निम्न हानियाँ होती है–

(i) **अनिश्चित तथा अनियमित अर्थ–** समता अंशों पर लाभांश का भुगतान कम्पनी के लाभों की उपलब्धता तथा निदेशक मण्डल के निर्णय पर निर्भर भत्ता है, इसलिये समता अंश से आय अनिश्चित तथा अनियमित होती है।

(ii) **मंदी काल में पूँजी हानि–** मंदीकाल में कम्पनी का लाभ कम होने के कारण लाभाँश दर में गिरावट आती है। लाभाँश दर में गिरावट के कारण अंशों के बाजार मूल्य में कमी आती है, जो विनियोजकों को पूँजी हानि पहुँचाती है।

(iii) **समापन–** कम्पनी में समापन की दशा सर्वाधिक दयनीय स्थिति समता अंशधारी की होती है। समता अंशधारी को भुगतान, अन्य सभी पक्षों को भुगतान के पश्चात आधिक्य की उपलब्धता पर निर्भर करता है।

समता अंश के उपरोक्त लाभों तथा हानियों के विवेचन के पश्चात यह निष्कर्ष निकलता है कि कम्पनी के लिये समता अंश का निर्गमन आवश्यक है। कम्पनी के पूँजी ढांचे को लोचशील बनाने के लिये कम्पनी को अन्य स्रोतों से भी वितरित करना चाहिये।

(ख) **पूर्वाधिकार अंश–** पूर्वाधिकार अंशों का आशय उन अंशों से है जिन्हे लाभांश सम्बन्धी तथा पूँजी के पुनर्भुगतान सम्बन्धी दो मूलभूत पूर्वाधिकार प्राप्त होते हैं। प्रथम, लाभांश सम्बन्धी पूर्वाधिकार से आशय है कि कम्पनी के लोगों में सर्वप्रथम इसी श्रेणी के अंशधारियों को लाभांश प्राप्त करने का अधिकार होता है। यदि इन्हे लाभांश देने के पश्चात कुछ लाभ शेष रह जाय तभी अन्य श्रेणी के अंशों पर लाभांश का वितरण हो सकता है, अन्यथा नहीं। द्वितीय, पूँजी के पुनर्भुगतान के सम्बन्ध में पूर्वाधिकार से यह अर्थ है कि कम्पनी का समापन होते समय, यदि ऋणदाताओं को भुगतान कर देने के पश्चात कुछ धन शेष रह जाये, तो उसमें सर्वप्रथम पूर्वाधिकार अंशधारियों को अपने अंशों के अंकित मूल्य के बराबर धन लौटाया जाता है। यदि उसके पश्चात कुछ शेष रह जाय तो उसे अन्य श्रेणी के अंशधारियों को दिया जाता है।

पूर्वाधिकार अंशों के प्रकार–

इन्हें निम्न श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है–

(1) **संचयी तथा असंचयी :** इन अंशों की प्रमुख विशेषता यह है कि यदि कम्पनी को पर्याप्त लाभ है तो इन्हें निश्चित दर से अन्य अंशो की अपेक्षा पहले लाभांश मिल जाता है, परन्तु यदि किसी वर्ष लाभांश न हो तो आगामी वर्षों में पर्याप्त लाभ होने पर भी वे पिछले वर्ष के लिए (जिस वर्ष लाभांश नहीं दिया गया था) लाभांश की माँग नहीं कर सकते। संक्षेप में, यद्यपि उनको लाभांश

अन्य अंशों की अपेक्षा पहले मिलता है, किन्तु संचय नहीं हो पाता, अर्थात् पिछले बकाया लाभांश की माँग की जा सकती है।

उपर्युक्त की भॉति इन अंशों पर भी निश्चित दर से अन्य अंशों की अपेक्षा पहले लाभांश पाने का अधिकार होता है। साथ ही यदि किसी वर्ष लाभ न होने के कारण इन्हें लाभांश न मिले तो उस वर्ष के लिए लाभांश का उनका अधिकार समाप्त नहीं हो जाता, वरन् अगले वर्षों के लिए स्थगित (संचित) हो जाता है और भविष्य में जब कभी कम्पनी को पर्याप्त लाभ होता है तो उसमें से सबसे पहले इन्हें अपने लाभांशों की बकाया राशि प्राप्त करने का अधिकार मिलता है। संक्षेप में, इन्हें न मिलने वाले लाभांश के अधिकार समाप्त नही होते, वरन् संचित हो जाते हैं।

(2) **भागयुक्त अथवा भागिता पूर्वाधिकार अंश** : इस प्रकार के अंशों पर निश्चित दर से तो लाभांश मिलता ही है, किन्तु उसके अतिरिक्त उन्हें कम्पनी के अतिरिक्त लाभ में भी अन्य श्रेणी के अंशों के साथ–साथ हिस्सा बँटाने का अधिकार होता है। अतिरिक्त लाभ से तात्पर्य लाभ की उस मात्रा से है, जो सभी श्रेणियों के अंशधारियों को निर्धारित दर से लाभांश का भुगतान करके शेष बच जाये।

(3) **भागयुक्त और अभाग युक्त पूर्वाधिकार अंश** : अभागयुक्त पूर्वाधिकार अंश ऐसे अंशों को कहते हैं जिन पर निश्चित दर से अन्य अंशधारियों से पूर्व लाभांश तो मिलता है किन्तु कम्पनी के अतिरिक्त लाभों में हिस्सा बँटाने का अधिकार नहीं होता।

पूर्वाधिकार अंश के लाभ– पूर्वाधिकार अंश एक hybrid वित्तीय प्रपत्र है जिसके पूँजी के स्रोत के रूप में उपयोग करने पर लाभ तथा हानियॉ दोनों है। लाभॉश भुगतान की कानूनी बाध्यता की अनुपस्थिति, ऋण लेने की क्षमता में सुधार, वर्तमान अंशधारियों के नियंत्रण के बिखराव से बचाव तथा सम्पत्ति पर प्रभान न होना इसके लाभ हैं इसमें मुख्य सीमाओं में महंगा वित्तीयन का स्रोत होना तथा प्राथमिक अधिकारों का होना है।

पूर्वाधिकार अंशों का उपयोग बड़ी औद्योगिक कम्पनियों द्वारा उनके प्रोजेक्ट के वित्तीयन हेतु दीर्घकालीन श्रोत के रूप में किया जाता है। इन्हें hybrid वित्तीयन प्रपत्र कहा जाता है क्योंकि इसमें समता तथा ऋण दोनों की विशेषतायें पायी जाती हैं कम्पनी के दृष्टिकोण से पूर्वाधिकार अंशों के निमन लाभ हैं–

1. **लाभांश भुगतान की कानूनी बाध्यता की अनुपस्थिति–** कम्पनी की पर्याप्त लाभ न होने की स्थिति में पूर्वाधिकार अंशों पर लाभाँश भुगतान की निवार्यता नहीं होती है।
2. **प्रभार रहित पूँजी–** पूर्वाधिकार अंशों द्वारा ऋण प्राप्त करने के लिये कमपनी को अपनी सम्पत्तियॉ बन्धक नहीं रखनी पड़ती है। अतः इन अंशों के द्वारा कंपनी बिना सम्पत्ति को बंधक रखे पर्याप्त धन की व्यवस्था कर सकती है।
3. **ऋण लेने की क्षमता में सुधार–** पूर्वाधिकार अंश, कम्पनी के नोटवर्थ में भाग होते हैं, इसलिये ये ऋण समता अनुपात में कमी करते हैं, जिससे संस्था की ऋण लेने की क्षमता में वृद्धि होती है।

4. **Caution विनियोजक के लिये उपयुक्त–** यह अंश ऐसे विनियोजक के लिये उपयुक्त है जो कम जोखिम के साथ निश्चित आय के इच्छुक हैं
5. **नियंत्रण के बिखराव पर रोक–** कम्पनी के वर्तमान अंशधारी पूर्वाधिकार अंशों के निर्गमन के द्वारा अपना नियंत्रण बनाये रख सकते हैं क्योंकि पूर्वाधिकार अंशधारियों को केवल अपने मामलों में मताधिकार प्राप्त होता है। अतः ये अंश नियंत्रण में कमी नहीं करते हैं।
6. **आकर्षक प्रकार–** शोधनीय, परिवर्तनीय तथा भागयुक्त पूर्वाधिकार अंशधारी अधिक आकर्षक होते हैं क्योंकि ये विनियोजक के लिये मददगार होते हैं।
7. **सुविधाजनक–** पूर्वाधिकार अंशों के निर्गमन में ऋण पत्रों की तुलना में किसी प्रभार की आवश्यकता नहीं होती है, जिसके कारण ये सुविधाजनक होते हैं।
8. **समता अंशधारियों की आय में वृद्धि–** पूर्वाधिकार अंशों में निर्गमन के द्वारा समता अंशधारी लाभांश की बड़ी धनराशि प्राप्त करते हैं।
9. **मितव्ययी–** समता अंशों की तुलना में, पूर्वाधिकार अंशो से वित्तीयन में सस्ता होता है। जिससे इन अंशों के निर्गमन द्वारा बड़े पूँजीगत व्ययों को पूरा किया जा सकता है।
10. **पुनर्निर्माण तथा पुनर्संगठन–** जब कमपनी पुनर्निर्माण या पुनर्संगठन करती है तो वह लेनदारों से सहमति प्राप्त कर ऋणों को पूर्वाधिकार अर्थों में आसानी से परिवर्तित कर सकती है।
11. **ऋणपत्रों का विकल्प–** एक औसत परन्तु अस्थिर आय वाली कम्पनी में लिये ऋणपत्र की तुलना में पूर्वाधिकार अंश अच्छा विकल्प है।

पूर्वाधिकार अंश के दोष–

1. **भावी लाभाँश–** पूर्वाधिकार अंशों पर लाभाँश की दर ऋणपत्रों पर ब्याज दर की तुलना में अधिक होती है।
2. **लाभाँश का एकत्र होना–** भागयुक्त पूर्वाधिकार अंशों की दशा मे लाभाँश इकट्ठा होता रहता है, जो कम्पनी पर स्थायी भार डालता है।
3. **महंगा होना–** ऋण पत्रों की तुलना में पूर्वाधिकार अंशों से वित्तीयन अधिक महंगा होता है।
4. **मताधिकार की हानि–** क्योंकि पूर्वाधिकार अंशधारियों को मताधिकार नहीं होता है, इसलिये पूर्वाधिकार अंशधारियों के हितों को समता अंशधारियों द्वारा क्षति पहुचायी जाती है।
5. साहसी विनियोजकों के लिये अनुपयुक्त निर्भीक अंशधारी पूर्वाधिकार अंशों का कम क्रय करते हैं। क्योंकि लाभ में हिस्सा तथा मताधिकार नहीं देता है।

7.4 अंशों के निर्गमन की प्रक्रिया

(क) **प्रविवरण का निर्गमन–** जनता को अंशों के निर्गमन के लिये प्रविवरण का निर्गमन आवश्यक है। प्रविवरण से आशय जनता को कम्पनी के अंशों को क्रय करने के लिये खुले आमंत्रण से है। निजी कम्पनी के लिये प्रविवरण का

निर्गमन आवश्यक नही है तथा लोक कम्पनी के निजी रूप में अपने अंशों के निर्गमन की दशा में प्रविवरण आवश्यक नहीं है। प्रविवरण को अनुपस्थिति में स्थानापन्न प्रविवरण का निर्गमन आवश्यक है। प्रविवरण में संचालकों के नाम, निर्गमन की शर्तें आदि से संबंधित सूचनायें दी होती है। इसमें निर्गमन की खुलने के प्रारम्भिक तिथि, आंवटन व आवंअन पर भुगतान योग्य राशि तथा निर्गमन के बन्द होने की तिथि का भी उल्लेख होता है।

(ख) **अंशो का आवेदन–** एक व्यक्ति जो कम्पनी के अंशों में क्रय का इच्छुक है, को प्रविवरण उल्लिखित निग्रमन की अंतिम तिथि के पूर्व, अंशों के आवेदन पत्र के निर्धारित प्रारूप को, आवेदन राशि के साथ भरकर, कम्पनी में जमा करना से होता है।

- **अधि निर्गमन–** यदि जनता द्वारा आवेदित अंशों की संख्या कम्पनी में निर्गमित अंशों से अधिक होता है तो यह अधिक निर्गमन कहलाता है।
- **अल्प निर्गमन–** यदि जनता द्वारा आवेदित अंशों की संख्या, कमपनी द्वारा निर्गमित अंशों से कम होती है तो इसे अल्प निर्गमन कहते हैं।

(ग) **अंशों का आवंटन–** आवेदन प्राप्ति की अंतिम तिथि के बाद निदेशक अंश आवंटन का कार्य प्रारम्भ करते हैं। यद्यपि कमपनी का आवंटन तब तक नहीं कर सकती है जब तक कि उसे प्रविवरण में उल्लिखित न्यूनतम आवेदन राशि निश्चित अवधि नहीं प्राप्त होती है। कम्पनी के निदेशक, निदेशक मण्डल की सभा में अंशों के आवंटन, जिसमें आवंटित अंशो की संख्या, क्रम संख्या तथा वर्ग का स्पष्ट उल्लेख करते हुये, का प्रस्ताव पारित करते हैं। इसके पश्चात संबंधित आवेदकों को आवंटन पत्र जारी किया जाता है। ऐसे आवेदकों को जिसको अंश नहीं आवंटित हुआ है, को अस्वीकृति पत्र तथा आवेदित राशि को लौटाया जाता है।

- **अंशतः आवंटन–** अंशतः आवंटन में कम्पनी कुछ आवेदनों को निरस्त कर उनकी आवंटन राशि को वापस कर देती है तथा शेष आवेदकों को अंशों की आवंटित करती है।
- **Pro-rata आवंटन–** Pro-rata आवंटन को कम्पनी सभी आवेदकों को अंशों का आवंटन करती है, परन्तु आवंटित अंश, आवेदित अंश से कम होते हैं उदाहरण राम ने 300 अंशों के लिये आवेदन किया तथा उन्हें 200 अंशों का आवंटन होता है।

(घ) **अंशों पर याचना–** अंशों पर बकाया राशि, प्रविवरण के अनुसार किस्तों में एकत्रित की जाती है। ऐसी किश्तों को अंशों पर याचना कहते हैं। इन्हें आवंटन राशि, प्रथम याचना, द्वितीय याचना आदि'' कहा जाता है।

(ड.) **Calls in Arrears-अवशिष्ट याचना–** कुछ अंशधारी अपनी बकाया राशि का भुगतान समय पर नही कर पाते हैं, तो ऐसी राशि को एक खाते में हसतान्तरित कर दिया जाता है, जिसे अवशिष्ट याचना खाता कहा जाता है। आर्थिक चिट्ठे में अवशिष्ट याचना खाते में शेष को प्राप्ति पूँजी में से घटाया जाता है।

(च) **अन्तिम याचना–** कम्पनी अधि0 की धारा 92 के अनुसार, यदि कमपनी अपने अन्तर्नियमों द्वारा अधिकृत है, तो कम्पनी अपने अंशधारी से उसमें अंशों पर बकाया सम्पूर्ण या अंशतः राशि, अग्रिम याचना के रूप में प्राप्त कर सकती है। अग्रिम याचना पर लाभाँश का भुगतान नहीं होता है। अग्रिम याचना पर 6 प्रतिशत ब्याज किया जाता है।

7.5 अंशों के निर्गमन की शर्तें

एक लिमिटेड कम्पनी अंशों का निर्गमन निम्न प्रकार कर सकती है–

(i) रोकड़ में अतिरिक्त अन्य प्रतिफल में या रोकड़ में या कोषों के पूँजीकरण में अंशों का निर्गमन।

(ii) अंशों पर सममूल्य पर निर्गमन, जैसे अंकित मूल्य या नाममात्र का मूल्य

(iii) अंशों का प्रीमियम का निर्गमन, जैसे अंकित मूल्य से अधिक

(iv) अंशों का छूट पर निर्गमन, जैसे अंकित मूल्य से कम मूल्य

7.6 अंशों का अधिमूल्य पर निर्गमन

जब अंशों का निर्गमन उसके नाममात्र के मूल्य से अधिक पर किया जाता है तो इसे अंशों का प्रीमियम पर निर्गमन कहा जाता है। प्रीमियम का निर्धारण सेबी द्वारा दिये गये दिशा निर्देशों के अनुसार निदेशक मण्डल द्वारा किया जाता है। ऐसी एकत्रित अंश प्रीमियम की राशि को एक अलग खाते में क्रेडिट किया जाता है जिसे ''प्रतिभूति प्रीमियम खाता'' कहते हैं। यद्यपि प्रतिभूति प्रीमियम कम्पनी का लाभ होता है, परन्तु इसे आयगत लाभ न मानकर पूॅजीगत लाभ माना जाता है, इसलिये इसको उपयोग कम्पनी अधिनियम की धारा 78 में दिये गये उद्देश्यों के लिये ही किया जाता है–

1. कम्पनी के अनिर्गमित अंशों को कम्पनी` सदस्यों में पूर्णदत्त बोनस अंशों के रूप में निर्गमित करने के लिए।
2. कम्पनी के प्रारम्भिक व्यय को अपलिखित करने के लिए।
3. कम्पनी के अंशों या ऋण–पत्रों के निर्गमन में आये हुए व्यों, कमीशन या छूट को समाप्त करने के लिए।
4. कम्पनी के विमोचनशील पूर्वाधिकार अंशों या ऋण–पत्रों के भुगतान पर देय प्रीमियम का भुगतान करने के लिए।

7.7 अंशों का कटौती पर निर्गमन

कम्पनी अधिनियम निमन शर्तों को पूर्ण करने पर ही अंशों को छूट पर निर्गमित करने की अनुमति देते हैं।

1. कम्पनी की साधारण सभा में अंशो को छूट पर निर्गमित करने का प्रस्ताव पारित हो गया है तथा कम्पनी विधान मण्डल ने अनुमति दे दी है।
2. छूट की दर 10 प्रतिशत या उस प्रतिशत से अधिक नहीं होनी चाहिए जिसके लिए कम्पनी विधान मण्डल कुछ विशेष दशाओं में अनुमति दे।
3. इस प्रकार का निर्गमन कम्पनी को व्यापार आरम्भ करने का अधिकार मिलने की तिथि से एक वर्ष बाद ही किया जा सकता है।

4. छूट पर दिये जाने वाले अंशों का निर्गमन कम्पनी विधान मण्डल की अनुमति प्राप्त होने के दो महीने के अन्दर कर देना चाहिए। इस अवधि को कम्पनी विधान मण्डल द्वारा बढ़ाया भी जा सकता है।
5. अंशों के निर्गमन से सम्बन्धित प्रत्येक प्रविवरण में छुट से सम्बन्धित तथ्यों का वर्णन होना परम आवश्यक है।
6. छूट पर निर्गमन केवल उसी श्रेणी के अंशों का किया जा सकता है जिसका निर्गमन पहले भी हो चुका है।

7.8 अंशों का हरण

जब अंशों का आवंटन आवेदक को कर दिया जाता है तो अंशधारी तथा कम्पनी के मध्य संविदा हो जाता है। इसमें अंशधारी, कमपनी द्वारा याचना करने पर उसके बकाया राशि तथा प्रीमियम, यदि हो, तो देनेके लिये बाध्य होता है। यदि अंशधारी याचना राशि देने में असमर्थ होते हैं तो कम्पनी के निदेशक, अन्तर्नियमों द्वारा अधिकृत होने पर, उसके अंशों को जब्त कर लेते हैं, इसे अंशों का हरण कहा जाता है। अंशों का हरण केवल याचना राशि के भुगतान न करने की दशा में होता है। अंशों के हरण की दशा में व्यक्ति कम्पनी अपनी सदस्यता तथा उसके द्वारा चुकायी गयी अंश पूंजी तथा प्रीमियम की राशि खो देता है। उसका नाम सदस्यों के रजिस्टर से काट दिया जाता है। निदेशक, अंशों के हरण के पूर्व पार्षद अन्तर्नियम द्वारा निर्धारित सभी वैधानिक औपचारिकतायें पूरी करते हैं।

7.9 बोनस अंशों का निर्गमन

लाभार्जन वाली कमपनियाँ अपने लाभ के अंश पूँजी में बदलने की इच्छुक रहती है। इसके लिये कम्पनियाँ बोनस अंशों का निर्गमन करती है। बोनस अंशों के निर्गमन को लाभ का अंश पूँजी में परिवर्तन या लाभों का पूजीकरण भी कहा जाता है। बोनस दो प्रकार का होता है–

(i) अंशतः दत्त अंशों का पूर्ण दत्त बोनस अर्थों में निर्गमन (बिना अंशधारियों से बकाया राशि मांगे)
(ii) पूर्णदत्त समता अंशों का विद्यमान अंशधारियों में बोनस अंश के रूप में निर्गमन

7.10 अधिकार अंश

कम्पनी अधिनियम की धारा 94 के अनुसार, ''कम्पनी अपनी साधारण सभा में सामान्य प्रस्ताव पारित कर किसी भी समय अतिरिक्त अंशों का निर्गमन कर सकती है। धारा 81 के अनुसार ऐसे अतिरिक्त अंशों को वर्तमान अंशधारियों को उनके द्वारा धारित अंशों के अनुपात में आवंटित किया जाता है। ऐसे अतिरिक्त अंश अधिकार अंश कहलाते हैं। इस संबंध में निम्न वैधानिक प्रावधान है–

(i) ऐसा निर्गमन कम्पनी की अधिकृत पूँजी की सीमाओं के अनतग्रत हो, यदि ऐसा नहीं है तो सर्वप्रथम अधिकृत पूँजी को बढ़ाना चाहिये।
(ii) इन अंशों को वर्तमान अंशधारियों में उनके द्वारा धारित अंशों को चुकाना पूँजी के अनुपात में देना चाहिये।

(iii) ऐसा निर्गमन कम्पनी में निर्माण के दो वर्ष बाद या होना चाहिये।

(iv) ऐसे अंशों को वर्तमान अंशधारियों को देने का प्रस्ताव लिखित नोटिस के रूप में होना चाहिये जिसमें प्रस्तावित अंशों की संख्या तथा उसकी स्वीकृति भी समय सीमा होनी चाहिये जिसमें प्रस्ताव के बाद कम से कम 15 दिन का समय देना चाहिये।

(v) यदि अन्तर्नियम द्वारा अधिकृत हो, तो ऐसे प्रस्ताव में अंशधारियों को अंशों को अन्य व्यक्तियों को विक्रय का अधिकार होना चाहिये।

(vi) वर्तमान अंशधारियों द्वारा न लिये गये अंशों को निदेशक मण्डल कम्पनी के हित में विक्रय कर सकते हैं।

(vii) ऐसे अधिकार अंशों को वर्तमान अंशधारियों को प्रस्तावित करने की आवश्यकता नहीं है, यदि–

  (क) कम्पनी की साधारण सभा में अंशधारियों द्वारा इस आश्य का विशेष प्रस्ताव पारित कर किया गया है।

  (ख) ऐसे अंशों की वर्तमान अंशधारियों ने अतिरिक्त अन्य वाक्यों की देने का साधारण प्रस्ताव पारित कर दिया गया है तथा इसका केन्द्र सरकार से अनुमोदन ले लिया गया है।

7.11 अंशों का समर्पण

जब कोई अंशधारी अपने अंशों की याचना राशि का भुगतान करने में असमर्थ होने के कारण स्वेच्छा से अंशों को कम्पनी को वापस कर देता है, तो इसे अंशों का समर्पण कहते हैं कम्पनी ऐसे वापस किये गये अंशों को निरस्त कर देती है। अंशों का समर्पण अंशधारी द्वारा किया गया स्वैच्छिक कृत्य है जबकि अंशों का हरण कम्पनी द्वारा की गयी अनिवार्य कार्यवाही है। अंशों के समर्पण तथा हरण, दोनों का प्रभाव समान होता है, अंशों का निरस्तीकरण, अन्तर्नियमों द्वारा अधिकृत होने पर ही कम्पनी अंशों के समर्पण भी स्वीकृति देती है। अंशों के समर्पण का लेखा उसी प्रकार होगा, जिस प्रकार अंशों के हरण का लेखा होता है।

7.12 विभेदात्मक मताधिकार वाले अंश

भारतीय लोक कम्पनियां विभिन्न प्रकार के मताधिकार वाले अंशों का निर्गमन करती है। पहले, केवल निजी लि0 कम्पनी ही इस प्रकार कर सकती थी। सरकार द्वारा कम्पनी (विभेदात्मक मताधिकार के साथ अंश पूँजी का निर्गमन नियम, 2001 के निर्गमित करने के बाद सभी भारतीय कम्पनियां लाभाँश, मताधिकार तािक अन्य के संबंध में विभेदात्मक अधिकारों के साथ अंशों का निर्गमन कर सकती है, यदि वे निम्न शर्तों पूरी करती है–

(i) विभेदात्मक अधिकार वाले अंशों के निर्गमन के वर्श से पूर्व में तीन वित्तीय वर्षों में कम्पनी ने लाभ अर्जित किया है।

(ii) ऐसे अंशों में निर्गमन वाले कार्य के पूर्व के 3 वित्तीय वर्षों में कम्पनी द्वारा अपने वार्षिक प्रपत्र तथा वार्षिक खातों को दाखिल करने में कोई पुष्टि न की गयी हो।

(iii) कम्पनी द्वारा बकाया, जमा, जमा पर ब्याज या ऋणपत्रों का शोधन या लाभांश का भुगतान नियत तिथि पर करने कोई त्रुटि न की गयी हो।

(iv) कमपनी अपने अन्तर्नियमों द्वारा विभेदात्मक मताधिकार वाले अंशों में निर्गमन के लिये अधिकृत होना चाहिये।

(v) कम्पनी, भारतीय प्रतिभूति एवं विनिमय अधिनियम, 1992 प्रतिभूति संविदा (नियमन) अधि0, 1956 तथा विदेशी विनिमय प्रबंध अधि0 1999 के अन्तर्गत किसी अपराध में दोष सिद्ध न हों।

(vi) कम्पनी ने साधारण सभा में अपने विभेदात्मक मताधिकार वाले अंशों के निर्गमन के द्वारा अंश पूँजी की बढ़ाने का प्रस्ताव पारित करा लिया है। सूचीबद्ध लोक कम्पनी की दशा में कमपनी ने अंशधारियों से डाक मत द्वारा अनुमोदन ले लिया है तथा सभा को नोटिस में, जिसमें प्रस्ताव पारित होना है, निम्न व्याख्यात्मक कथन होना चाहिये–

(क) मताधिकार की दर जो विभेदात्मक मताधिकार वाली समता अंश पूंजी में होगी।

(ख) मताधिकारों में उच्चावचन की दर।

(ग) इस आशय की घोषणा कम्पनी द्वारा मताधिकार वाली समता अंश पूॅजी का विभेदात्मक मताधिकारों वाली समता अंश पूँजी में परिवर्तन नहीं किया जायेगा अथवा विभेदात्मक मताधिकार वाली समता अंश पूँजी का मताधिकार वाली समता अंश पूॅजी में परिवर्तन नहीं किया जायेगा।

(घ) इस आशय का कथन कि विभेदात्मक मताधिकार वाली अंश पूँजी, कम्पनी की कुल अंश पूँजी के 25 प्रतिशत से अधिक नहीं होगी।

7.13 साराँश

अंशों के विक्रय का प्रस्ताव पूँजी में वृद्धि करने के लिये किया जाता है। इसे अंशों का निर्गमन कहते हैं। कम्पनी के अंशों के क्रेता को अंशधारी कहते हैं तथा तथा वह अंशों का क्रय करके कम्पनी का स्वामि हो जाता है। अतः अंश, पूँजी की अविभाज्य इकाई है। यह कम्पनी तथा अंशधारी के मध्य स्वामितव के संबंध को प्रदर्शित करती है। भागयुक्त पूर्वाधिकार अंशों की दशा में लाभांश तब तक एकत्रित होता रहता है, जब तक कि उसका भुगतान नहीं हो जाता है जबकि अभागयुक्त पूर्वाधिकार अंशों की दशा में केवल उसी वर्ष के लाभांश का भुगतान किया जाता है। यदि कम्पनी में अपर्याप्त लाभ होता है तो उस वर्ष पर्वूाधिकार अंशधारियो को लाभांश का भुगतान नहीं होगा।

7.14 शब्दावली

- **समता अंश–** समता अंश वे अंश है जो पूर्वाधिकार अंश नहीं होते है।
- **पूर्वाधिकार अंश–** पूर्वाधिकार अंश ऐसे अंश होते हैं जिन्हें समता अंशों की तुलना में निम्न दो पूर्वाधिकार प्राप्त होते हैं।

  (i) लाभॉश का पूर्वाधिकार (ii) पूँजी वापसी का पूर्वाधिकार

- **अधिकार अंश–** अधिकार अंश वह अंश है जो कम्पनी वर्तमान अंशधारियों को बाजार से कम मूल्य पर प्रदान किया जाता है।

7.15 बोध प्रश्न

खाली स्थान भरो–

1. अंश.................... की सबसे छोटी इकाई है।
2. समता अंश के धारक कम्पनी के...................होते हैं।
3. ....अंश वर्तमान अंश धारियों को बिना किसी लागत के दिये जाते हैं।
4. कम्पनी के अंश दो प्रकार होते हैं समता अंश तथा ....

7.16 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. पूँजी 2. स्वामी 3. बोनस 4. पूर्वाधिकार अंश

7.17 स्वपरख प्रश्न

1. 'अंश' शब्द की परिभाषा दीजिये तथा इसके विभिन्न प्रकारों की विवेचना कीजिये।
2. समता अंश तथा पूर्वाधिकार अंश के लाभों तथा दोषों का वर्णन कीजिए।
3. अंशो के निर्गमन की प्रक्रिया का वर्णन कीजिए।
4. विभिन्न मताधिकार वाले अंशों का वर्णन कीजिये।
5. अंश प्रमाण पत्र पर संक्षिप्त टिप्पणी कीजिये।

7.18 सन्दर्भ पुस्तकें

1. चन्द्रा पी0 (2009) फाइनेन्सियल मैनेजमेन्ट, नई दिल्ली, द्वारा मैग्रा हिल कं0
2. खान एम0वी0 (2011) फाइनेन्सियल मैनेजमेन्ट, नई दिल्ली, टाटा मैकग्राहिल कं0
3. आर0एस0 (2008) फाइनेन्सियल मैनेजमेन्ट, नई दिल्ली, एक्सेल कं0
4. के0आर0 बालचान्दरी, बिजने लॉ फार मैनेजमेन्ट, हिमालय पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली।
5. एस0एस0 गुलशन एण्ड जी0के0 कपूर, बिजिनेस लॉ न्यू एज इण्टरनेशनल पब्लिशर्स, नई दिल्ली।
6. एस0सी0 कुच्छल, मर्केन्टाइल लॉ, विकास पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली।
7. गुप्ता एस0के0 फाइनेन्सियल मैनेजमेन्ट, नई दिल्ली, कल्याणी पब्लिकेशन्स।

इकाई 08 अंश प्रमाण पत्र अंश वारंट तथा डीमैट

इकाई की रूपरेखा

8.1 प्रस्तावना
8.2 अधिपत्र प्रमाण पत्र
8.3 अधिपत्र के प्रकार
8.4 अधिपत्र की विशेषतायें
8.5 लाभ
8.6 अंश तथा वारंट में अंतर
8.7 स्टाक वारंट का क्रय तथा विक्रय
8.8 वारंट का मूल्यांकन
8.9 अंश प्रमाण पत्र का अर्थ
8.10 डीमैट
8.11 डीमैट के लाभ
8.12 डिपाजिटरी पार्टीसीपेन्ट (डी0पी0)
8.13 डीमैट के दोष
8.14 सारांश
8.15 शब्दावली
8.16 बोध प्रश्न
8.17 बोध प्रश्नों के उत्तर
8.18 स्वपरख प्रश्न
8.19 सन्दर्भ पुस्तकें

उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप इस योग्य हो सकेंगे कि –

- वारंट प्रमाण पत्र को स्पष्ट कर सकें।
- अंश तथा वारंट में अंतर कर सकें ।
- डीमैट को स्पष्ट कर सकें ।
- डी0पी0 का वर्णन कर सकें।

8.1 प्रस्तावना

कम्पनी की पूँजी समान मूल्य वाली इकाईयों में विभाजित होती है जिसे अंश कहते हैं। इन अंशों को क्रय करने वाले निवेशक को प्रमाणस्वरूप (स्वामित्व) कम्पनी द्वारा प्रमाण पत्र दिया जाता है जिसे अंश प्रमाण पत्र कहते हैं। इसमें अंशों की संख्या क्रम संख्या, मूल्य, कम्पनी का नाम जारीकर्ता का हस्ताक्षर, सहित आदि होती है। वर्तमान समय अंशों का लेन–देन भौतिक न होकर अभौतिक रूप में हो रहा है जिसे हम उीमैट कहते हैं। डीमैट व्यवस्था में अंश का स्वामित्व इलेक्ट्रानिक रूप (अभौतिक) में कम्प्यूटर पोर्टल पर होता है। इसे रखने वाले को DP (डिपाजिटरी पार्टिसिपेन्ट) कहते हैं।

8.2 अधिपत्र प्रमाण पत्र

अधिपत्र एक विकल्प की तरह होता है। यह धारक को अधिकार देता है परन्तु किसी विशिष्ट प्रतिभूति को निश्चित मूल्य, मात्रा तथा भविष्य में क्रय हेतु बाध्य नहीं करता है। अधिपत्र कम्पनी द्वारा जारी किया जाता है जबकि विकल्प स्कन्ध विपणि का प्रपत्र है। वारंट का प्रतिनिधित्व करने वाली प्रतिभूति सामान्यतः समता अंश होते हैं जिन्हें उसमें धारक निवेशक द्वारा न दिया जाकर, जारी करने वाली कम्पनी द्वारा दिया जाता है।

8.3 अधिपत्र के प्रकार

वारंट दो प्रकार के होते हें–

1. काल (Call) वारंट
2. पुट (Put) वारंट

काल (Call) अधिपत्र : Call अधिपत्र से आशय निर्दिष्ट संख्या वाले अंशों से है जिन्हें निश्चित तिथि पर या उससे पूर्व जारीकर्ता कम्पनी से विशिष्ट मूल्य पर, क्रय किया जा सकता है।

पुट (Put) अधिपत्र : पुट (Put) अधिपत्र से आशय ऐसे निश्चित समता अंशों से है जिन्हें नियत तिथि पर या उससे पूर्व, जारीकर्ता को निश्चित मूल्य वापस विक्रय कर सकते हैं।

अन्य अधिपत्र : परम्परागत अधिपत्र को बाण्ड के साथ जोड़कर जारी किया जाता है, जिसे अधिपत्र सहित कहा जाता है। यह क्रेता को स्टाक क्रय करने का अधिकार देता है। नग्न अधिपत्र वह अधिपत्र है जो बिना बाण्ड के जारी किया जाता है तथा पारंपरिक अधिपत्र की तरह स्कन्ध विपणि में इसका लेन–देन किया जाता है।

8.4 अधिपत्र की विशेषतायें

(क) वारंट प्रमाण पत्र में विनियोग के संबंध में विवरण रहता है। सभी वारंट में निश्चित परिपक्वता तिथि होती है।

(ख) वारंट, अंशों की निश्चित संख्या से संबंधित होता है। इसके साथ–साथ यह उपज, इण्डेक्स तथा करेन्सी का भी प्रतिनिधित्व करता है।

(ग) स्ट्राइक मूल्य वह राशि है, जिसे मॉग वारंट के क्रय या पुट वारंट के विक्रय के क्रम में भुगतान किया जाता है। स्ट्राक मूल्य का भुगतान, विलेख के हस्तान्तरण का परिणाम है।

(घ) परिवर्तन अुनपात, एक विनियोग इकाई का क्रय या विक्रय हेतु आवश्यक बारह की संख्या है। जैसे XYZ कम्पनी के स्टाक को क्रय करने के परिवर्तन अनुपालन (Commission Ratio) 3 : 1 है तो इसका अर्थ है धारक को एक अंश को क्रय करने के लिये 3 वारंट की आवश्यकता है। सामान्यतः यदि परिवर्तन अनुपात (Conversion Rate) ऊँचा है, तो अंश का मूल्य कम होगा तथा यदि परिवर्तन अनुपालन कम है तो अंश का मूल्य अधिक होगा।

वारंट में निवेश : वारंट हस्तान्तरणीय प्रमाण पत्र होते हें तथा ये मध्यम स्तरीय काल से दीर्घकाल के निवेश योजना के लिये आकर्षक होते हें। यह अधिक जोखिम, उच्च रिटर्न वाला निवेश यंत्र है। यह सट्टेबाजों के लिये आकर्षक विकल्प है। इसमें उच्च पारदर्शिता होती है तथा निजी निवेशकों के लिये अच्छा विकल्प है। ऐसा इसलिये है क्योंकि सामान्यतः वारण्ट की लागत कम होती है तथा प्रारम्भिक निवेश की कम राशि की आवश्यकता होती है।

8.5 लाभ

(क) वारंट के लाभ को निम्न उदाहरणों से देखते हैं जैसे XYZ अंश का वर्तमान बाजार मूल्य 1.50 $ प्रति अंश है। 1000 अंशों को क्रय करने के लिये निवेशक को $ 1500 की आवश्यकता होगी। अब यदि निवेशक, वारंट (जो एक अंश का प्रतिनिधित्व करता है) को क्रय करने का विकल्प चुनता है, जो 0.50 $ प्रति अंश का है, इससे निवेशक को 1500 $ में 3000 अंश मिलेंगे।

(ख) क्योंकि वारंट की कीमत कम है इसलिये लीवरेज तथा गियरिंग उच्च होगा। इसका अर्थ है कि इसमें अधिक पूँजीगत लाभ तथा हानि संभावित है। जबकि दोनों, अंश का मूल्य तथा वारंट का मूल्य समानान्तर है, परन्तु कीमतों में प्रारम्भिक अंतर के कारण लाभ/हानि के प्रतिशत में महत्वपूर्ण अंतर होगा।

(ग) एक अन्य उदाहरण देखते हैं जैसे– XYZ केअंश में 0.30 $ प्रति अंश से 1.50 $ लाभ होता है, जो 1.80 $ पर बन्द होता है।यह प्रतिश लाभ 20 प्रतिशत होगा।यदि वारंट में0.30 $ लाभ होता है जो 0.50 $ से 0.80$ है, तो प्रतिशत लाभ 60 प्रतिशत होगा।

(घ) उपरोक्त उदाहरण में गियरिंगतत्व की गणना अंश के वास्तविक मूल्य में वारंट के वास्तविक मूल्य से भाग देकर की गयी है (1.50 $ /0.50 $ = 3)

(ड.) बाजार में तेजी के दौरान निवेशक वारंट से अधिक लाभ कमाने पर यह मंदी वाली बाजार के दौरान निवेशक की सुरक्षा प्रदान कर सकते हैं। ऐसा इसलिये है क्योंकि जब अंश का मूल्य गिरना शुरू होता है तो वारंट में अधिक नहीं होती है क्योंकि उसका मूल्य, वास्तविक मूल्य की तुलना में पहले से कम है।

8.6 अंश तथा वारंट में अंतर

स्टाक विकल्प दो व्यक्तियों के मध्य संविदा है जो धारक को अदत्त स्टॉक को, निश्चित मूल्य तथा निश्चित तिथि पर क्रय/विक्रय करने का अधिकार देता है, परन्तु दायित्व नहीं देती है। विकल्पों का क्रय तभी किया जाता है, जब स्टॉक के मूल्य कम या अधिक होने का विश्वास होता है। (यह विकल्प के प्रकार पर निर्भर करता है) उदाहरण यदि स्टॉक का वर्तमान मूल्य 40 $ है तथा उसके अगले माह बढ़कर 50 $ होने का विश्वास है तो आय उसका क्रय 40$ में करेंगे जिससे अगले माह उसे 50$ में विक्रय कर दे तथा 10 $ का लाभ कमायें। स्टॉक विकल्प का प्रतिभूति विपणि में स्टॉक की लेन–देन होता है।

स्टाक वारण्ट, स्टॉक विकल्प की तरह होता है, क्योंकि यह आपको कम्पनी के स्टाक की निश्चित मूल्य तथा निश्चित तिथि पर क्रय करने का अधिकार देता है। फिर भी स्टॉक वारंट, विकल्प से दो आधारों पर भिन्न है– स्टोक वारण्ट कम्पनी द्वारा स्वयं जारी किया जाता है।

कम्पनी द्वारा नये अंशों का निर्गमन लेन–देन के लिये किया जाता है। स्टॉक वारण्ट कम्पनी द्वारा सीधे निर्गमित किया जाता है जब स्टॉक विकल्प का उपयोग किया जाता है तो एक निवेशक द्वारा दूसरे निवेशक को अंश दिये या लिये जाते हैं, जबकि स्टाक वारंट का उपयोग किया जाता है।

कम्पनियॉं स्टाक वारंट को धन प्राप्त करने के लिये जारी करती है। जब स्टाक आप्शन का क्रय तथा विक्रय होता है तो स्टाक की धारक कम्पनी को ऐसे लेन देन से कोई धन नहीं प्राप्त करती है। जबकि स्टाक वारण्ट कम्पनी के लिये समता (स्टाक) के माध्यम से धन प्राप्ति का एक रास्ता है। स्टाक वारंट, अंशों में धारण का सक अच्छा रास्ता है क्योंकि वारंट का मूल्य, स्टाक आप्शन से कम होता है। आप्शन की अधिकतम अवधि 2 से 3 वर्ष है, जब स्टॉक वारंट की अवधि 15 वर्ष है। इसलिये कई मामलों स्टाक वारंट एक अच्छा निवेश सिद्ध हो सकता है।

8.7 स्टाक वारण्ट का क्रय तथा विक्रय

(क) स्ट्राइक मूल्य वह राशि है जो (काल) पर क्रय करने तथा 'पुट' पर विक्रय करने के क्रम में भुगतान की जाती है।

(ख) स्ट्राइक मूल्य का भुगतान का परिणाम निश्चित स्टाक का हस्तान्तरण है।

(ग) बदला अनुपात (Conversion Ratio) से आशा एक अंश का क्रय/विक्रय करने के बदले आवश्यक संख्या है। यदि बदला अनुपात (Conversion Ratio) 4:1 है तो इसका अर्थ है कि एक अंश का क्रय करने के लिये धारक को 4 की आवश्यकता है।

(घ) सामान्यतः जब बदला अनुपात (Conversion Ratio) ऊँचा हो तो अंश की कीमत गिरेगी तथा अनुपात निम्न होने पर अंश की कीमत में वृद्धि होगी।

8.8 वारण्ट का मूल्यांकन

स्टाक वारण्ट के बाजार मूल्य के दो तत्व हैं:–

आन्तरिक मूल्य : यह स्ट्राइक कीमत तथा स्टॉक की कीमत का अंतर होता है। यदि स्टाक कीमत, स्ट्राइक कीमत से कम है तो स्टाक वारण्ट का आन्तरिक मूल्य नहीं होगा, सिर्फ समय मूल्य होगा। इसे 'आउट ऑफ द मनी' कहा जाता है। विपरीत स्थिति में वारण्ट का आन्तरिक मूल्य होगा जिसे 'इन द मनी' कहते हैं।

समय मूल्य : वह स्टाक, जो वारंट उपलब्ध कराता है, में उच्चावचन को समय मूल्य कहा जाता है। वारंट परिपक्वता जितनी लम्बी अवधि होगी, वारण्ट का समय मूल्य उतना ही अधिक होगा। जितना अधिक स्टॉक के मूल्य में उच्चावचन होगा, उतना ही वारंट की कीमत अधिक होगी।

उपरोक्त दो मूलय निवेशक को निवेश के मूल्य के संबंध में विचार करने में सहायक होते हैं।

8.9 अंश/स्टाक प्रमाण पत्र का अर्थ

कम्पनी अधिनियम के अनुसार सटाक प्रमाण पत्र (जो स्टाक का प्रमाण पत्र या कम्पनी के अंश प्रमाण पत्र कहलाता है) एक विधिक प्रपत्र है जो स्टाक में अंश की निश्चित संख्या के स्वामित्व को प्रमाणित करता है। वृहद कम्पनियों में अंशों का क्रय हमेशा स्टाक प्रमाण पत्र में परिवर्तित नहीं होता है (जैसे निजी व्यक्ति द्वारा कम संख्या में अंशों का क्रय) अंश प्रमाण पत्र आवंटी या अंशों के हस्तान्तरिती के स्वामित्व का प्रपत्र है। यह कम्पनी द्वारा अपने उन सदस्यों को जारी किया जाता है जिनका नाम कम्पनी के सदस्यों के रजिस्टर में पंजीकृत होता है।

अंश प्रमाण पत्र प्रमाणित करता है–

(क) अंशों का स्वभाव– समता या पूर्वाधिकार

(ख) सदस्य या अंशधारी का नाम, जो अंशों का स्वामी है, क्रम संख्या तथा

(ग) विभिन्न स्तरों–आवेदन, आवंटन, प्रथम याचना, द्वितीय याचना तथा अंतिम याचना पर अंशधारी द्वारा कम्पनी को किया गया भुगतान।

(घ) सभी रिक्त फार्म, जो अंश प्रमाण पत्र के रूप में जारी किये जाने हैं को मुद्रित होने चाहिये तथा ऐसी छपाई, बोर्ड के प्रस्ताव द्वारा अधिकृत होना चाहिये। रिक्त फर्मों पर मशीन से, क्रम संख्या पड़ी होनी चाहिये तथा इसे, बोर्ड के सचिव या अन्य अधिकृत व्यक्ति की सुरक्षा मे होना चाहिये।

(ड.) कम्पनी द्वारा निगर्मित अंश प्रमाण पत्र पर कम से कम दो निदेशकों के हस्ताक्षर होने चाहिये, जिसमें से एक प्रबंध निदेशक होना चाहिये, यदि कम्पनी में एक निदेशक है तथा कम्पनी सचिव या प्राधिकृत व्यक्ति के हस्ताक्षर होने चाहिये।

(च) अंश प्रमाण पत्र को कम्पनी की सार्वमुद्रा के अन्तर्गत जारी किया जाता है जिसे कम्पनी (अंश प्रमाण पत्रों का निर्गमन) निय 1960 तथा कम्पनी के पार्षद सीमानियम में उल्लिखित प्रावधानों के अनुसार निदेशक, सचिव या अधिकृत हस्ताक्षरकर्ता की उपस्थिति मं लगाया गया हो। हालाकि निदेशक अंश प्रमाण पत्र पर अपना हस्ताक्षर किसी मशीन या अन्य पत्र के माध्यम से कर सकते हैं। परन्तु सचिव या अधिकृत हस्ताक्षरकर्ता, अंश प्रमाणपत्र अपने हाथ से हस्ताक्षर कर सकते हैं। कम्पनी द्वारा जारी अंश प्रमाण पत्रों की निम्न द्वारा विनियमित किया जाता है।

(i) कम्पनी अधिनियम 1956

(ii) कम्पनी (अंश प्रमाण पत्रों का निर्ममन) नियम, 1960

(iii) मान्यता प्राप्त स्कंध विपणि के साथ कम्पनी को लिस्टिंग समझौता

(iv) सेवी के नियम तथा विनियम

(v) कम्पनी का पार्षद अन्तर्नियम

कम्पनी अधिनियम 1956 की धारा 113 के अनुसार प्रत्येक कम्पनी द्वारा उसके अंशों के आवंटन के पश्चात 3 माह के अन्दर तथा ऐसे अंशों के हस्तान्तरण के पंजीकरण का आवेदन करने के 2 माह के अन्दर, धारा 53 में दी गयी प्रक्रिया के अनुसार ऐसे आवंटित/हस्तांतरित अंशों के प्रमाण पत्रों को सुपुर्द किया जायेगा।

उपरोक्त 2 माह तथा 3 माह की अवधि की जिसमें आवंटित/हस्तान्तरित अंशों/ऋण पत्रों के प्रमाण पत्रों को सुपुर्द होना चाहिये, 9 माह तक कम्पनी लॉ बोर्ड द्वारा बढ़ाया जा सकता है।

यहाँ ध्यातव्य है, वह कम्पनियाँ जिनके अंशों का अभौतिकीकरण (Dematerialization) हो चुका है तथा उसके अंशों का रजिस्टर्ड स्वामी डिपाजिटरी है, को अंशों के आवंटन पर depository को तुरंत सूचना देना आवश्यक है तथा depository को अंशों के स्वामी के नाम इलेक्ट्रानिक अभिलेखों को तुरंत दर्ज कराना आवश्यक है।

8.10 डीमैट

भारत में अंशों तथा प्रतिभूतियों के प्रमाण पत्रों को निवेशक भौतिक रूप में न रखकर इलेक्ट्रानिक रूप में डीमैट खाते में रखा जाता है, निवेशक, निवेश दलाल (या उपदलाल) के यहाँ पंजीकृत होकर डीमैट खाता खोलते हैं। डीमैट खाता संख्या से सभी प्रतिभूति व्यापार के लेन–देन इलेक्ट्रानिक रूप में सम्पन्न होते हैं। प्रत्येक अंशधारी को अपने अंशों के लेन–देन के लिये डीमैट खाता होना आवश्यक है।

डीमैट खाते के संचालन हेतु इण्टरनेट पासवर्ड तथा ट्रान्सेक्शन पासवर्ड आवश्यक है। इसके बाद ही प्रतिभूतियों के क्रय तथा हस्तान्तरण किया जा सकता है। एक बार लेन–देन पूर्ण तथा संस्तुत होने पर प्रतिभूतियों का क्रय/विक्रय डीमैट खाते में स्वतः हो जायेगा।

8.11 डीमैट के लाभ

डीमैट खाता, भौतिक अंश प्रमाण पत्रों से संबंधित समस्याओं जैसे हस्ताक्षर भिन्नता, पत्राचार में देरी आदि के कारण सुपुर्दगी न होना आदि को हटाने में सहायता करता है। इसके साथ–साथ यह क्षतिग्रस्त स्टाक प्रमाण पत्रों तथा कपट आदि से संबंधित जोखिम को हटाता है। डीमैट खाता धारक को स्टाम्प ड्यूटी तथा हसतान्तरण प्रपत्रों को भरने से छूट होती है।

1. डीमैट पद्धति का उद्देश्य भारत में इलेक्ट्रानिक भण्डारण अंशों से संबंधित समस्याओं को खत्म कर अंशों तथा प्रतिभूतियों को इलेक्ट्रानिक रूप में रखा तथा संचालित किया जाता है। 1996 के डिपाजिटरी अधिनियम के द्वारा डिपाजिटरी पद्धति के लागू होने के बाद अंशों के क्रय, विक्रय तथा हस्तान्तरण की प्रक्रिया और सरल हो गयी है।
2. डीमैट के लाभ– डीमैट पद्धति के निम्न लाभ हैं–
    - प्रतिभूतियों का धारण आसान तथा सुविधाजनक
    - प्रतिभूतियों का त्वरित हस्तान्तरण
    - प्रतिभूतियों के हस्तान्तरण पर कोई स्टाम्प शुल्क नही
    - कागजी अंशों से अधिक सुरक्षाप्रद
    - प्रतिभूतियों के हस्तान्तरण मेंकागजी कार्यवाही में कमी
    - लेन–देन लागत में कमी

- विषम लाट की समस्या नहीं चाहे एक ही अंश क्रय किया जाय
- डी0पी0 द्वारा अंशों का पारेषण होने के कारण कम्पनियों के Notify करने की आवश्यकता नहीं
- बोनस, समेकन, आदि की दशा में डीमैट खाते का स्वतः क्रेडिट होना
- एक डीमैट खाते में अंशों तथा ऋण प्रपत्री दोनों निवेशों को धारण करना
- व्यापारी किसी भी स्थान से कार्य कर सकता है।

कम्पनी को लाभ : डिपाजिटरी पद्धति, नवनिर्गमन की लागत (जैसे छपाई तथा वितरण लागत) में कमी में सहायता करती है। यह कम्पनी के सचिवीय विभाग, रजिस्ट्रार तथा हस्तान्तरण एजेण्ट की कार्य क्षमता में वृद्धि करती है। यह निवेशकों तथा अंश धारियों को संदेशवाहन तथा समयानुसार सुविधा उपलब्ध कराती है।

निवेशक को लाभ : डिपाजिटी पद्धति भौतिक प्रमाण पत्रों के जोखिम जैसे चोरी, क्षतिग्रस्त होना, कपट होना आदि को कम करता है। यह हस्तान्तरण को सुलभ बनाता है तथा पंजीकरण में देरी को कम करता है। यह निवेशकों को त्वरित संदेशवाहन सुलभ कराता है। इस पद्धति से अंशों में विक्रय होने पर भुगतान तीव्र होता है। यह पद्धति सुपुर्दगी समस्याओं तथा स्टाम्प शुल्क (अंशों के हस्तान्तरण पद) हटाती है।

दलाली का लाभ : यह पद्धति देरी से होने समायोजन को कम करती है। इसमें व्यापार में वृद्धि होने के कारण अकि लाभ होता है। इससे गलत सुपुर्दगी तथा कपट के अवसरों में कमी आती है। जिससे निवेशकों का विश्वास बढ़ता है।

8.12 डिपाजिटरी पार्टिसिपेन्ट

सामान्य शब्दों में डिपाजिटरी एक संस्था है जिसमें पूर्व सत्यापित अंशों को इलेक्ट्रानिक रूप में धारित किया जाता है जो लेन–देन का कुशल समायोजन करती है। डिपाजिटरी प्रतिभागी को निवेशक तथा डिपाजिटरी के बीच मध्यस्थ को डिपाजिटरी प्रतिभागी (DP) कहते हैं। डिपाजिटरी प्रतिभागी (DP) एक वित्तीय संगठन (जैसे बैंक, दलाल, वित्तीय संस्थान या कस्टोडिन) है, जो डिपाजिटरी में एजेण्ट के रूप मे कार्य करते हुये निवेशकों को सेवायें उपलब्ध कराता है। प्रत्येक डी0पी0 (DP) को एक अलग पहचान संख्या दी जाती है जिसे डी0पी0 आई0डी0 (DP-ID) कहा जाता है। मार्च 2006 तक सेवी में 538 डी0पी0 (DP) पंजीकृत थे।

डीमैट परिवर्तन (Demat Conversion) : निवेश के भौतिक अभिलेखों को इलेक्ट्रानिक अभिलेखों में रिकार्ड करना प्रतिभूतियों का अभौतिकीकरण (Dematerialising) कहलाता है। भौतिक प्रतिभूतियों को अभौतिक करने के लिए (Demat) निवेशक को डीमैट रिक्वेस्ट फार्म (DPF) भरना होता है जो डी0पी0 (DP) पर उपलब्ध होता है तथा उसे भौतिक प्रमाण पत्रों के साथ जमा करना होता है। प्रत्येक प्रतिभूति का एक आई0एस0आई0एन0 (ISIN, International Securities Identification

Number) होता है। प्रत्येक ISIN के लिये पृथक डी0आर0एफ0 (DRF) फार्म भरा जाता है।

डीमैट की सम्पूर्ण प्रक्रिया निम्न है : निवेशक प्रमाण पत्रों का अभौतिक कराने हेतु DP में समर्पण करता है।

डीमैट विकल्प : सितम्बर 2011 तक भारत में डीमैट खाता सुविधा उपलब्ध कराने वाले कई सौ डिपाजिटरी प्रतिभागी (DP) थे। बैंक को DP के रूप में रखने में निम्न लाभ हैं। डीमैट खाते के साथ बैंक DP, सामान्यतः निवेशक को तीव्र प्रक्रिया, सुविधा आन लाइन लेन देन के लिये समर्थ बनाता है। सामान्यतः डीमैट खाते से अंशों से क्रय की दशा में बैंक तीसरे दिन क्रेडिट कर देता है। इसी प्रकार विक्रय की राशि तीसरे दिन क्रेडिट हो जाती है। बैंकों की कई शाखायें होने के कारण भी वे लाभप्रद है। कुछ बैंक किसी भी शाखा में डीमैट खाता खोलने का विकल्प देते हें जबकि अन्य बैंकों में शाखाओं के चुनाव में विकल्प प्रतिबंधित है। कुछ निजी बैंक, डीमैट खाते के लिये आन लाइन सुविधा उपलब्ध कराते हैं। इससे निवेशक आन लाइन अपने खाते का स्थिति, लेन–देन, भुगतान आदि को देख सकते हैं।

शुल्क : डीमैट खाता के संचालन में चार मुख्य शुल्क लगते हैं– खाता खुलवाने का शुल्क (A/c Opening Fee) वार्षिक संचालन शुल्क (Annual Maintenance fee) कस्टोडियन शुल्क (Custodian fee) तथा लेन–देन शुल्क (Transaction fee) जो DP दर DP परिवर्तित रहता है।

खाता खुलवाने का शुल्क (A/c Opening Fee) : DP में यह शुल्क हो भी सकता है और नही भी, यह डी0पी0 पर निर्भर करता है। निजी बैंक जैसे एच0डी0एफ0सी0 बैंक तथा ऐक्सिस बैंक, कोई शुल्क नही लेते हैं। अन्य संस्थान जैसे कोटक सिक्योरिटीज, सुशील फाइनेन्स, आई0सी0आई0सी0आई0 बैंक, ग्लोबल कैपिटल, कार्वी कन्सल्टेन्ट्स तथा बजाज कैपिटल लि0, खाता खुलवाने का शुल्क लेते हैं। स्टेट बैंक ऑफ इण्डिया, खाता खुलवाने का कोई शुल्क नही लेता है अधिकतर संस्थान डीमैट खाता को पुनः खुलवाने का शुल्क लेते हैं। स्टाक होल्डिंग कार्पोरेशन लाइफराइग खाता खुलवाने का शुल्क का प्रस्ताव देते हैं जिससे निवेशक दीर्घ अवधि तक डीमैट खाता धारण करता है।

वार्षिक संचालन व्यय : इसे फोलियों संचालन शुल्क भी कहते हैं जो पहले से (Advance) लिया जाता है। रखने का शुल्क (Custodian Fee) यह शुल्क प्रतिमाह वसूला जाता है तथा यह प्रतिभूतियों की संख्या पर निर्भर करता हैं (ISIN)। यह शुल्क रू0 5 स रू0 1 प्रति ISIN प्रतिमाह लिया जाता है। डी0पी0 ऐसी प्रतिभूतियों का कस्टडी शुल्क नही लेता है जिसे कम्पनी ने जीवनकाल के लिये जमा कर दिया है।

लेन–देन शुल्क (Transaction Fee) : यह शुल्क प्रतिभूतियों को खाते से डेबिट तथा क्रेडिट करने के लिये प्रतिमाह लिया जाता है। कुछ डी0पी0 जैसे एच0डी0एफ0सी0 बैंक तथा आई0सी0आई0सी0आई0 बैंक, लेन देन के मूल्य (Transaction Value)के आधार पर शुल्क लगाते हैं जबकि अन्य डी0पी0 जैसे

(एस0बी0आई0) स्टेट बैंक ऑफ इण्डिया प्रति लेन–देन पर निश्चित शुल्क लगाते हैं। कुछ डी0पी0 प्रतिभूतियां को डेबिट करने का शुल्क लेते हैं जबकि कुछ दोनों का शुल्क लेते हैं।

कुछ अन्य शुल्क में, कई डी0पी0 अंशों को भौतिक से अभौतिक (इलेक्ट्रासनिक रूप में) करने का शुल्क भी लेते हैं। यह शुल्क दोनों डीमैट (भैतिक से इलेक्ट्रानिक) तथा रीमैट (इलेक्ट्रानिक से भौतिक) पर अलग–अलग होता है। उदाहरण स्टाक होल्डिंग कार्पोरेशन प्रति आवेदन 25/– रू0 तथा 3/– रू0 प्रति प्रमाण पत्र परिवर्तनशील शुल्क लेते हैं। जबकि SBI केवल 3/– प्रति प्रमाण पत्र परिवर्तन शुल्क लेता है। इसी तरह रीमैट में भी शुल्क है।

8.13 डीमैट के दोष

(i) डीमैट प्रतिभूतियों की दशा में प्रतिभूतियों का व्यापार अनियंत्रित हो गया है।

(ii) यह पूँजी बाजार हेतु आवश्यक हो गया है कि डीमैट प्रतिभूतियों के लेन–देन पर नजर रखी जाय जिससे निवेशकों को हानि न हो।

(iii) डीमैट प्रतिभूतियों का लेन–देन करने वाले स्टाक ब्रोकर (दलालों) का निरीक्षण आवश्यक है, क्योंकि वह बाजार को उच्चावचन करने में समर्थ होते हैं।

(iv) डिपाजिटरी अधिनियम तथा कई अन्य विधिक प्रस्तावों को पूर्ण किया जाए ताकि अनुमोदित हो सके ।

(v) डीमैट की प्रक्रिया में निवेशकों को कई संविदा करना पड़ता है, जो कष्टप्रद है।

(vi) गैर–तरल अंशों वाले डीमैट खाते को बन्द करने का कोई प्रावधान नही है जिससे निवेशक को अनावश्यक शुल्क देना पड़ता है।

(vii) अधिकांश भारतीय सीधे सादे हैं तथा डी0पी खाते को बन्द न करने की गंभीरता को नही समझ पाते हैं। कई डी0पी0 शून्य प्रतिभूति पर भी शुल्क लेते हैं।

डिपाजिटरी पार्टीसीपेन्ट (डी0पी0) के मध्य अंशों का हस्तान्तरण–

अंशों के हस्तान्तरण हेतु निवेशक को दो प्रकार की डिपाजिटरी निर्देश पर्ची (DIS) करनी पड़ती है। पहले यह देखने के लिये कि दोनों डीमैट खाते एक ही डिपाजिटरी में है। डिपाजिटरी दो प्रकार है– CSDL (Control Depository Securities Ltd.) तथा NSDL (National Securities Depositories Ltd.) यदि दोनों डीमैट खाते एक ही डिपाजिटरी में नही हैं तो उसे अन्तर डिपाजिटरी पर्ची (Inter DIS) भरनी पड़ती है। अन्य दशा में इन्ट्रा डिपाजिटरी निर्देश (Intra DIS) भरना पड़ता है।

सुरक्षा की संस्तुतियाँ (Security Recommendations) : डिपाजिटरी निर्देश स्लिप (DIS) चेक बुक की तरह होती है, इसलिये यदि यह रिक्त (Blank) जारी की जाती है तो इसका दुरूपयोग हो सकता है। इसलिये निवेशक को DIS स्लिप जारी करते समय पर्याप्त सावधानी रखनी चाहिये।

डीमैट खाता खोलने के पूर्व आपको निम्न बातों का ध्यान रखना चाहिये–

न्यूनतम शेष : बैंक खाते में विभिन्न खुल्कों को बचाने के लिए न्यूनतम शेष रखना पडता है जबकि डीमैट खाते में प्रतिभूति की न्यूनतम संख्या का कोई प्रावधान नही है। स्वासिमत्व पैटर्न में परिवर्तन हेतु विभिन्न खाते आपको डीमैट खाता उसी क्रम में खोलना है जिस क्रम में आपको वर्तमान स्टाक है तथा आप विभिन्न संयोगों (नाम) वाले कई खाते रख सकते हैं।

सुपुर्दगी निर्देश स्लिप की सुरक्षा : DIS स्लिप टैंक भी चेक बुक की तरह होती है। इसके दुरूपयोग को रोकने के लिये उच्च स्तर की सुरक्षा चाहिये।

खाते के शुल्क : डीमैट खाते के संचालन में विभिन्न शुल्क लगते हैं। वे खाता धारक की पूर्ण जानकारी में तथा पारदर्शी होने चाहिये।

8.14 सारांश

वारंट का प्रतिनधित्व करने वाली प्रतिभूति (समता अंश) की सुपुर्दगी, उसके धारक निवेशक के द्वारा न होकर, उसे जार करने वाली कम्पनी द्वारा होती है। कम्पनी द्वारा निवेशकों को नई प्रतिभूति के क्रय हेतु आकर्षित करने के लिए वारंट को नव निर्गमन के एक भाग के रूप सम्मिलित किया जाता है। वारंट से स्टाक मे अंशधारियों के विश्वास में भी वृद्धि हो सकती है। डिपाजिटरी सामान्य अर्थों में एक संस्था है जो इलेक्ट्रानिक माध्यम से धारित किये गये पूर्व सत्यापित अंशों के समूह को धारित करती है। इसमें लेन–देन का कुशल समायोजन होता है। डिपाजिटरी प्रतिनिधि (डी0पी0) निवेशक तथा डिपाजिटरी के बीच मध्यस्थ है। डी0पी0 एक संगठन जैसे बैंक, दलाल, वित्तीय संस्था या कस्टोडियन है जो डिपाजिटरी के एजेन्ट के रूप में निवेशकों को सुविधायें उपलब्ध कराने का कार्य करती है। प्रत्येक डी0पी0 की एक अलग पहचान संख्या होती है जिसे डी0पी0–आई0डी0 कहा जाता है। मार्च 2006 तक सेबी में पंजीकृत डी0पी0 की कुल संख्या 538 थी।

8.15 शब्दावली

- **अंश** : कम्पनी की पूँजी समान मूल्य वाली इकाईयों में विभाजित होती है। इस इकाई को अंश कहते हैं।
- **अंश–प्रमाण पत्र** : अंश के स्वामित्व के प्रमाण के रूप में कम्पनी द्वारा जो प्रमाण पत्र निवेशक को दिया जाता है, वह अंश प्रमाण पत्र कहलाता है।
- डीमैट : अंशो का लेन–देन व स्वामित्व जब भौतिक न होकर अभौतिक (इलेक्ट्रानिक) प्रारूप में कम्प्यूटर पर होते हैं तो इसे डीमैट कहा जाता है।

8.16 बोध प्रश्न

खाली स्थान भरो–

(i) पूँजी की सबसे छोटी इकाई को.......................... कहते हैं।

(ii) अंशों के स्वामित्व के प्रमाण पत्र को ....कहते हैं।

(iii) डीमैट व्यवस्था में अंशों की लेन–देन .... रूप में होता है।

8.17 बोध प्रश्नों के उत्तर

(i) अंश (ii) अंश प्रमाण पत्र (iii) अभौतिक (इलेक्ट्रानिक)

8.18 स्वपरख प्रश्न

1. वारंट क्या है? इसके प्रकारों का वर्णन कीजिये?
2. अंश तथा वारंट में अंतर कीजिये।
3. स्टाक वारंट के क्रय तथा विक्रय की प्रक्रिया का वर्णन कीजिये।
4. वारंट के मूल्यांकन करने की प्रक्रिया को समझाइये।
5. डीमैट खाते का वर्णन कीजिये।
6. डीमैट खाते के लाभ तथा दोषों का वर्णन कीजिये।
7. डिपाजिटरी प्रतिभागी (DP) को समझाइये।

8.19 सन्दर्भ पुस्तकें

1. चन्द्रा पी0 2009, फाइनेन्शियल मैनेजमेन्ट, नई दिल्ली, टाटा मैग्राहिल कम्पनी।
2. खान, एम0वी0 2011, फाइनेन्शियल मैनेजमेन्ट, नई दिल्ली, टाटा मैग्राहिल कम्पनी।
3. भट्ट, एस0 2008, फाइनेन्शियल मैनेजमेन्ट, नई दिल्ली, एक्सेल कम्पनी।
4. गुप्ता, एस0 के0, फाइनेन्शियल मैनेजमेन्ट, नई दिल्ली, कल्याणी पब्लिकेशन्स।

इकाई 09 अंश हस्तान्तरण तथा अंशों का पारेषण

इकाई की रूपरेखा

9.1 प्रस्तावना
9.2 अंशों के हस्तान्तरण का अर्थ
9.3 हस्तान्तरण पर प्रतिबन्ध
9.4 अपील के प्रावधान
9.4.1 अपील खारिज होने पर हस्तान्तरित की स्थिति
9.4.2 विशिष्ट मामलो में अंशों के हस्तान्तरण या अधिग्रहण पर प्रतिबन्ध
9.5 अंशो के हस्तान्तरण की प्रक्रिया
9.6 अंशो के हस्तान्तरण हेतु सचिव के कर्तव्य
9.7 हस्तान्तरण का प्रमाणन
9.8 डिपाजिट पद्धति की भूमिका
9.9 पारेषण
9.9.1 पारेषण की प्रक्रिया
9.9.2 अंशों के पारेषण से संबंधित सचिवीय कर्तव्य
9.10 विभिन्न प्रावधान
9.11 सारांश
9.12 शब्दावली
9.13 बोध प्रश्न
9.14 बोध प्रश्नों के उत्तर
9.15 स्वपरख प्रश्न
9.16 सन्दर्भ पुस्तकें

उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप इस योग्य हो सकेंगे कि –

- अंशों का हस्तान्तरण तथा पारेषण से संबंधित विभिन्न प्रावधानों की विवेचना कर सकें।
- अंशो के हस्तान्तरण का अर्थ समझ सकें।
- अंशों के पारेषण का अर्थ समझ सकें।
- डिपाजिटरी पद्धति की भूमिका की विवेचना कर सकें।

9.1 प्रस्तावना

हस्तान्तरण शब्द दो पक्षों का ऐसा कृत्य है जिसमें सम्पत्ति का स्वामित्व एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति को हस्तान्तरित हो जाता है, जब अंशों के स्वामित्व का हस्तान्तरण राज नियम के प्रचलन के कारण होता है तो वह अंशों का पारेषण कहलाता है। यह उत्तराधिकार या Testamentary हस्तांतरण द्वारा होता है। सामान्यतः अंशों के हस्तान्तरण से आशय अंशों के स्वामित्व के हस्तान्तरण से है जेसे

क्रय/विक्रय या दान/हस्तान्तरण से पूर्व अंशों का स्वामित्व एक व्यक्ति द्वारा होता है जबकि हस्तान्तरण के बाद अंशो का स्वामित्व किसी अन्य व्यक्ति के पास होता है।

अंशों का पंजीकरण एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें कुछ प्राधिकारी कुछ निश्चित अंशों को कुछ अधिकार प्रदान करते हैं। उदाहरण के लिये, सरकार अंशों का पंजीकरण, अंशों का जनता को प्रस्ताव करने तथा विक्रय हेतु अनुमति देने के लिये करती है।

9.2 अंशों के हस्तान्तरण का अर्थ

अंशों के हस्तान्तरण का अर्थ अंशों का हस्तान्तरण सदस्यों का स्वैच्छिक कृत्य है तथा यह एक व्यक्ति से अन्य व्यक्ति को स्वामित्व अधिकारों के हस्तान्तरण की विधि है।

लोक कम्पनियों की प्रतिभूतियों की मुक्त हस्तान्तरणीयता को सुनिश्चित करने के लिये Depository अधिनियम 1996 में नयी धारा को जोड़ा गया जिसे कम्पनी अधिनियत में धारा 111ए के नाम से जाना जाता है। इस धारा में (जो Depositories संबंधी नियम (संशोधन 1997 धारा संशोधित की गयी है) में निम्न प्रावधान है:–

(i) लोक कम्पनी के अंक तथा ऋण पत्र, चाहे वे अधिसूचित हो या न हो, मुक्त रूप से हस्तान्तरणीय होंगे।

(ii) कम्पनी के प्रबंध निदेशक या उससे संबंधित Depository को अंशों के हस्तान्तरण को मना करने या टालने का विवेकाधिकार नहीं है।

(iii) यदि प्रतिभूति depository माध्यम से बाहर भी है, तो कम्पनी मे हस्तान्तरण का प्रपत्र प्राप्त होते ही हस्तान्तरण प्रभावी हो जायेगा।

(iv) यदि प्रतिभूति depository माध्यम से है, तो depository द्वारा participant से उपयुक्त सूचना प्राप्त करते ही हस्तान्तरण स्वतः प्रभावी हो जायेगा।

(v) depository माध्यम तथा गैर depository माध्यम, दोनों मामलों में, कम्पनी या depository द्वारा सौदे की सूचना प्राप्त करते ही हस्तान्तरिता को प्रतिभूति से संबंधित मताधिकार सहित सभी अधिकार प्राप्त हो जायेंगे। यदि अंशों या प्रतिभूति के हस्तान्तरण में, भारतीय प्रतिभूति एवं विनिमय अधिनियम 1992 या रूग्ण औद्योगिक कम्पनी अधिनियम (विशेष प्रावधान) 1985 तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य अधिनियम के प्रावधानों का उल्लंघन किया गया है, तो कम्पनी depository participant, विनियोजक या सेवी ऐसे depository में हस्तान्तरण के 2 माह के अन्दर या कम्पनी को ऐसे हस्तान्तरण या पारेषण की सूचना व प्रपत्र प्राप्ति के 2 माह के अन्तर कम्पनी ला बोर्ड को ऐसे उल्लंघन वाले हस्तान्तरण को जानने व जॉच के लिये आवेदन करेंगे।

कम्पनी लॉ बोर्ड, उल्लंघन की जॉच के बाद संतुष्ट होने पर कम्पनी/ depository को स्वामित्व अभिलेखों में संशोधन के लिये निर्देश दे सकती है। कम्पनी लॉ बोर्ड जॉच के लम्बित रहने के दौरान ऐसी प्रतिभतियों से संबंधित मताधिकार को रोक देता है। ऐसे मामलों में हस्तान्तरित के प्रतिभूति से संबंधित आर्थिक अधिकारों का पूर्ण लाभ लेता है तथा उसे ऐसी प्रतिभूति अन्य व्यक्ति को हस्तान्तरित करने का अधिकार होता है।

यदि हस्तान्तरण में किसी कानून का उल्लंघन किया गया है तो ऐसा हस्तान्तरण, कम्पनी लॉ बोर्ड के संशोधन के निर्देश पर निर्भर करेगा।

9.3 हस्तान्तरण पर प्रतिबंध

निजी कम्पनी या मानित लोग कम्पनी की दशा में वैधानिक आवश्यकता के कारण, अन्तर्नियमों द्वारा हस्तान्तरण के अधिकार पर प्रतिबंध होता है। सदस्यों के मध्य व्यक्तिगत संदर्भों को बनाने के प्रयासों पर किसी भी प्रकार प्रतिबंध हो सकता है। इन्हीं में से एक सामान्य प्रतिबंध पूर्व emption clause के रूप मे होता है जिसमें हस्तान्तरण के इच्छुक व्यक्ति को सर्वप्रथम कम्पनी के वर्तमान अंशधारियों को अंशों` विक्रय का प्रस्ताव करना चाहिये।

अन्तर्नियमों द्वारा हस्तान्तरण के अधिकार पर पूर्ण प्रतिबंध, अधिनियम का उल्लंघन होगा। सामान्यतः पार्षद अन्तर्नियम, निदेशकों को निम्न आधारों पर अंशों के हस्तान्तरण को निरस्त करने का अधिकार देता है।

(i) जहां अंशतः प्रदत्त अंशों को अवयस्क या याचक (भिक्षुक) को हस्तान्तरित किया जाना है।

(ii) जहाँ हस्तान्तरित अस्वस्थ मस्तिष्क या सामयिक विकृति वाला हो।

(iii) जहां हस्तान्तरित अंशों पर अदत्त मॉग हो।

(iv) जहाँ हस्तान्तरक के कम्पनी के ऋणी होने के कारण, अंश कम्पनी के पास गिरवी हो।

(v) जहाँ हस्तान्तरण के प्रपत्र में कोई बड़ी अनियमितता है जैसे पूर्ण हस्ताक्षर या सार्व मुद्रा का न होना।

हस्तान्तरण के पंजीयन से मना करने का अधिकार केवल निजी कम्पनी को उपलब्ध है। (डिपाजिटरी अधिनियम 1996 की धारा 111 में नयी उपधारा (14) का समावेश।

कम्पनी के निदेशक हस्तान्तरण का पंजीयन करने से मना करने का कारण देने के लिये बाध्य है। इसके अतिरिक्त मना करने का सक्रिय क्रियान्वयन भी आवश्यक है। मात्र किसी बाधा के कारण प्रस्ताव पास न होना, मना करने के अधिकार का सक्रिय क्रियान्वयन नहीं है।

कम्पनी द्वारा हस्तान्तरण के प्रपत्र में lodged होने के 2 माह के अन्दर हस्तान्तरक तथा हस्तान्तरिती दोनों को निरस्तीकरण की नोटिस, मना करने के कारणों का उल्लेख करते हुये, भेजना आवश्यक है। (धारा 111(2) जब तक निदेशक,

अन्तर्नियम की सीमा के अन्तर्गत कार्य करते हैं तब तक उनके निर्णयों को गलत नहीं ठहराया जा सकता है, सिवाय बुरे विश्वास को छोड़ कर।

जहाँ यह सिद्ध हो जाता है कि निदेशकों ने अपने मना करने के अधिकार का सही अर्थों में कम्पनी के हित में प्रयोग नहीं किया गया है तो न्यायालय, निदेशकों के निर्णय को खारिज कर हस्तान्तरित के नाम को सदस्य के रूप में पंजीकृत करने का आदेश दे सकता है। इसके अतिरिक्त, हस्तान्तरिती, मना करने की तिथि तथा न्यायालय के निर्णय की तिथि के मध्य अंशो के मूल्य में गिरावट के बराबर, हर्जाने का अधिकारी होगी।

9.4 अपील के प्रावधान

डिपाजिटरी अधिनियम 1996 की संशोधित धारा 111 के अनुसार यदि कोई निजी कम्पनी किसी ऐसे आधार या कारण का उल्लेख करते हुये अंशों के हस्तान्तरण के पंजीयन से मना करती है जो पार्षद सीमा नियम में उल्लिखित प्रतिबंधों में नहीं दिये गये हैं, तो हस्तान्तरक या हस्तान्तरिती ऐसे निरस्तीकरण के लिए कम्पनी लॉ बोर्ड में अपील कर सकते हैं।

ऐसी अपील मना करने की नोटिस प्राप्ति के 2 माह के अन्दर या कम्पनी द्वारा नोटिस नही भेजी गयी है, कम्पनी को हस्तान्तरण के प्रपत्र की सुपुर्दगी के 4 माह के अन्दर की जा सकती है। ऐसी अपील लिखित याचिका के रूप में हो तथा उसके साथ निर्धारित शुल्क जमा किया गया हो। याचिका प्राप्ति के बाद कम्पनी लॉ बोर्ड, कम्पनी हस्तान्तरक तथा हस्तान्तरिती को सुनवाई का अवसर देने के लिये, नोटिस जारी करेगा।

पूरे मामले के परीक्षण के बाद यदि मना करना न्यायोचित नहीं प्रतीत होता है, तो कम्पनी लॉ बोर्ड, कम्पनी को हस्तान्तरण का पंजीयन करने के लिये आदेश करेगा, जिसे कम्पनी को इस आशय का आदेश प्राप्त करने के 10 दिन के अन्दर कार्यान्वित करना होगा। इसके अतिरिक्त कम्पनी लॉ–बोर्ड, लाभांश के भुगतान या बोनस या अधिकार अंशों के आवंटन का आदेश दे सकता है, जैसा वह उचित समझे।

कम्पनी लॉ बोर्ड के आदेशों के अनुपालन में उल्लंघन होने पर प्रत्येक दोषी अधिकारी 10,000 रू0 तक के जुर्माने से दण्डनीय होगा, जो गलती जारी रहने के दौरान 1000/– रू0 प्रति दिन तक बढ़ सकता है। निजी कम्पनी की दशा में अपील का अधिकार उपलब्ध नहीं होगा।

धारा 111 के प्रावधान अंशों या ऋणपत्रों के हस्तान्तरण में साथ–साथ अंशों तथा ऋण पत्रों के पारेषण पर भी लागू होते हैं।

9.4.1 अपील खारिज होने पर, हस्तान्तरिती की स्थिति

अंशों में हस्तान्तरण के पंजीयन से मना करने की अपील खारिज होने पर, अंशों से संबंधित अधिकारों के लिये, हस्तान्तरक, हस्तान्तरिती का ट्रस्टी होगा। अंशों का हस्तान्तरण निरस्त होने की स्थिति में हस्तान्तरक अंशों का विधिक स्वामी बना रहेगा।

9.4.2 विशेष मामलों में अंशों का हस्तान्तरण या अधिग्रहण पर प्रतिबंध

धारा 108 A से 108 I अंशों के ऐसे अधिग्रहण तथा हस्तान्तरण से संबंधित है जो अंशों के ऐसे अवॉछनीय व्यक्तियों के हाथों में जाने से रोकने से है, जो अंशधारियों तथा लोक वित्तीय संस्थाओं को विपरीत रूप में प्रभावित कर सकते हैं।

लागू होना : यह ऐसे व्यक्तियों, फर्म, समूह, कम्पनी या कम्पनियों के समूह, जो समान प्रबंध केअन्तर्गत आते हैं, के या को अंशों के अधिग्रहण या हस्तान्तरण पर लागू होता है जो–

(i) dominant उपक्रम में स्वामी हो

अथवा

(ii) ऐसे हस्तान्तरण या अधिग्रहण से Dominant उपक्रम का स्वामी हो जायेगा।

छूटे–

धारा 108ए में (उपधारा 2 को छोड़कर) उल्लिखित प्रतिबंध ऐसे अंशों के हस्तान्तरण पर लागू नहीं होगा, जो निम्न को किया गया या धारा 108बी से 108डी के प्रतिबंध ऐसे अंशों के हस्तान्तरण पर लागू नहीं होंगे जो निम्न द्वारा किया गया–

(i) कोई सरकारी कम्पनी

(ii) किसी केन्द्रीय अधिनियम के अन्तर्गत स्थापित उपक्रम तथा

(iii) कोई वित्तीय संस्था

प्रतिबंध–

(i) अंशों के अधिग्रहण पर प्रतिबंध

(ii) अंशों के हस्तान्तरण पर प्रतिबंध

(iii) विदेशी कम्पनियों के हस्तान्तरण पर प्रतिबंध

(iv) केन्द्र सरकार के कम्पनियों को निर्देश देने के अधिकार पर जो हस्तान्तरण को प्रभावित न करे।

9.5 अंशो के हस्तान्तरण की प्रक्रिया

जहॉं धारक को अंश वारंट जारी किया जाता है, वहॉं ऐसे अंशों में हस्तान्तरण हेतु कोई प्रक्रिया नहीं अपनायी जाती है।

ऐसे पंजीकृत अंश, जिनके लिये अंश प्रमाण पत्र जारी किया गया है, की दशा में कुछ विधिक औपचारिकताओं का पालन करना पड़ता है, जिनमें अंशों का हस्तान्तरण ऐसे व्यक्ति द्वारा ही किया जा सकता है जिसका नाम सदस्यों के रजिस्टर में लिखा हो। इसके अतिरिक्त मृत सदस्य के विधिक प्रतिनिधि भी अंशों का हस्तान्तरण कर सकते हैं।

अधिनियम द्वारा मौखिक हस्तान्तरण की मान्यता नहीं : समापन के दौरान किये गये हस्तान्तरण व्यर्थ होते हैं जब तक कि वे समापक (ऐच्छिक समापन की दशा में) या न्यायालय (अन्य प्रकार के समापन की दशा में) द्वारा अनुमोदित न हो।

इसके अतिरिक्त, अंशों के हस्तान्तरण से संबंधित अन्तर्नियम के प्रावधानों का पालन किया गया हो, जिसकी प्रक्रिया निम्न हैः–

(i) सरकार द्वारा निर्धारित प्रारूप की तरह ही हस्तान्तरण प्रपत्र का प्रारूप होना चाहिये तथा हस्तान्तरिती द्वारा हस्ताक्षर करने के पूर्व उसे निर्धारित प्राधिकारी के सम्मुख प्रस्तुत किया गया हो जो प्रपत्र पर प्रस्तुतीकरण पर सार्वमुद्रा, तिथि सहित लगायेगा।

(ii) हसतान्तरण का प्रपत्र, हस्तान्तरक तथा हस्तांतरिती के द्वारा हस्ताक्षरित होना चाहिये। उस पर तिथि सहित मुहर लगी हो तथा संबंधित अंश प्रमाण पत्र उसके साथ नत्थी हो। यदि कोई प्रमाण पत्र जारी नहीं किया गया है तो अंशों का आवंटन पत्र, हस्तान्तरण प्रपत्र के साथ नत्थी हो।

(iii) अंशों के हस्तान्तरक या हस्तान्तरिता द्वारा पूर्णतया भरा हुआ हस्तान्तरण प्रपत्र, पंजीकृत शुल्क सहित कम्पनी के प्रधान कार्यालय में पंजीकरण के लिये निम्न अवधि में भेजाना चाहिये–

क. स्कंध निर्माण में सूचीबद्ध अंशों की दशा में, मुद्रित तिथि के बाद सदस्यों के रजिस्टर के प्रथम बंदी के पूर्व या ऐसे प्रस्तुतीकरण के 12 माह के अन्दर जो पहले हो।

ख. गैर सूचीबद्ध अंशों की दशा में, निर्धारित प्राधिकारी को प्रस्तुतीकरण के 2 माह के अन्दर केन्द्र सरकार आवेदन पत्र इस अवधि को सुविधा हेतु बढ़ा सकती है। ऐसा आवेदन क्रेता या अभिकर्ता द्वारा कम्पनी विधि प्रमण्डल (कम्पनी ला बोर्ड) के क्षेत्रीय निदेशक को दिया जायेगा। रिक्त हस्तान्तरण की कमियों को दूर करने के लिये ऐसी समयावधियों को निर्धारित किया गया है।

(iv) हस्तान्तरक द्वारा ऐसे अंशों के आवेदन जो अंशतः प्रदत अंश से संबंधित है, की दशा में, कम्पनी हस्तान्तरिती को इस आशय की सूचना देगी तथा हस्तान्तरिती द्वारा ऐसी नोटिस प्राप्ति के 2 सप्ताह तक कोई विरोध न करने पर ही हस्तान्तरण को पंजीकृत करेगी।

हस्तान्तरिती द्वारा ऐसी सूचना का कोई उत्तर न देना, पंजीकरण के लिये स्वीकृति मानी जायेगी। हस्तान्तरिती द्वारा स्वयं हस्तान्तरण के पंजीकरण हेतु आवेदन करने पर ऐसी सहमति की कोई आवश्यकता नहीं होती है, परन्तु अंशों की हस्तान्तरण प्रपत्र के आवेदन की सूचनी भेजी जायेगी तथा निश्चित समय तक प्रतिरोध न होने का ही कम्पनी द्वारा हस्तान्तरण को पंजीकृत किया जायेगा।

(v) हस्तान्तरण या हस्तान्तरिती द्वारा निश्चित समय तक कोई प्रतिरोध न करने पर, हस्तान्तरण के पंजीकरण का कार्य आरंभ हो जायेगा। सचिव द्वारा हस्तान्तरण के रजिस्टर में ऐसे हस्तान्तरण को अभिलिखित किया जायेगा।

(vi) इसके पश्चात सचिव अंश प्रमाण पत्रों के साथ हस्तान्तरण प्रपत्र तथा हस्तान्तरण के रजिस्टर को अनुमोदन के निदेशक मण्डल की सभा में रखेगा। सन्तुष्ट होने पर, निदेशक मण्डल हस्तान्तरण के अनुमोदन के प्रस्ताव को पारित कर देगा।

(viii) उपरोक्त सभी चरणों के पूर्ण होने के पश्चात कम्पनी, सदस्यों के रजिस्टर से हस्तान्तरक का नाम काटकर उसके स्थान पर हस्तान्तरिती का नाम अभिलिखित करेगी। हस्तान्तरिती को नये धारक के रूप में जानने हेतु अंश प्रमाण पत्र के पीछे बेचान किया जायेगा तथा इसे हस्तान्तरण के पंजीकृत होने के 2 माह के अन्दर हस्तान्तरिती को जारी कर दिया जायेगा। सूचीबद्ध कम्पनी की दशा, प्रमाण पत्र जारी करने की अवधि 1 माह है।

'Dipository' की सुविधा लेने पर उपरोक्त प्रक्रिया के अनुपालन की आवश्यकता नहीं होती है।

9.6 अंशों के हस्तान्तरण हेतु सचिव के ड्यूटी

1. सचिव को इस बारे में आश्वस्त होना चाहिये कि कम्पनी में पार्षद अन्तर्नियम मे अंशों के हस्तान्तरण के संबंध में पर्याप्त प्रावधान किये गये हैं।
2. हस्तान्तरक प्रपत्र की प्राप्ति द्वारा मुद्रांकित तथा पृष्ठांकित तथा हस्तान्तरिती द्वारा हस्तान्तरण शुल्क लगे 'हस्तान्तरण प्रपत्र' जिसे हस्तान्तरण प्रलेख भी कहते हैं, की प्राप्ति पर सचिव को यह देखना चाहिये कि प्रपत्र के साथ हस्तान्तरक के नाम का अंश प्रमाण पत्र लगा हो तथा वह सत्यापित हो और धारा 108 के अन्तर्गत निर्धारित सीमा में दाखिल किया गया है।
3. यह सचिव का दायित्व है कि हस्तान्तरण प्रपत्र की जांच करे तथा संबंधित संलग्न अंश प्रमाण पत्र में निम्न तथ्यों की जॉचे–
   (i) यदि हस्तान्तरक अंशों का पंजीकृत धारक थे तो हस्तान्तरिक के हस्ताक्षर, कम्पनी के अभिलेखों में किये गये उसके नमूना हस्ताक्षर से मिलना चाहिये अन्य दशाओं में हस्ताक्षर को पिछले हस्तान्तरण प्रपत्र से सत्यापित करना चाहिये। यदि हस्तान्तरण अटार्नी द्वारा किया जाता है वो अटार्नी का 'पंजीकरण के शक्ति' को सत्यापित होना चाहिये। यदि हस्तान्तरक कम्पनी है तो उसे सार्वमुद्रा द्वारा परिचालित होना चाहिए।
   (ii) हस्तान्तरिती के विवरण को पूर्ण तथा सही भरा गया है।
   (iii) साक्षी के हस्ताक्षर तथा पता सही क्रम में है।
   (iv) सुपुर्दगी एजेण्ट (अभिकर्ता) तथ आवेदक अभिकर्ता की सार्वमुद्रा होनी चाहिये।
   (v) हस्तान्तरण प्रलेख में कोई भी परिवर्तन, हस्तान्तरक तथा हस्तान्तरिकों द्वारा उचित रूप से प्रमाणित होना चाहिये।
   (vi) अंशों की क्रम संख्या का हस्तान्तरण में मिलान होना चाहिये।
   (vii) हस्तान्तरण प्रलेख में उल्लिखित हस्तान्तरण का प्रतिफल उचित होना चाहिये।
   (viii) हस्तान्तरण प्रपत्र पर प्रत्येक 100/– रू0 पर 0.50 पैसे की दर से अंश हस्तान्तरण टिकट लगा होना चाहिये।

(ix) सदस्यों के रजिस्टर में यह भी देखना चाहिये कि अंश प्रमाण पत्र की कोई दूसरी प्रति तो जारी नही हुयी है।

4. कम्पनी अधिनियम द्वारा समामेलित कम्पनी के हस्तान्तरिति होने की दशा में, सचिव को यह आश्वस्त होना चाहिये कि वह कम्पनी, पार्षद सीमा नियम तथा पार्षद अन्तर्नियम द्वार अंशों को लेने के लिये अधिकृत है।
5. भारतीय कम्पनियों के अंशों का हस्तान्तरण अनिवासी व्यक्तियों या विदेशी नागरिकों द्वारा निवासी या अनिवायी व्यक्तियों को करने की दशा में, सचिव को यह जॉच करना चाहिये कि हस्तान्तरक या हस्तान्तरिती द्वारा अंशों के विक्रय/हस्तान्तरण पूर्व विदेशी विनिमय प्रबंध अधिनियम 1999 में अन्तर्गत भारतीय रिजर्व बैंक में विनिमय नियंत्रण विभाग से आवश्यक अनुमोदन प्राप्त किया गया है।
6. हस्तान्तरण प्रलेख की जॉच के पश्चात सभी औपचारिकतायें, पूर्ण तथा सही होने पर सचिव हस्तान्तरण की नोटिस हस्तान्तरक तथा हस्तान्तरिती को जारी करेगा तथा आपत्तियों की प्राप्ति के लिये दो दिन तक प्रतीक्षा करेगा।
7. कोई भी आपत्ति न मिलने पर, सभी हस्तान्तरण को हस्तान्तरण रजिस्टर में अभिलिखित किया जायेगा।
8. सचिव द्वारा हस्तान्तरणों के पंजीकरण के प्रस्ताव को पारित करने के लिये प्रमण्डल सभा (बोड) का आयोजन करेगा।
9. प्रस्ताव पारित होने पर, सचिव यह देखेगा कि सदस्यों के रजिस्टर में हस्तान्तरक का नाम काटकर हस्तान्तरिती का नाम लिख दिया गया है। अंश प्रमाण पत्रों पर आवश्यक बेचान करके उसके हस्तान्तरिती को जारी कर दिया गया है।

9.7 हस्तान्तरण का प्रमाणन

जब कम्पनी अंश प्रेलेख, जारी अंश पमाण पत्र में प्रस्तावित हस्तान्तरण से संबंधित होता है, को सत्यापित करती है तो वह हस्तान्तरण पमाण पत्र कहलाता है कि कई क्रेता होने पर या अंशों का अंशतः विक्रय होने पर अंशों का प्रमाणन आवश्यक होता है।

कम्पनी एक व्यक्ति की उसके नाम समस्त अंशों के एक समूह के लिये एक अंश प्रमाणपत्र निर्गमित करती है। वैध हस्तान्तरण के लिये संबंधित पमाणपत्र को हस्तान्तरण पपत्र के साथ लगाना चाहिये।

उपरोक्त तथ्यों को दृष्टिगत रखते हुये अंशतः विक्रय दो या दो से अधिक क्रेता होने पर समस्या उत्पन्न होती है। ऐसे हस्तान्तरक के पास इस समस्या के निदान के लिये दो विकल्प हैं:–

(i) वह मूल प्रमाण पत्रों को निरस्त कर उसके बदले में ऐच्छिक मूल्य के नये प्रमाण पत्र जारी करने का आवेदन कर सकता है।

(ii) प्रमाणन कराने के लिये वह अंश पमाण पत्र को हस्तान्तरण प्रपत्र में साथ नत्थी कर कम्पनी भेज सकता है।

कम्पनी 'Split प्रमाण पत्र' जारी करने में समय लेती है जिससे हस्तान्तरक तथा हसतान्तरिता दोनों को असुविधा होता है। इसलिये व्यवहार में 'हस्तान्तरण का प्रमाणन' को वांछनीय माना जाता है।

सभी स्कन्ध विपणियों में ''प्रमाणित हस्तान्तरण' को 'हस्तान्तरण पपत्र के साथ संबोधित अंश प्रमाण पत्र की तरह मान्यता प्राप्त है। ऐसा प्रमाणन, किसी भी रूप में हस्तानतरक के स्वत्व की गारण्टी नहीं देता है तथा इसके कपटपूर्ण या लापरवाही होने पर, क्षति के लिये कम्पनी दायी होगी।

(i) कोई भी हस्तान्तरण प्रपत्र प्रमाणित माना जायेगा यदि उस पर पमाणपत्र Lodged शब्द या मिलता हुआ शब्द लिखा होता है

(ii) कम्पनी द्वारा 'हस्तान्तरण प्रपत्र' का प्रमाणन माना जायेगा यदिः–

- क. यदि प्रमाणित प्रपत्र जारी करने वाला व्यक्ति, एक हस्तान्तरण प्रपत्र को जारी करने के लिय कम्पनी की ओर से अधिकृत है।
- ख. प्रमाणन पर कम्पनी के किसी अधिकारी या कर्मचारी या किसी अन्य व्यक्ति द्वारा हस्ताक्षर किया जाना चाहिये, जो कम्पनी की ओर से हस्तान्तरण प्रपत्र के लिये अधिकृत हो।
- ग. प्रमाणन उस व्यक्ति द्वारा हस्ताक्षरित माना जायेगा जिसकें हस्ताक्षर प्रपत्र पर है।

प्रक्रिया :

1. हस्तान्तरण के प्रमाणन के लिये, हस्तान्तरण प्रपत्र के साथ संबंधित अंश प्रमाण पत्रों को संलग्न कर कम्पनी के सम्मुख प्रस्तुत करना होता है।
2. प्रारम्भिक जॉच के पश्चात, सचिव हस्तान्तरण प्रपत्र के बाये कोने पर सार्वमुद्रा मुद्रित कर हस्ताक्षर करता है।
3. उसी समय वह, प्रमाण पत्र के मुख पृष्ठ पर निरस्त' की मुहर लगाकर मूल प्रमाण पत्रों को निरस्त कर देता है तथा महत्वपूर्ण तथ्यों से संबंधित विवरण निरस्त अंश प्रमाण पत्र के पीछे तैयार करता है। जैसे– प्रमाणन की तिथि हस्तान्तरिती का नाम, हस्तान्तरित अंशों की संख्या, आदि।
4. ये विवरण प्रमाणित हस्तान्तरण के रजिस्टर में चढ़ाये जाते हैं।
5. हस्तान्तरण के प्रमाणन के बाद, सचिव प्रमाणित हस्तान्तरण फार्म तथा बकाया टिकट (न हस्तान्तरित हुये अंशों का बकाया) को हस्तान्तरक के पास भेजता है।
6. अंशधारी द्वारा अपनी सभी धारित अंशों को दो या 2 से अधिक हस्तान्तरिती को विक्रय करने पर (बकाया टिकट) नहीं जारी किया जाता है।
7. हस्तान्तरक, बकाया टिकट को रोककर पमाणित हस्तान्तरण फार्म को हस्तान्तरित के भेजता है, जो हस्ताक्षर कर उसे कम्पनी के पंजीकृत कार्यालय कें Registration के लिये भेजता है।

8. उपरोक्त वर्णित आवश्यक औपचारिकताओं के पूण होने पर सचिव का कार्यालय, हस्तान्तरक तथा हस्तान्तरिती को जारी करने के लिये, दो प्रमाण पत्र तैयार करेगा।

9.8 डिपाजिटरी पद्धति की भूमिका

चोरी, हस्ताक्षर की भिन्नता, अधिक कागजी कार्यवाही तथा अन्य त्रुटियों को दूर करने के लिये भारत सरकार द्वारा 'Depository Act' लाया गया। इसका उद्देश्य 1996 जमाकताओं के स्वामित्व अभिलेखों को अभिलिखित करना तथा मात्र पुस्तकीय पविष्टि से प्रतिभूतियों के हस्तान्तरण को विधिपूर्ण बनाना है। इस विधि में प्रतिभूतियों का हस्तान्तरण भौतिक न होकर, पुस्तकीय प्रविष्टि के माध्यम से Depository के खातों में होता है।

इस अधिनियम के अनुसार प्रत्येक Depository के अभिकर्ता को 'Participant' कहा जाता है जो Depository तथा विनियोजक के मध्य कड़ी के रूप में कार्य करता है। विनियोजक, प्रतिनिधि के माध्यम से Depository के साथ संविदा करते हैं तथा अपने अंशों की संबंधित कम्पनी को वापस कर देते हैं।

कम्पनी, विनियोजक का नाम निरस्त कर Depository का नाम चढ़ा कर उसे सूचित करती है। सूचना प्राप्ति पर Depository विनियोजक के नाम को लाभकर्ता स्वामी के रूप में अपने यहाँ अभिलिखित कर लेती है। इससे विनियोजक सभी अधिकारों का दायित्वों के साथ उपभोग करता है। हस्तान्तरण के लिये विनियोजक, Participant को सूचित करेगा, जो Depository को सूचित करेगा। इसके पश्चात Depository उसका नाम निरस्त कर हस्तान्तरिती का नाम अभिलिखित करेगा।

विशेषतायें–

1. **प्रतिभूतियों का अभौतिकीकरण :** विनियोजक जब अपने अंशों के कुछ भाग depository में रख सकते हैं तथा शेष को भौतिक रूप में रख सकते हैं।
2. **प्रतिभूतियाँ Fungible होगी :** प्रतिभूतियों को Fungible बनाने के लिये कम्पनी अधिनियम की धारा 83, 150 तथा 152 में संशोधन किया गया है। वतमान समय में Depository द्वारा धारित प्रतिभूतियों में distintive संख्या नहीं होती है तथा समान प्रतिभूति के सभी प्रमाण पत्र परस्पर हस्तान्तरणीय होते हैं।
3. **मुक्त रूप से हस्तान्तरणीय :** Depository अधिनियम में लोक कम्पनी द्वारा निर्गमित प्रतिभूतियों बिना किसी रोक–टोक के हस्तान्तरणीय होती है। इस अधिनियत में प्रतिभूति संविदा (नियमन) अधिनियम 1956 की धारा 22ए को निरस्त कर कम्पनी अधिनियम में नई धारा 111ए जोड़ी गयी है।
4. **कोई स्टाम्प शुल्क नहीं :** Depository पद्धति में अंशों के हस्तान्तरण पर कोई स्टाम्प शुल्क नहीं है परन्तु Depository विधि से न करने पर

स्टाम्प शुल्क लगता है।

इस पद्धति से कार्य कुशलता में वृद्धि होगी तथा निवेशकों की वृहद लाभ होगा।

9.9 हस्तांकन या पारेषण

जब अंशों के स्वामित्व का हस्तान्तरण राजनियम के प्रचलन द्वारा होता है तो उसे अंशों का हस्तांकन या पारेषण कहते हैं।

हस्तान्तरण तथा पारेषण मे अन्तर :

हस्तान्तरण	पारेषण
1. पक्षकारों की स्वेच्छा से होता है।	राजनियम के प्रचलन द्वारा होता है।
2. इसके लिये हस्तान्तरण विलेख आवश्यक होता है।	वैधानिक उत्तराधिकारी होने का प्रमाण देना पड़ता है।
3. अंशों के हस्तान्तरण में पर्याप्त प्रतिफल होता है।	अंशों का हस्तांकन या पारेषण बिना किसी प्रतिफल के होता है।
4. हस्तान्तरण विलेख पर भारतीय मुद्रांक अधिनियम के अनुसार आवश्यक मूल्य का मुदांक लगाना आवश्यक होता है।	हस्तांकन की दशा में मुद्रांक लगाना आवश्यक नहीं है।

9.9.1 हस्ताँकन की पक्रिया

विधिक प्रतिनिधि के लिये दो विकल्प है। (1) वे सदस्य के रूप में पंजीकृत हो या (2) किसी अन्य व्यक्ति को अंशों को हस्तान्तरित कर दे।

प्रथम विकल्प के चुनाव की दशा में कम्पनी अंश प्रमाण पत्रों तथा उत्तराधिकार प्रमाण पत्र की वैधानिकता की जॉच करेगी तथा संतुष्ट होने पर मृत सदस्य का नाम काटकर विधिक प्रतिनिधि का नाम अभिलिखित करेगी तथा नया प्रमाण पत्र जारी करेगी।

यदि दूसरे विकल्प का चुनाव किया जाता है तो उसे अंश हस्तान्तरण की पक्रिया का पालन करना होगा तथा एक और प्रपत्र जिसे उत्तराधिकार प्रमाण पत्र कहते है, को संलग्न करना होगा। यदि कम्पनी हस्तॉकन के पंजीयन से मना करती है तो उसके पास कम्पनी लॉ बोड में अपील का अधिकार उपलब्ध है।

9.9.2 अंशों के हस्ताँकन में सचिवीय कर्तव्य

हस्तांकन से संबंधित सचिवीय ड्यूटी निम्न हैः–

1. सचिव को प्रार्थना पत्र की उपयुक्त जांच करनी चाहिये। प्राथना पत्र में विधिक प्रतिनिधि द्वारा मृत व्यक्ति के धारित अंशों को अपने नाम करने की प्रार्थना की जाती है।
2. उसे प्रार्थना पत्र के साथ संलग्न स्वामित्व का प्रमाण पत्र की जांच कर आश्वस्त होना चाहिये। यदि मृत सदस्य द्वारा वसीयत लिखी गयी है तो उसे Probate का पत्र देखना चाहिये तथा यदि मृत सदस्य द्वारा वसीयत नहीं लिखी गयी है तो 'Letter of Administration' को देखना चाहिये।

दीवालिया होने की दशा में, उसकी सम्पत्ति, न्यायालय द्वारा नियुक्त प्रापक के पास चली जाती है तथा पागलपन की दशा में उसकी सम्पत्ति, न्यायालय द्वारा नियुक्त प्रशासक के पास चली जाती है। सचिव को प्रशासक के सक्षम न्यायालय द्वारा नियुक्ति के प्रमाण पत्र की जॉच करना चाहिये।

3. यदि विधिक प्रतिनिधि, अंशों को हस्तान्तरित करता है तो उसे हस्तान्तरण प्रपत्र के साथ प्रोबेट, उत्तराधिकार प्रमाण पत्र या प्रशासन का पत्र को संलग्न करना चाहिये। पूर्ण हस्तान्तरण प्रपत्र प्राप्त करने पर सचिव का वही कर्तव्य है जो अंशों के हस्तान्तरण से संबंधित कर्तव्य है।
4. अन्त में, सचिव, प्रस्ताव पारित करने के लिये बोर्ड सभा को बुलायेगा तथा उसमें वह अंश प्रमाण पत्रों तथा सदस्यों के रजिस्टर में आवश्यक संशोधन करेगा। उसे प्रोबेट प्रशासन के पत्र, उत्तराधिकार प्रमाण पत्रों को प्रोबेट के रजिस्टर मे अभिलिखित करना चाहिये।

9.10 विविध प्रावधान

ऋणपत्रों का हस्तान्तरण तथा हस्तांकन उपरोक्त विर्णित अंशों में हस्तान्तरण तथा हस्तांकन संबंधी प्रावधान ऋण पत्रों के हस्तान्तरण तथा हस्तांकन पर भी लागू होते हैं परन्तु कुछ अन्तर निम्न है:–

1. अंशो की तरह, हस्तान्तरण प्रलेख को निर्धारित प्राधिकारी के समक्ष प्रस्तुत करने की आवश्यकता नहीं है।
2. ऋण पत्रों पर स्टाम्प शुल्क की गणना प्रतिफल पर न होकर ऋण पत्रों के सम मूल्य पर होती है।

अंशों के संयुक्त धारण को अलग करना : यदि अंशों के संयुक्त धारक व्यक्तिगत नाम से पंजीकृत होना चाहते हैं तो उन्हें अंश हस्तान्तरण की प्रक्रिया का पालन करना होगा हस्तान्तरण के पंजीयन हेतु प्रत्येक दशा में हस्तान्तरण प्रलेख पर मुहर लगी होना चाहिये। हस्तान्तरण प्रलेख की सभी संयुक्त धारकों द्वारा हस्तान्तरक के रूप में हस्तान्तरिती (व्यक्तिगत नाम) को भेजा जाना चाहिये।

पंजीयन के पूर्व हस्तान्तरण का प्रभाव : अंशों के हस्तान्तरण के अधिकारों तथा दायित्वों के संबंध में लार्ड लिण्डले, एल0जे0 ने निम्न मत दिया है ''जब कोई सदस्य अपने अंशों को हस्तान्तरित करता है, तो वह हस्तान्तरण की तिथि से अंशधारी के रूप में अपने सभी अधिकारों तथा दायित्वों को हस्तान्तरित करता है। वह घोषित हो चुके लाभार्थी की हस्तान्तरित नहीं करता है, न ही मांगी जा चुकी याचना के दायित्व को हस्तान्तरित करता है, परन्तु वह भावी भुगतानों तथा संबंधित भावी याचना से संबंधित अधिकारों का हस्तान्तरित कर देता है, परन्तु कम्पनी की दशा में।

रिक्त हस्तान्तरण : जब हस्तान्तरण विलेख पर हस्तान्तरक अपने हस्ताक्षर कर देता है परन्तु हस्तान्तरिती का नाम तथा अन्य विवरण को नहीं लिखता है तथा अंश प्रमाण पत्र के साथ हस्तान्तरिती को दे दिया जाता है तो वह कोरा हस्तान्तरण कहलाता है।

कोरे हस्तान्तरण की पद्धति में गलत सुपुर्दगी को रोकने के लिये, संशोधन अधिनियम 1965 की धारा 108 (1-A) में अंश हस्तान्तरण की निम्न प्रक्रिया वर्णित है, जो कोरे हस्तान्तरणों के करेंसी की अवधि को सीमित करती हैः–

1. प्रत्येक विलेख, निर्धारित प्रारूप में होना चाहिये तथा उसे हस्तान्तरण के हस्ताक्षर के पूर्व, कम्पनी रजिस्ट्रार के सम्मुख प्रस्तुत करना चाहिये, जो प्रस्तुतीकरण तिथि पर उस पर स्टाम्प लगायेगा।
2. इस प्रकार स्टाम्पित विलेख, हस्तान्तरित तथा हस्तान्तरिति द्वारा सभी प्रकार से पूर्ण करने के पश्चात, निम्न अवधि के अन्दर पंजीकरण हेतु कम्पनी को भेजा जाना चाहिये।
   (क) ऐसे अंश जो किसी मान्यता प्राप्त स्कन्ध विपणि में क्रय–विक्रय किये गये हें, उपयुक्त प्रस्तुति के बाद सदस्यों का रजिस्टर प्रथम बार बंद होने से पूर्व अथवा निर्धारित अधिकारी के समक्ष प्रस्तुत करने की तिथि के 12 माह के भीतर, इन दोनों तिथियों में जो बाद में हो कम्पनी को प्रस्तुत किये जाने चाहिये।
   (ख) गैर सूचीबद्ध अंशों की दशा में निर्धारित अधिकारी के समक्ष प्रस्तुत करने की तिथि के दो माह के अन्तर कम्पनी को प्रस्तुत किया जाना चाहिये।

अपवाद : निम्न अंशों के हस्तान्तरण की दशा में उपरोक्त वर्णित समय सीमा नहीं लागू होती है– (धारा 108 (1–सी) व (1–डी)

1. कोई अंश : (i) जो कम्पनी द्वारा, उसके निदेशक या धारा 49(2) व (3) के अनुपालन में उत्तराधिकारी के नाम धारित किये जाते हैं या (ii) सरकार द्वारा नियंत्रित, निगम द्वारा उसके निदेशक या उत्तराधिकारी के नाम घारित किया जाता है, यदि निम्न दशाये लागू हो।
   (क) कम्पनी या निगम जैसी भी स्थिति हो, द्वारा निदेशक या उत्तराधिकारी के नाम अंशों का धारित नहीं करने के निर्णय की तिथि को ऐसे अंशों के हस्तान्तरण फार्म पर मोहर लगाया गया है तथा
   (ख) ऐसे हस्तान्तरण प्रपत्र पूर्ण करके कम्पनी में पंजीकरण हेतु, स्टाम्प होने की तिथि के 2 माह के अन्दर भेज दिया गया है।
2. कोई अंश, किसी व्यक्ति द्वारा ऋण या अग्रिम के पुनर्भुगतान हेतु प्रतिभूति के रूप में (1) स्टेट बैंक ऑफ इण्डिया पर (2) किसी अधिसूचित बैंक पर (3) या अन्य वित्तीय संस्थानों या बैंकिंग कम्पनी पर (4) सरकार को या सरकार द्वारा नियंत्रित किसी निगम में जमा किया जाता है, तो निम्न शर्तें पूर्ण करनी चाहिये।

9.11 साराँश

उपरोक्त प्रावधानों से यह स्पष्ट है कि जो व्यक्ति अपने अंशों का हस्तान्तरण करना चाहता है तो उसे कम्पनी अधिनियम में हस्तान्तरण से संबंधित सभी नियम तथा उपनियम का अनुपालन करना होगा परन्तु भारत में डिपाजिटरी पद्धति के आने से अंशों का हस्तान्तरण आसान हो गया है।

9.12 शब्दावली

- **अंशों का हस्तान्तरण–** अंशों का हस्तान्तरण सदस्यों का ऐच्छिक कृत्य है जिसमें एक व्यक्ति अपने अंशों का स्वामित्व अधिकार अन्य व्यक्तियों को हस्तान्तरित करता है।
- **हस्तांकन–** वैधानिक उत्तराधिकारी को अंशों का हस्तान्तरण, हस्तांकन कहलाता है।

9.13 बोध प्रश्न

सही/गलत लिखिए।

1. कम्पनी के अंश चल सम्पत्ति हैं जिन्हें अन्तर्नियमों में निर्दिष्ट नियमों के अनुसार हस्तांतरित किया जा सकता है।
2. सार्वजनिक कम्पनी के अंशों को हस्तांतरित करने के अधिकार को अन्तर्नियमों द्वारा कम किया जा सकता है।
3. हस्तांतरण विलेख का किसी निर्धारित प्रारूप मे होना अनिवार्य नहीं है।
4. हस्तांतरण विलेख में कोई भी प्रविष्टि करने से पहले उसे निर्धारित अधिकारी के समक्ष प्रस्तुत करना चाहिए।
5. हस्तांतरण विलेख पर स्टाम्प लगाना आवश्यक नहीं है।

9.14 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. सही 2. गलत 3. गलत 4. सही 5. गलत

9.15 स्वपरख प्रश्न

1. अंशों के हस्तान्तरण से आप क्या समझते हैं? यह अंशों के पारेषण से कैसे भिन्न है?
2. अंशों के हस्तान्तरण की क्या प्रक्रिया है? क्या हस्तान्तरण पर कोई प्रतिबंध है? विस्तार से समझाइये।
3. ''अंशों का हस्तान्तरण ऐच्छिक तथा पारेषण अनिवार्य है'' टिप्पणी कीजिये।

9.16 सन्दर्भ पुस्तकें

1. कुच्छल एम0सी0, सेक्रेटरियल प्रैक्टिस, 16वा संशोधित संस्करण, विकास पब्लिशिंग हाउस, प्राइवेट लि0
2. http:/www.bevaz.in/company_law/transfer_shares.htm.
3. कुच्छल एम0सी0, सेक्रेटरियल प्रैक्टिस, 16वा संशोधित संस्करण, विकास पब्लिशिंग हाउस, प्राइवेट लि0
4. गोगना पी0पी0एस0 (2009) ए0 टेक्सर बुक ऑन कम्पनी ला, नई दिल्ली, एस0 चन्द एण्ड कम्पनी।
5. कपूर जी0के0 एण्ड गुप्ता, सी0बी0 (2008), लॉ एथिक्स एण्ड कम्यूनिकेशन, नई दिल्ली, सुल्तान चन्द्र एण्ड सन्स।
6. सिंह अवतार, (2004) कम्पनी लॉ, लखनऊ, ईस्टर्न बुक कम्पनी।

इकाई 10 ऋण पत्र तथा ऋण लेने की शक्ति

इकाई की रूपरेखा

10.1 प्रस्तावना
10.2 ऋण पत्र का अर्थ
10.3 ऋणपत्र की विशेषतायें
10.4 ऋणपत्र के प्रकार
10.5 ऋणपत्र प्रन्यास प्रलेख
10.6 प्रभार तथा बन्धक
10.6.1 अर्थ
10.6.2 अन्तर
10.6.3 प्रभार का पंजीकरण
10.6.4 प्रभार का पंजीकरण न कराने के प्रभाव
10.7 प्रभार का रजिस्टर
10.8 ऋण लेने की शक्ति
10.8.1 अधिकृत ऋण
10.8.2 अनाधिकृत ऋण
10.8.3 कम्पनी से परे ऋण
10.8.4 कम्पनी के अधिकार के अन्दर परन्तु निदेशकों की शक्ति से परे ऋण
10.8.5 ऋण लेने की विधियाँ
10.9 सारॉश
10.10 शब्दावली
10.11 बोध प्रश्न
10.12 बोध प्रश्नों के उत्तर
10.13 स्वपरख प्रश्न
10.14 सन्दर्भ पुस्तकें

उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप इस योग्य हो सकेंगे कि –

- ऋणपत्र का आशय, विशेषताओं का वर्णन कर सकें ।
- ऋणपत्र प्रन्यास प्रलेख का विवेचन कर सकें ।
- प्रभार तथा बंधक/Mortgage का वर्णन कर सकें ।
- ऋण लेने की शक्ति का वर्णन कर सकें ।

10.1 प्रस्तावना

ऋणपत्र वह प्रपत्र है जो ऋण उत्पन्न करता है तथा यह ऋण बिना प्रतिभूति के होता है। निगमीय वित्त में वृहद कम्पनियाँ ऋण लेने के लिये मध्यम से दीर्घकालीन ऋण प्रपत्र 'पद' का उपयोग करती है कुछ देशों में इस पद को बाण्ड,

ऋण स्टाक या नोट के साथ भी प्रयोग किया जाता है। ऋण पत्र, ऋण के प्रमाण पत्र की तरह है या एक ऋण बाण्ड है जो इस तथ्य को प्रमाणित करता है कि कम्पनी निर्दिष्ट राशि, ब्याज सहित चुकाने की दायी है तथा ऋण पत्र द्वारा लिया गया धन कम्पनी के पूँजी ढाँचे का भाग हो गया है, परन्तु वह अंश पूँजी का भाग नहीं है। वरिष्ठ ऋणपत्रों का भुगतान अधिनस्थ ऋणपत्रों के भुगतान के पूर्व होता है तथा इनकी जोखिम व भुगतान की दर भिन्न–भिन्न होती है।

ऋणपत्रधारी, ऋण पत्रों का स्वतंत्र रूप से हस्तान्तरण कर सकता है। ऋणपत्रधारी को कम्पनी की साधारण सभा में मत देने का अधिकार नहीं होता है, परन्तु उन्हें ऋण पत्रों से संबंधित अधिकोष में परिवर्तन की पृथक सभा में मत देने का अधिकार होता है। उन्हें भुगतान किया जाने वाला ब्याज, लाभ हानि खाते में लाभ के विरूद्ध प्रभार होता है।

10.2 ऋणपत्र का अर्थ

'ऋणपत्र' शब्द को कम्पनी द्वारा निर्गमित ऋण के प्रमाण पत्र के रूप में परिभाषित कर सकते हैं जो कम्पनी की ऋण उत्पन्न करते हैं। जैसा कि हमने पूर्व में विचार किया है कि कम्पनियाँ अपने विस्तार तथा विकास के लिये धन को उधार लेती हैं। कम्पनी की ऋण संबंधी आवश्यकता को एक धनदाता पूरा नही कर सकता है। इस ऋण के कई इकाइयों में विभाजित किया जा सकता है। कम्पनी के ऋण लेने का सर्वाधिक प्रचलित तरीका ऋणपत्रों का निर्गमन है। ऋणपत्रों के निर्गमन से जनता को निश्चित धन, जैसे घोषित ब्याज दर पर निश्चित अवधि के लिये, उधार देने के लिये आमंत्रित किया जाता है। उदाहरण एक कम्पनी में एक लाख रूपये की आवश्यकता है जो 100 रू0 प्रत्येक वाले 1000 इकाइयों में विभाजित है। धनदाता इच्छानुसार कितनी भी संख्या में इकाइयों का क्रय कर सकता है। इसके पश्चात कम्पनी ऋणदाता द्वारा क्रय की गयी इकाइयों का प्रमाण पत्र जारी करती है। अतः ऋणपत्र कम्पनी के ऋणग्रस्त होने का प्रमाण है, जो कम्पनी द्वारा जारी किया जाता है जो कम्पनी की समानों पर प्रभावित/अप्रभावित होती है तथ्यों की दृष्टि से ऋण पत्र की कोई विधिक परिभाषा नही है। न्यायाधीश चिट्ठी के अनुसार "ऋणपत्र का आशय एक दस्तावेज से है जो या तो एक ऋण की उत्पत्ति बताता है या उसे स्वीकार करता है, और कोई भी दस्तावेज़ जो इन दोनों शर्तों को पूरा करता है वह एक ऋणपत्र है ।"

10.3 ऋणपत्र की विशेषतायें

उपरोक्त परिभाषा में 'ऋणपत्र' पद से निम्न विशेषतायें परिलक्षित होती है–

1. यह धारक के लिये प्रमाण पत्र में निर्दिष्ट धनराशि हेतु कम्पनी के ऋणी होने की पावती है। यह ऋण पत्र की मुख्य विशेषता है।
2. यह सामान्यतः कम्पनी की सार्वमुद्रा के अन्तर्गत प्रमाण पत्र के रूप में निर्गमित की जाती है।
3. इसमें निर्दिष्ट मूल राशि एक निश्चित तिथि पर भुगतान की जाती है। परन्तु यह आवश्यक नहीं है क्योंकि कम्पनी अविच्छिन्न या अशोधनीय ऋणपत्रों को

निर्गमित कर सकती है जो कम्पनी के समापन या अन्य घटना में घटित होने पर ही भुगतान योग्य होते हैं (धारा 120)

4. इसमें ब्याज के भुगतान का प्रावधान तब तक होता है जब तक कि मूलराशि को वापस न कर दिया जाय। यह आवश्यक नही है क्योंकि हो सकता है कि ब्याज का भुगतान किसी निश्चित घटना के घटने पर ही हो। (लेमन बनाम ए0एफ0 इनवेस्टमेंट ट्रस्ट, 1926 सी0एच02)
5. सामान्यतः यह ऋणपत्रों की श्रृंखला में जारी किये जाते हैं। हालांकि एक व्यक्ति को एक ऋणपत्र जारी किये जा सकता है।
6. यह कम्पनी की कुछ सम्पत्तियों के प्रभार (स्थिर या परिवर्तनशील) द्वारा सुरक्षित होते हैं। ऋण पत्रों की कम्पनी की सम्पत्ति पर बिना प्रभार के भी जारी किया जा सकता है।
7. ऋणपत्रधारी को कम्पनी की किसी सभा में मत देने का अधिकार नही है। (धारा 117)

10.4 ऋणपत्र के प्रकार

ऋणपत्र कम्पनी ऋणों की पावती है तथा प्रपत्र में निर्दिष्ट शर्तों के ऋणों के अनुसार पुनर्भुगतान भी लिखित प्रतीक्षा है। यह कम्पनी की सार्वमुद्रा के अन्तर्गत ऋणदाता को जारी किया जाता है। यह कम्पनी के ऋण का प्रतिनिधित्व करता है। लोक कम्पनी अपने व्यवसाय` वित्तीयन हेतु ऋणपत्रों का बाजार में विक्रय कर धन एकत्र करती है।

अतः यह पूँजी प्राप्ति का एक तरीका है। यह कम्पनी के समापन के पूर्व कभी भी जारी किये जा सकते हैं।

ऋण पत्रों के प्रकार : संयुक्त स्कंध कम्पनी में ऋणपत्रों के प्रमुख प्रकार निम्न है:–

1. **सामान्य ऋण पत्र** : इन्हें नग्न ऋणपत्र भी कहा जाता है। इस प्रकार के ऋणपत्र बिना प्रतिभूति के निर्गमित किये जाते हैं। कम्पनी में समापन के समय ऐसे ऋण पत्रधारी असुरक्षित लेनदार माने जाते हैं। इसलिये यह ऋण पत्र आज–कल लोकप्रिय नही हैं।
2. **बन्धक ऋणपत्र** : ऐसे ऋण पत्र जो कम्पनी की स्थायी सम्पत्तियों जैसे प्लाण्ट, मशीनरी, भूमि व भवन द्वारा सुरक्षित होते हैं, Mortgaged ऋण पत्र कहलाते हैं। यह दो प्रकार के होते हैं–
   - क. प्रथम बन्धक ऋणपत्र
   - ख. द्वितीय बन्धक ऋणपत्र

     प्रथम बन्धक ऋणपत्रधारी को कम्पनी की सम्पत्ति पर दावा करने का प्रथम अधिकार होता है।

     द्वितीय बन्धक ऋणपत्रधारियों का कम्पनी की सम्पत्ति पर द्वितीयाधिकार होता है।

3. **वाहक ऋणपत्र :** यह प्रपत्रों जो विनिमय साध्य विलेख, के धारक को भुगतान योग्य होता है तथा सामान्य सुपुर्दगी द्वारा हस्तान्तरणीय होता है। सामान्यतः ब्याज का भुगतान ऋण पत्रों में संलग्न कूपन के प्रस्तुतीकरण पर होता है।
4. **पंजीकृत ऋणपत्र :** कम्पनी के रजिस्टर में पंजीकृत ऋणपत्रधारियों के नाम व पते अभिलिखित किये जाते हैं। इसका हस्तान्तरण तथा पारेषण कम्पनी की पुस्तकों में अंशों की तरह पंजीकृत करना चाहिये। ऋणपत्रधारी को ब्याज का भुगतान उसी प्रकार होता है जैसे लाभाँश का भुगतान होता है।
5. **मोचनीय ऋण पत्र :** इन ऋणपत्रों की राशि का पुनर्भुगतान निर्दिष्ट समय के बाद होता है। इन ऋणपत्रों का निर्गमन इस शर्त के साथ होता है कि कम्पनी निश्चित तिथि पर उसका पुनर्भुगतान कर देगी। वर्तमान समय में यह ऋण पत्र प्रचलित है।
6. **अविमोचनीय ऋण पत्र (अविच्छिन्न ऋणपत्र) :** ऐसे ऋणपत्रों पर राशि का पुनर्भुगतान विशिष्ट घटना में घटित होने पर की जाती है।
7. **चल ऋणपत्र :** इस प्रकार के ऋण पत्र कम्पनी की सभी सम्पत्तियों पर चल प्रभार द्वारा सुरक्षित रहते हैं। इन सम्पत्तियों में विनिमय विपत्र, स्टाक तथा पुस्तकीय ऋण आते हैं। यह कम्पनी के अन्य लेनदारों के असफल होने पर ऋणपत्रधारी के पक्ष में प्रभार उत्पन्न करते हैं।
8. **परिवर्तनीय ऋणपत्र :** यह ऋणपत्र कम्पनी के पूर्वाधिकार या साधारण अंशों में परिवर्तनीय होता है। यह विकल्प उन ऋणपत्रधारियों को उपलब्ध होता है जिसमें निर्गमन की शर्तों में अवधि का उल्लेख हो।
9. **संयंत्र प्रन्यास ऋणपत्र :** यह ऋण पत्र विशेष उद्देश्यों के लिये जारी किये जाते हैं। ऐसे ऋणपत्रों को व्यवसाय के संचालन हेतु किसी संयंत्र को क्रय कने हेतुधन की व्यवस्थ करने के लिये किया जाता है।
10. **आय ऋण पत्र :** इस प्रकार के ऋणपत्रों के धारक चालू वर्ष के लाभ में से निश्चित दर पर ब्याज प्राप्ति के अधिकारी होते हैं। यदि कम्पनी के लाभ नही होता है तो उसे कोई ब्याज प्राप्त नही होगा। इसलिये यह ऋणपत्र आजकल प्रचलित नहीं है।
11. **विधिक ऋण पत्र :** जहां कम्पनी की सम्पत्ति का स्वत्व संविदा द्वारा धनदाता को ऋण की सुरक्षा में हस्तान्तरित किया जाता है, को विधिक ऋण पत्र कहा जाता है।

10.5 ऋणपत्र प्रन्यास प्रलेख

ऋणपत्रों में किसी निर्गमन को सुरक्षित रखने के लिये प्रान्यास प्रलेख ऐसे प्रारूप में तथा ऐसी अवधि में कार्यान्वित होना चाहिये जो निर्धारित हो।

प्रन्यास प्रलेख की प्रति कम्पनी के किसी सदस्य या ऋणपत्रधारी के निरीक्षण हेतु खुला रहेगा तथा वह प्रन्यास प्रलेख की प्रतियाँ निर्धारित शुल्क का भुगतान प्राप्त करने का अधिकारी है।

यदि प्रन्यास प्रलेख की प्रति निरीक्षण हेतु उपलब्ध नही करायी जाती है तो कम्पनी तथा उसकी प्रत्येक दोषी अधिकारी, अपराध जारी रहने तक 500/— रू0 प्रति

दण्ड का भागी होगा। प्रन्यास की व्यवस्था है जिसमें किसी व्यक्ति या व्यक्तियों (प्रन्यासी) या किसी अन्य व्यक्ति या व्यक्तियों (लाभार्थी) के लाभ के लिये सम्पत्ति धारित किया जाता है। प्रन्यास सम्पत्ति का विधिक स्वामी होता है जबकि लाभार्थी का उसमें समान हित होता है। प्रन्यास प्रलेख एक लिखित विलेख है जिसमें ऋण या Mortgage को सुरक्षित करने के उद्‌देश्य से प्रन्यासी को सम्पत्ति विधिक रूप से हस्तान्तरित की जाती है। यह एक प्रलेख है जो प्रन्यास की शर्तों का निर्माण करता है। इसमें सामान्यतः प्रन्यासियों के नाम, लाभार्थियों की पहचान तथा प्रन्यास सम्पत्ति के स्वभाव के साथ–साथ प्रन्यासियों के अधिकार तथा दायित्व होते हैं।
यह प्रन्यासियों के अधिकार तथा दायित्व होते हैं।

यह प्रन्यासियों का निर्माण करता है जिनका दायित्व ऋणपत्रधारियों के अधिकारों तथा हितों को देखना होता है। ऋणपत्रधारी प्रन्यासियों के माध्यम से सम्पत्ति का क्रय/विक्रय कर सकते हैं। कम्पनी अधिनियम 1956 की धारा 117ए में प्रावधान हैः–

प्रन्यास प्रलेख कई विलेखों में से एक है जो नियत तिथियों पर ब्याज का भुगतान तथा ऋण पत्रों का पुनर्भुगतान को सुरक्षित करने के लिये आवश्यक है। प्रन्यास प्रलेख उस प्रारूप तथा उस अवधि में क्रियान्वित होना चाहिये जो निर्धारित है। सूचीबद्ध कम्पनियों के लिये सेवी (ऋण पत्र प्रन्यासी) विनियमन, 1993 लागू है। उपरोक्त विनियम के अनुसार ऋण पत्र प्रन्यासी को इसमें दी शर्तों के अनुसार पंजीकरण का प्रमाण पत्र प्राप्त कर सेवी में पंजीकृत होना चाहिये। उपरोक्त विनियमन में ऋणपत्र प्रन्यासियों के पंजीकरण की प्रक्रिया, उत्तरदायित्व तथा कर्तव्य एवं प्रन्यास प्रलेख के निर्धारित विषयवस्तु के प्रावधान है।

अधिनियम की धारा 119 के अनुसार ऋणपत्रधारियों के लिये, के प्रन्यास प्रलेख के प्रन्यासी प्रन्यास के उल्लंघन के लिये दायी होंगे जहाँ उन्होंने प्रत्यासियों की तरह अपेक्षित सतर्कता तथा ईमानदारी का पालन नही किया है। इसलिये प्रन्यास प्रलेख में ऐसी कोई भी शर्त जो प्रन्यासी को उसके दायित्व से छूट देती है तो ऐसी शर्त व्यर्थ होगी तथा उसका कोई विधिक प्रभाव नही होगा। ऐसी व्यवस्था में निम्न लाभ हैः–

(क) ऋणपत्रधारियों के हितों पर दृष्टि रखना प्रन्यासियों का कार्य हो गया है। यह उनका दायित्व है कि वे सुनिश्चित करे कि सम्पत्ति प्रभार बीमित हो तथा सही ढंग से संचालित है।

(ख) कम्पनी द्वारा किसी भी उल्लेखन की दशा में प्रन्यासियों की एक सभी ऋणपत्र धारियों की ओर से आवश्यक कदम उठाने चाहिये।

(ग) प्रन्यासियों को ऋणपत्रधारियों के लाभ के लिये सुरक्षा को सुनिश्चित करना चाहिये जिससे सुरक्षित ऋणपत्रधारियों के बकाये की वसूली के लिए प्रभारित सम्पत्ति का विक्रय किया जा सके।

(घ) ऋणपत्रधारियो की सुरक्षा के लिये भारित सम्पत्ति के स्वत्व विलेखों को प्रन्यासियों के पास जमा करना चाहिये। यह कम्पनी को स्वत्व विलेखों के किसी अन्य उद्‌देय के लिये दुरूपयोग होने से रोकता है।

यह ध्यातव्य है कि प्रन्यासियों को प्रन्यास विलेख में दी गयी शक्तियों को पूर्ण ईमानदारी तथा सतर्कतापूर्वक प्रयोग करना चाहिये। यदि किसी में लापरवाही बरती गयी है, तो वे ऋणपत्रधारियों के प्रति उत्तरदायी होंगे। प्रन्यास विलेख में कोई भी नियम जो प्रन्यास को उसके दायित्व निर्वहन में छूट देता है, व्यर्थ होगा। (धारा 119)

10.6 प्रभार तथा बन्धक

10.6.1 अर्थ :

प्रभार (या Mortgage) एक सुरक्षा है जो कम्पनी या सीमित दायित्व वाली साझेदारी, ऋण के समर्थन में प्रस्तावित करती है। अधिकतर प्रभारों को कम्पनी गृह में पंजीकृत होना चाहिये, चाहे वह ऋणी द्वारा हो या अधिकतर मामलों में ऋणदाता या ऋणदाता के एजेण्ट द्वारा हो।

प्रभार को पंजीकृत कराने के लिये प्रभार के विवरण, प्रभार उत्पन्न करने वाले मूल प्रपत्र के साथ 'कम्पनी हाउस' को निर्धारित समयावधि के सुपुर्द करना चाहिये। पंजीकृत होने के बाद कम्पनी हाउस मूल प्रभार प्रपत्र वापस कर देगा।

कम्पनी अधिनियम 1956 में प्रभारी को परिभाषित नही किया गया है। धारा 124 के अनुसार (प्रभार) में बंधक को शामिल किया गया है।

प्रभारों के प्रकार–

मूलतः प्रभार दो प्रकार के होते हैः–

क. जो प्रभार स्थायी तथा निश्चित सम्पत्ति पर लगता है उसे स्थिर प्रभार कहते हैं। कम्पनी ऐसी सम्पत्ति को इसके धारक की सहमति से ही विक्रय कर सकती है।

ख. चल प्रभार ऐसी सम्पत्ति पर लगता है जो बदलती रहती है। इस प्रभार की मुख्य विशेषता इसकी अनिश्चितता है। परिवर्तनशील प्रभार, वर्तमान सुरक्षा है जो कम्पनी की सभी सम्पत्तियों को प्रभावित करती है। चल प्रतिभूति भविष्य की प्रतिभूति नही हैं, यह वर्तमान प्रतिभूति कम्पनी की सभी सम्पत्तियों (इससे जुड़ी हुयी) को वर्तमान में प्रभावित करती है। चल प्रभार चल स्वभाव का होता है तथा सम्पत्ति के बदलने के साथ बदलता रहता है। ये प्रभार, प्रभारधारकों के पक्ष में उनके द्वारा स्वीकृत शर्तों व परिस्थितियों में उत्पन्न होते हैं, जैसे–

क. **पैरी पाशु (Pari Passu) प्रभार :** इस प्रभार में, प्रतिभूति को दो या उससे अधिक ऋणदाताओं के मध्य उनके द्वारा बकाये राशि के अनुपात में बांटा जाता है। इसे वर्तमान प्रभार धारकों की पूर्व सहमति से ही उत्पन्न किया जाता है।

ख. **विशिष्ट प्रभार :** यह प्रभार किसी निश्चित ऋणदाता को निश्चित सम्पत्ति पर सुरक्षा है।

ग. **अग्र प्रभार** : ऐसे मामलों में किसी निश्चित सम्पत्ति के प्रथम प्रभारधारकों की सहमति से, द्वितीय प्रभार, तृतीय प्रभार आदि के आधार पर अन्य प्रभार धारकों को दिया जाता है। इसका अर्थ है कि कम्पनी के समापन की दशा में विशिष्ट सम्पत्ति पर प्रथम प्रभार धारकों को कम्पनी से अपना बकाया राशि वसूल

करने का अधिकार होगा। इसके पश्चात ऐसी सम्पत्तियों से वसूली में कुछ शेष रहता है तो द्वितीय प्रभारधारक अपनी राशि कम्पनी से वसूल कर सकते हैं। इस प्रकार यह प्रक्रिया आधिक्य रहने तक चलती रहेगी।

10.6.2 अन्तर :

स्थिर तथा चल प्रभारों का प्रयोग कम्पनी द्वारा लिये गये ऋणों (उधार) को सुरक्षित करने के लिये होता है। ऐसे ऋण सामान्यतः कम्पनी द्वारा निर्गमित ऋण पत्रों के रूप में होते हैं। कम्पनी की सम्पत्तियों पर प्रभारों को कम्पनी गृह में पंजीकृत होना आवश्यक है तथा कुछ अन्य विधियों से भी पंजीकृत होना आवश्यक है जैसे भूमि व भवन पर प्रभार की भूमि रजिस्ट्री में पंजीकृत होना चाहिये।

स्थायी प्रभारी वह प्रभार है जो किसी निश्चित सम्पत्ति जैसे– भूमि व भवन, जहाज, मशीन का भाग, अंश, बौद्धिक संपदा (कापीराइट, पेटेन्ट, ट्रेडमार्क आदि) पर सुरक्षा प्रदान करते हैं।

चल प्रभार एक निश्चित प्रभार की सुरक्षा है जो केवल कम्पनियों को उपलब्ध होती है, यह प्रभार सामान्यतः कम्पनी की सभी सम्पत्तियों पर, कम्पनी के व्यवसाय में साधारण अनुक्रम में उसकी सम्पत्तियों की शर्तों पर, वर्तमान तथा भविष्य दोनों पर लगता है।

चल प्रभार कई उन कम्पनियों के लिये उपयोगी है जो कम्पनियों के पास निश्चित सम्पत्ति (जैसे भवन आदि) नही है, को उधार लेने की अनुमति देता है। चल प्रभार कम्पनी के सभी सम्पत्तियों जैसे रहतिया, प्लाण्ट एवं मशीनरी वाहन आदि को प्रभावित करने की अनुमति देता है।

चल प्रभार की मुख्य विशेषता यह है कि कम्पनी सामान्य व्यवसाय के अनुक्रम में क्रय तथा विक्रय कर सकती है तथा सम्पत्तियों का प्रयोग कर सकते हैं। अतः वह Mortgage की बिना सहमति के रहतिया से व्यापार तथा विक्रय कर सकती है तथ प्लाण्ट एवं मशीनरी का प्रतिस्थापन कर सकती है।

10.6.3 प्रभार का पंजीकरण :

कम्पनी अधिनियम की धारा 125(4) के अनुसार निम्न प्रकार के प्रभार अनिवार्य है तथा इन प्रभारों का कम्पनी रजिस्ट्रार के यह पंजीकरण आवश्यक है–

(क) ऋणपत्रों के निर्गमन को सुरक्षित रखने के उद्देश्य से प्रभार।

(ख) अयाचित अंश पूँजी पर प्रभार

(ग) अचल सम्पत्ति पर प्रभार

(घ) किसी पुस्तकीय ऋण पर प्रभार

(ड.) कम्पनी की किसी सम्पत्ति रहतिया सहित पर चल प्रभार।

(च) याचना की गयी है। परन्तु भुगतान नही हुआ पर प्रभार/बैंकिंग विनियमन अधिनियम 1949 की धारा 14 एक बैंक को किसी भुगतान न की गयी पूँजी (Unpaid Capital) पर प्रभार उत्पन्न करने से रोकती है।

(छ) किसी जहाज या जहाज के किसी भाग पर प्रभार

(ज) ख्याति, पेटेण्ट या पेटेण्ट के अन्तर्गत लाइसेन्स या ट्रेडमार्क पर एवं कार्पाराइट पर या कापीराइट के अन्तर्गत लाइसेन्स पर ऋणपत्रों के निर्गमन के संबंध में प्रभार का पंजीकरण धारा 128

धारा 125(4) के अनुसार कम्पनीका निम्न विवरण संबंधित कम्पनी रजिस्ट्रार के यहॉ प्रभार के पंजीकरण हेतु जमा करना चाहिये।

(i) पूरी श्रृंखला द्वारा सुरक्षित कुल राशि।

(ii) श्रृंखलाओं के निर्गमन को अधिकृत करने वाले प्रस्तावों की तिथि

(iii) प्रभारित सम्पत्ति का सामान्य विवरण।

(iv) ऋणपत्रधारियों के लिये प्रन्यासियों के नाम यदि हो

(v) प्रलेख जिसमें प्रभार हो या उसकी सत्यापित प्रति

(vi) ऋणपत्रों की राशि या कमीशन छूट का प्रतिशत या भुगतान किये गये भत्ते का विवरण (धारा 129)

इस संबंध में निम्न बिन्दु ध्यान रखने योग्य है:–

(i) कम्पनी रजिस्ट्रार के यहॉ ऐसे प्रभार के विवरण को फाइल करनेमें असफल रहने पर निर्गमित ऋणपत्रों की वैधता पर प्रभाव नही पड़ेगा।

(ii) ऋणपत्र स्वयं प्रभार की सम्मिलित करते हैं।

(iii) उपरोक्त दिये गये प्रभार का विवरण, प्रभार के प्रलेख के साथ या प्रलेख की सत्यापित प्रति या यदि प्रलेख नही है तो ऋणपत्रों की एक श्रृंखला की फाइल करना होगा।

(iv) कम्पनी ऋण पत्रों में प्रत्येक निर्गमन की राशि तथा तिथि को रजिस्ट्रार के यहां जमा करेगी।

(v) ऋण पत्रों का पंजीकरण, भारतीय पंजीयन अधिनियम के अन्तर्गत भी होना चाहिये।

(च) प्रत्येक प्रभार में पंजीकरण के बाद रजिस्ट्रार, पंजीकरण का प्रमाण पत्र जारी करता है, जिसमें धन की मात्रा का उल्लेख करता है जिसके लिये प्रभार किया गया है।

कम्पनी ऐसे प्रभार के पंजीकरण के प्रमाण पत्र का ऐसे ऋणपत्र पर पृष्ठांकन करती है, जिसके भुगतान के लिये प्रभार किया गया है, परन्तु प्रभार करने के पूर्व निर्गमित किये गये ऋणपत्रों पर ऐसा पृष्ठांकन नही करना पड़ता है।

यदि कम्पनी या उसका कोई अधिकारी प्रभारों के पंजीकरण से संबंधित उपरोक्त नियमों का पालन नही करता है या उल्लंघन करता है तो कम्पनी तथा प्रत्येक दोषी अधिकारी 10,000/– रू0 तक जुर्माने से दण्डनीय होगा।

निर्धारित फार्म : कम्पनी (केन्द्र सरकार) सामान्य नियम तथा फार्म (संशोधन) नियम, 2006 मे नये निर्धारित ई–फार्म 8 तथा 10 (फार्म 13 समाप्त) को प्रभार को प्रमाणित करने वाले प्रपत्र के साथ (MCA/ROC) एम0सी0ए0/आर0ओ0सी0 को आन

लाइन आधार पर फाइल करना होगा, जिसमें निर्धारित शुल्क के साथ कम्पनी तथा लेनदार के डिजिटल हस्ताक्षर होंगे।

ई–फार्म 8 तथा 10 को जमा करने की समय सीमा : धारा 125 के अन्तर्गत प्रभार के उत्पन्न होने पर धारा 135 के अन्तर्गत प्रभार में संशोधन की तिथि के 30 दिन के अन्दर ई–फार्म पूर्ण कर आन–लाइन आधार पर आर0ओ0सी0 के यहाँ जमा करना आवश्यक है।

प्रभार वाले संलेख के निष्पादन या जहाँ संलेख नही है, वहाँ श्रृंखला के ऋणपत्रों के निष्पादन के 30 दिन के अन्दर, ऋण पत्रों के निर्गमन से संबंधित प्रभारों का विवरण ई–फार्म 10 मे भरकर, प्रभार उत्पन्न करने वाले प्रपत्र के साथ तथा कम्पनी अधिनियम 1956 के अनुसूची X में निर्धारित फाइलिंग शुल्क के साथ कम्पनी रजिस्ट्रार को जमा करना चाहिये।

प्रभार उत्पन्न होने या प्रभार में संशोधन के बाद प्रारम्भिक 30 दिन बीत जाने पर, संबंधित आर0ओ0सी0 अगले 30 दिन के अन्दर आवश्यक विवरण फाइल करने की अनुमति देगा। इसकी अनुमति तभी मिलेगी जब कम्पनी अधिनियम की अनुसूची X में निर्दिष्ट शुल्क की राशि के अधिकतम 10 गुना तक, अतिरिक्त शुल्क का भुगतान कर दिया गया हो। हालाकि यह माना जाता है कि मात्र एक गुना अतिरिक्त फाइलिंग शुल्क ही कम्प्यूटर द्वारा जुर्माने के रूप में लिया जायेगा।

प्रभार का पंजीकरण हेतु विवरण फाइल करने का दायित्व : यह कम्पनी का दायित्व है कि वह, कम्पनी अधिनियम के भाग V के अन्तर्गत आवश्यक पंजीकरण हेतु ऋण पत्रों के प्रत्येक निर्गमन तथा कम्पनी द्वारा उत्पन्न प्रत्येक प्रभार का विवरण पंजीकरण हेतु रजिस्ट्रार को फाइल करें।

यदि किसी व्यक्ति का कोई हित हो तो प्रभारों के पंजीकरण का विवरण फाइल कर सकता है। इस संबंध में यह ध्यान रखने योग्य है कि धारा 134 (2) के अनुसार प्रभार का पंजीकरण करने के लिये आवेदन कम्पनी में अन्य व्यक्तियों द्वारा भी किया जा सकता है। यह व्यक्ति उनके द्वारा दी जाने वाले शुल्क की कम्पनी से वसूल सकते हैं।

10.6.4 प्रभार का पंजीकरण न कराने के प्रभाव :

कम्पनी का यह दायित्व है कि प्रभार के पंजीकरण के लिये उसके विवरण कम्पनी रजिस्ट्रार को निर्धारित समय के अन्दर फाइल करें। प्रभार में हित रखने वाली कोई व्यक्ति भी इसके विवरण निर्धारित समय के अन्दर रजिस्ट्रार को फाइल कर सकता है।

प्रभार का पंजीकरण न कराने तथा विवरण न दाखिल करने के निम्न परिणाम होते हैं–

(i) धारा 125(4) के अन्तर्गत आने वाले सभी प्रभार व्यर्थ होंगे जब तक कि रजिस्ट्रार द्वारा उसका पंजीकरण न किया गया हो तथा धारा 125 के अन्तर्गत प्रभार व्यर्थ होते ही उसके द्वारा सुरक्षित धन, कम्पनी द्वारा तत्काल भुगतान योग्य हो जायेगा।

(ii) समापक (कम्पनी के समापन की दशा में) के विरूद्ध प्रभार व्यर्थ होंगे तथा लेनदार के विरूद्ध, यदि है तो जहाँ तक कम्पनी का संबंध है, समापन न होने के तक प्रभार बने रहेंगे।

(iii) पंजीकरण न कराने पर प्रतिभूति व्यर्थ हो जाती है परन्तु कम्पनी की किसी संविदा पर पंजीकरण न कराने का प्रभाव नही पड़ेगा।

(iv) कम्पनी तथा उसका प्रत्येक अधिकारी या अन्य व्यक्ति जो गलती के लिये दोषी है 5000/— रू0 प्रति दिन (जब तक उल्लंघन जारी रहता है) जुर्माने से दण्डनीय होंगे) धारा 142(1)

10.7 प्रभार का रजिस्टर

कम्पनी अधिनियम 1956 की धारा 130 के अनुपालन में कम्पनियों के रजिस्ट्रार को प्रभार का रजिस्टर पृथक बनाना आवश्यक है। कम्पनियों के रजिस्ट्रार इस रजिस्टर में निम्न प्रावधान है—

(क) प्रभारों के रजिस्टर बनाने हेतु रजिस्ट्रार की आवश्यकतायें धारा 130(1) के अनुसार कम्पनियों के रजिस्ट्रार का यह कर्तव्य है कि वह प्रत्येक कम्पनी के प्रभार का रजिस्टर बनावे जिसमें अधिनियम के भाग V के अन्तर्गत सभी प्रभार जिनका पंजीकरण आवश्यक है, के विवरण रखेगा।

(ख) **रजिस्ट्रार के आवश्यक विवरण अग्रसारित करने का कम्पनी का दायित्व :** धारा 130(1) के अनुसार प्रतयेक कम्पनी को धारा 128 व 129 में उल्लिखित प्रभारों का विवरण रजिस्ट्रार के पास भेजना आवश्यक है (ऋणपत्रों के धारक को प्रभार से लाभ की दशा में) तथा अन्य प्रभार की दशा में निम्न बातें लागू होगी।

यह विवरण कम्पनी अधिनियम 1956 की अनुसूची X के अनुसार निर्धारित फार्म एवं विधि तथा शुल्क भुगतान के बाद भेजा जाता है जो धारा 130(1) के अनुसार रखे गये रजिस्टर कें अभिलिखित होगा

प्रभारों के रजिस्टर में लेखा करने के लिये निम्न विवरण रजिस्ट्रार को भेजना आवश्यक है:—

(i) यदि प्रभार को कम्पनी द्वारा उत्पन्न किया गया है, प्रभार उत्पन्न होने की तिथि तथा यदि प्रभार कम्पनी द्वारा अधिग्रहित सम्पत्ति पर है तो कम्पनी द्वारा सम्पत्ति को अभिग्रहीत करने की तिथि

(ii) प्रभार द्वारा सुरक्षित राशि

(iii) प्रभारित सम्पत्ति का संक्षिप्त विवरण

(iv) प्रभार के योग्य व्यक्ति

रजिस्ट्रार कार्यालय में प्रभागों के रजिस्टर को भोतिक निरीक्षण (धारा 130) : धारा 130(3) के अनुसार प्रभारों का रजिस्टर का धारा 130 के अनुपालन में किसी भी व्यक्ति (50/— रू0 प्रति निरीक्षण) के निरीक्षण के लिए खुला रहेगा। इलेक्ट्रानिक फाइलिंग पद्धति की दशा में कोई भी व्यक्ति प्रभारों का निरीक्षण रजिस्ट्रार को निर्धारित शुल्क देकर, निर्धारित प्रक्रियानुसार www.mca.gov.in देख सकता है।

कम्पनी द्वारा प्रभार का रजिस्टर रखना : धारा 143 के अनुसार प्रत्येक कम्पनी को अपने पंजीकृत कार्यालय में प्रभारों का रजिस्टर रखना आवश्यक है। धारा 143(1) के अनुसार प्रत्येक कम्पनी का अपने पंजीकृत कार्यालय में प्रभारों का रजिस्टर रखना आवश्यक है तथा उसमें सम्बंधित सभी प्रभारों का अभिलेखन होना चाहिये, विशेषतः जो कम्पनी की सम्पत्ति करते हैं तथा कम्पनी की किसी भी सम्पत्ति पर चल प्रभार है। धारा 136 के अनुसार एकरूप ऋणपत्रों की श्रृंखला की दशा में, उस श्रृंखला के एक ऋण पत्र की प्रति कम्पनी के पंजीकृत कार्यालय में रखना पर्याप्त होगा। प्रत्येक प्रभार के संबंध मे कम्पनी द्वारा रखे प्रभारों के रजिस्टर में निम्न विवरण लिखे जायेंगेः–

(क) प्रभारित सम्पत्ति का संक्षिप्त विवरण

(ख) प्रभार की राशि

(ग) धारक की प्रतिभूतियों की दशा को छोड़कर प्रभार के योग्य व्यक्तियों के नाम यदि कम्पनी का कोई अधिकारी धारा 143(1) के अन्तर्गत आवश्यक प्रविष्टियों की जानबूझकर छिपाता है या जानकर अधिकृत करता या लेखा मिटाने की अनुमति देता है तो वह 5000/– रू0 तक के जुर्माने से दण्डनीय होगा।

कम्पनी ला बोर्ड/केन्द्र सरकार की विलंब के परिहार की शक्ति : धारा 141 केन्द्र सरकार की, प्रभारों के पंजीकरण या प्रभारों के विवरण दाखिल करने में हुये विलंब के परिहार तथा इसके लिये अतिरिक्त समय कम्पनी को देने की शक्ति देता है, यदि ऐसी देरी भूल या किसी उचित कारण से हुयी हो। इस भूल में लापरवाही तक असावधानी सम्मिलित है, जब ऐसी भूल का उद्देश्य कपटपूर्ण न हो। प्रभारों के विवरण दाखिल करने में अकर्मण्यता के कारण हुयी देरी का परिहार नही होगा।

यदि प्रभार के रजिस्टर में कोई लेखा छूट गया है या गलत लिखा गया है तो केन्द्र सरकार की उसमें सुधार का आदेश देने की भी शक्ति है।

10.8 ऋण लेने की शक्ति

ऋण लेने के आधार पर कम्पनी को दो वर्गों में बॉटा गया हैः–

(क) व्यापारिक कम्पनियाँ

(ख) गैर व्यापारिक कम्पनियाँ

(क) व्यापारिक कम्पनियों द्वारा ऋण लेना : व्यापारिक कम्पनियाँ वे हैं जो वस्तुओं के क्रय तथा विक्रय का व्यवसाय करती है। ऐसी कम्पनियों को व्यवसाय के लिए ऋण लेने की गर्भित शक्ति प्राप्त होती है। ऐसी कम्पनियों को उनके पार्षद सीमा नियम से ऋण लेने के लिये अधिकृत आवश्यकता नही है। वास्तव में, व्यापारिक कम्पनियों में प्रासंगिक है।

(ख) गैर–व्यापारिक कम्पनियों द्वारा ऋण लेना : गैर व्यापारिक कम्पनियाँ वह कम्पनी है जो वस्तुओं का क्रय–विक्रय का व्यवसाय नही करती है पेशेवर की कम्पनियाँ ऐसी कम्पनियों को ऋण लेने की गर्भित शक्ति नही होती है। ऐसी कम्पनियाँ ऋण तभी ले सकती है जब वह उसके पार्षद सीमा नियम द्वारा अधिकृत हो। यदि कम्पनी के पार्षद सीमा नियम ऐसा प्रावधान नही है तो

सर्वप्रथम कम्पनी ऋण लेने की शक्ति के लिए पार्षद सीमा नियम में संशोधन करेगी इसके बाद ऋण लेगी।

यहाँ महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि कम्पनी अधिनियम में कम्पनियों को ऋण लेने के लिए कोई स्पष्ट शक्ति नही प्रदान की गयी है। इसलिए अधिकतर कम्पनियाँ अपने पार्षद सीमा नियम में ऐसी ऋण लेने की शक्ति का स्पष्ट प्रावधान करती है तथा पार्षद अन्तर्नियम में ऋण कब, कैसे तथा किससे लिया जा सकेगा, का उल्लेख रहता है। कम्पनियों के पार्षद अन्तर्नियम में ऋण की अधिकतम राशि भी निश्चित की जाती है। जहाँ कम्पनी को ऋण लेने की स्पष्ट या गर्भित शक्ति होती है वहाँ कम्पनी के निदेशक, निदेशक मण्डल की बैठक में ऋण लेने की शक्ति के प्रयोग का प्रस्ताव पारित करते हैं। (धारा 292 (1) कम्पनी के निदेशक समय–समय पर ऋण की कोई धनराशि निम्न प्रतिबंधों के साथ ले सकते हैंः–

(i) कम्पनी के निदेशक, कम्पनी की दत्त पूँजी (Paid up Capital) तथा उसके मुक्त संचयों के योग से अधिक ऋण नही ले सकते हैं। यह प्रतिबंध ऋण की कुल धनराशि से संबंधित है। यदि कुल ऋण उपरोक्त सीमा से अधिक है तो उसे कम्पनी साधारण सभा में अनुमति प्राप्त होनी चाहिये। धारा 292 (1) (d)

(ii) कम्पनी के निदेशकों के ऋण लेने की शक्ति, कम्पनी के पार्षद सीमा नियम का अन्तर्नियम द्वारा भी प्रतिबंधित की जा सकती है।

नोट :

1. उपरोक्त (i) में वर्णित ऋण की अधिकतम राशि में कम्पनी द्वारा अपने व्यवसाय के लिये, बैंक से लिये गये चालू (Temporary) ऋण शामिल नही है। चालू (Temporary) ऋण वह ऋण है जो माँग पर या ऋण लेने के 6 माह के अन्दर देय हो जैसे अल्पकालीन ऋण तथा नकद साख व्यवस्था। ये प्रतिबन्ध लोक कम्पनी तथा उसकी सहायक कमपनियों पर लागू होता है।
2. एक लोक कम्पनी अपनी ऋण लेने की शक्ति का प्रयोग तब तक नही कर सकती है, जब तक कि उसने व्यवसाय प्रारम्भ करने का प्रमाण पत्र प्राप्त न कर लिया हो। (धारा 149(1))
3. कम्पनी का संचालन मण्डल ऋण लेने की शक्ति को सभा में प्रस्ताव पारित कर निदेशकों की समिति, प्रबंध निदेशकों, प्रबंधक या किसी वरिष्ठ अधिकारी को दे सकता है। धारा 292(1)

10.8.1 अधिकृत ऋण :

अधिकृत ऋण से आशय ऐसी राशि से है जो कम्पनी के पार्षद सीमा नियम द्वारा दिये गये शक्तियों के अधीन ली गयी है। ऐसे ऋण वैध तथा प्रवर्तनीय होते हैं। इनके पुनर्भुगतान के लिये कम्पनी दायी होती है।

10.8.2 अनाधिकृत ऋण :

अनाधिकृत ऋण ऐसीऋण राशि है जो बिना किसी शक्ति प्राप्त किये लिये गये हो। अनाधिकृत ऋण दो प्रकार के होते हैं–

(क) कम्पनी से परे ऋण

(ख) निदेशकों से परे परन्तु कम्पनी की अधिकार शक्ति के अन्तर्गत ऋण

10.8.3 कम्पनी से परे ऋण :

ये ऐसे ऋण होते हैं जो बिना किसी स्पष्ट या गर्भित अधिकार के लिये जाते हैं अर्थात यह कम्पनी की शक्ति से परे होते हैं। निम्न दो स्थितियों में ऋण कम्पनी की अधिकार शक्ति से परे होते हैं।

(क) जहाँ कम्पनी को ऋण लेने की शक्ति नही है, वहां लिया गया कोई ऋण कम्पनी की शक्ति से परे होता है।

(ख) जहाँ कम्पनी के पार्षद सीमा नियम में ऋण की अधिकतम राशि निर्धारित है, वहाँ इस अधिकतम राशि से अधिक ली गयी ऋण की राशि कम्पनी से परे होगी।

कम्पनी से परे ऋण व्यर्थ तथा अप्रवर्तनीय होते हैं। ऐसे ऋण दाता को कम्पनी के विरूद्ध कोई विधिक उपचार नही प्राप्त होता है। उसे अपने ऋण को वसूल करने का अधिकार नही होता है। इसके अतिरिक्त, कम्पनी द्वारा ऐसे ऋण की सुरक्षा में की गयी प्रतिभूति व्यर्थ तथा अप्रवर्तनीय होती है। हालाँकि ऋणदाता को ऋण वसूल करने का अधिकार नही होता है परन्तु कम्पनी के विरुद्ध उसे निम्न अधिकार प्राप्त होते हैं–

(i) **निषेधाज्ञा** : निषेधाज्ञा से आशय न्यायालय द्वारा किसी व्यक्ति को कोई कार्य करने से रोकना है। यदि कम्पनी द्वारा उधार ली गयी राशि खर्च नही की गयी है, तो ऋणदाता, कम्पनी के विरूद्ध निषेधाज्ञा का वाद दायर कर सकता है तथा कम्पनी के धन खर्च करने पर रोक का आदेश ले सकता है। इस प्रकार ऋणदाता कम्पनी से अपना धन वापस ले सकता है।

(ii) **प्रत्यासन** : प्रत्यासन का अर्थ है एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति का प्रतिस्थापन। यदि कम्पनी द्वारा अनाधिकृत ऋण राशि का उपयोग उसके विधिपूर्ण ऋणों की दुकानें में खर्च किया गया है तो ऋणदाता, कम्पनी के ऋण चुकाने के अधिकार का प्रत्यासन (Subrogate) करेगा। इस प्रकार कम्पनी से ऋण वसूल सकता है।

यह ध्यान देने योग्य है कि ऋणदाता द्वारा लेनदार को ऋण चुकाने के अधिकार का प्रकासन (Subrogate) के बाद भी उसे अन्य लेनदारों पर प्राथमिकता नही मिलेगी।

नोट– यदि ऋण राशि का उपयोग अंश पूँजी के भुगतान में किया गया है तो ऋणदाता को अंशधारियों के अधिकार का प्रत्यासन नही होगा। (ब्लैकबर्न तथा डिस्ट्रिक्ट बेनिफिट सोसाइटी बनाम कनलीकी ब्रुक्स कम्पनी (1882) 22 सी0एच0डी0 61, साइटेड पेनिंग टन्स कम्पनी लॉ 4था संस्करण 1979 द्वारा बटरवर्थ, पेज 102

(iii) **पहचान** : कभी–कभी अनाधिकृत ऋण राशि का उपयोग कम्पनी द्वारा सम्पत्ति क्रय करने में किया जाता है या मूल रूप में होती है। ऐसे मामलों में

ऋणदाता उस सम्पत्ति या धन पर वाद कर सकता है, यदि उसकी कम्पनी के अधिकार में पहचान कर ली गयी है।

कई बार ऋणदाता की राशि को कम्पनी के धन में इस प्रकार मिला दिया जाता है कि पृथक रूप से उसे नही पहचाना जा सकता है ऐसी दशा में ऋणदाता, कम्पनी के समापन पर अंशधारियों के साथ कम्पनी की सम्पत्ति में Paripassu वितरण (बिना प्राथमिकता के) का दावा कर सकता है। अन्य शब्दों में कम्पनी के समापन के समय उसकी सम्पत्ति के वितरण में ऋणदाता, अंशधारियों के साथ आनुपातिक वितरण की भाग कर सकता है– अधिकार से परे ऋण तथा अंशों पर चुकायी गयी राशि का अनुपात में (सिनक्लेयर बनाम ब्राघम (1914) ए0सी 398)

(iv) **क्षति की वसूली** : ऋणदाता, कम्पनी के निदेशकों के विरूद्ध अधिकार से अधिक ऋण लेने का वाद दायर कर सकता है। यदि ऋण पार्षद सीमा नियम तथा अन्तर्नियम की अधिकार शक्ति से परे लिया गया है तो निदेशक दायी नही होंगे।

10.8.4 निदेशकों से परे परन्तु कम्पनी की अधिकार शक्ति में ऋण :

यह ऐसे ऋण हैं जो कम्पनी की शक्ति के अन्तर्गत आते हैं परन्तु निदेशकों की शक्ति से परे होते हैं उदाहरण– जहाँ कम्पनी के पार्षद सीमा नियम में निर्दिष्ट उद्देश्यों के आधार पर ऋण लिया गया है परन्तु निदेशकों ने अपनी अधिकतम ऋण सीमा से अधिक ऋण ले लिया है। ऐसे मामले वहाँ होते हैं जहाँ कम्पनी को ऋण का अधिकार तो है परन्तु निदेशकों को निश्चित सीमा तक ही ऋण लेने का अधिकार दिया है। ऐसे ऋणों में कम्पनी द्वारा संशोधन किया जा सकता है। संशोधन के बाद निदेशकों के कृत्य के लिये कम्पनी बाध्य होगी तथा ऋण चुकाने की दायी होगी। परन्तु जहाँ निदेशकों का कृत्य संशोधित नही किया गया है, वहाँ एजेन्सी के सामान्य सिद्धान्त लागू होंगे। ऐसे मामलों में कम्पनी तभी दायी होगी जब ऋण कम्पनी के नाम तथा उसके लाभ के लिये लिया गया हो।

नोट– कम्पनी अधिनियम 1956 की धारा 293 के अनुसार लोक कम्पनी के निदेशक, कम्पनी की चुकता पूँजी से अधिक ऋण नही ले सकते हैं। इस प्रावधान का उल्लंघन तभी वैध होगा जबकि ऋणदाता यह सिद्ध कर दे कि उसे अधिकतम ऋण सीमा की जानकारी नही थी तथा उसने सद्भाव में ऋण दिया था। धारा 293 (5)

कई बार ऋण कम्पनी की शक्ति के अन्तर्गत आता है परन्तु निदेशक उसका दुरूपयोग करते हैं। ऐसे मामलों कम्पनी दायी होगी यदि ऋणदाता को दुरूपयोग की जानकारी नही है।

अतः जहां ऋण कम्पनी की अधिकार सीमा के अन्तर्गत है वहां ऋणदाता विपरीत रूप में प्रभावित नही होगा क्योंकि कम्पनी में अधिकारियों ने अनाधिकृत गतिविधियों के लिये ऋण का आवेदन किया था, यदि ऋणदाता का धन के दुरूपयोग की जानकारी है। यदि ऋण कम्पनी के उद्देश्यों से विपरीत है तो ऐसा ऋण कम्पनी से परे तथा अवैध होता है। इण्टरनेशनल लिमिटेड (1969) आल इंग्लैण्ड रिपोर्टर 887

10.8.5 ऋण लेने की विधियाँ :

कम्पनी निम्न में से किसी विधि द्वारा ऋण ले सकती है–

1. ऋण पत्र एवं बाण्ड
2. बैंकों तथा वित्तीय संस्थाओं से ऋण
3. जन जमा

ऋण, कम्पनी की सम्पत्तियों पर प्रभार द्वारा सुरक्षित होते हैं जिसका वर्णन पिछली इकाई में किया गया है। ऋण पत्र तथा बाण्ड कम्पनी की सम्पत्तियों पर पूर्ण सुरक्षित होते हैं जबा में जन जमा (Public Deposit) असुरक्षित होते हैं। इन पर कम्पनी की सम्पत्तियों पर प्रभार नही होता है।

10.9 सारॉंश

कम्पनी के पास विविध श्रोतों से धन प्राप्त करने के कई विकलप होते हैं। इस संदर्भ में ऋणपत्र सर्वोत्तम विकल्प है। कम्पनी की ऋण पत्रों तथा अन्य श्रोतों से ऋण लेने की शक्ति अधिकृत होती है। सभी प्रकार के ऋणों का पंजीकरण होता है। इस प्रकार के ऋण कम्पनी की सम्पत्तियों पर प्रभार उत्पन्न करते हैं।

10.10 शब्दावली

- **ऋण लेने की शक्ति :** ऋण लेने के आधार पर कम्पनी को दो वर्गों में बॉटा गया हैः– (क) व्यापारिक कम्पनियाँ, (ख) गैर व्यापारिक कम्पनियाँ। व्यापारिक कम्पनियाँ वे हैं जो वस्तुओं के क्रय तथा विक्रय का व्यवसाय करती है। ऐसी कम्पनियों को व्यवसाय के लिए ऋण लेने की गर्भित शक्ति प्राप्त होती है। गैर व्यापारिक कम्पनियाँ वह कम्पनी है जो वस्तुओं का क्रय–विक्रय का व्यवसाय नही करती है पेशेवर की कम्पनियाँ ऐसी कम्पनियों को ऋण लेने की गर्भित शक्ति नही होती है।
- **ऋण पत्र :** यह धारक के लिये प्रमाण पत्र में निर्दिष्ट धनराशि हेतु कम्पनी के ऋणी होने की पावती है।
- **स्थिर तथा चल प्रभार :** जो प्रभार स्थायी तथा निश्चित सम्पत्ति पर लगता है उसे स्थिर प्रभार कहते हैं। कम्पनी ऐसी सम्पत्ति को इसके धारक की सहमति से ही विक्रय कर सकती है। चल प्रभार ऐसी सम्पत्ति पर लगता है जो बदलती रहती है। इस प्रभार की मुख्य विशेषता इसकी अनिश्चितता है।

10.11 बोध प्रश्न

खाली स्थान भरो–

1. प्रभार .... तथा चालू दो प्रकार का होता है।
2. .... एक विलेख है जो प्रन्यास की शर्तों का निर्माण करता है।
3. वाहक ऋण पत्र............................. द्वारा हस्तान्तरणीय होता है।
4. .... ऋणपत्र का भुगतान एक निश्चित अवधि के बाद होता है।

10.12 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. स्थिर, 2. प्रन्यास प्रलेख, 3. सुपुर्दगी, 4. मोचनीय।

10.13 स्वपरख प्रश्न

1. ऋणपत्र से आप क्या समझते हैं? इसके विभिन्न प्रकारों की परिभाषित कीजिये।
2. कम्पनी की ऋण लेने की शक्ति का वर्णन कीजिये। ऋण कब कम्पनी से परे कहलाते हैं?
3. कम्पनी की सम्पत्तियों पर उत्पन्न होने वाले प्रभारों के विभिन्न प्रकारों का वर्णन कीजिये।

10.14 सन्दर्भ पुस्तकें

1. गोगना पी0पी0एस0 (2009) ए0 टेक्सट बुक ऑन कम्पनी ला, नई दिल्ली, एस0 चन्द एण्ड कम्पनी।
2. कपूर जी0के0 एण्ड गुप्ता, सी0बी0 (2008), लॉ एथिक्स एण्ड कम्यूनिकेशन, नई दिल्ली, सुल्तान चन्द्र एण्ड सन्स।
3. सिंह अवतार, (2004) कम्पनी लॉ, लखनऊ, ईस्टर्न बुक कम्पनी।

इकाई 11 कम्पनी की सदस्यता

इकाई की रूपरेखा

11.1 प्रस्तावना
11.2 सदस्य की क्षमता
11.3 सदस्यता प्राप्त करने की विधियाँ
11.4 सदस्यता की समाप्ति
11.5 सदस्यता का निष्कासन
11.6 सदस्यों के अधिकार
11.7 सदस्यों के दायित्व
11.8 सदस्यों के रजिस्टर
11.8.1 सदस्यों की अनुक्रमणिका
11.8.2 रजिस्टर तथा अनुक्रमणिका का निरीक्षण
11.9 साराँश
11.10 शब्दावली
11.11 बोध प्रश्न
11.12 बोध प्रश्नों के उत्तर
11.13 स्वपरख प्रश्न
11.14 संदर्भ पुस्तकें

उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप इस योग्य हो सकेंगे कि ––

- सदस्यता प्राप्त करने के तरीके का विवेचन कर सकें।
- सदस्यता की समाप्ति का वर्णन कर सकें।
- सदस्यों के अधिकार तथा दायित्व का विवेचन कर सकें।

11.1 प्रस्तावना

कम्पनी एक कृत्रिम व्यक्ति है जो विधि द्वारा निर्मित होती है, जिसका पृथक अस्तित्व, अविच्छिन्न उत्तराधिकार तथा सार्वमुद्रा होती है। हमें कम्पनी के निर्माण के लिये कुछ व्यक्तियों की आवश्यकता होती है जिससे वह निगमीय संस्था के रूप में परिभाषित हो सके। इसकी पृथक अस्तित्व की विशेषता के कारण, कम्पनी की एक अलग पहचान है। कम्पनी का निर्माण करने वाले व्यक्ति उसके सदस्य या अंशधारी होते हैं। कम्पनी का सदस्य वह व्यक्ति होता है जो कम्पनी का पार्षद सीमा नियम में हस्ताक्षर करता है। कोई व्यक्ति जो कम्पनी को सदस्य होने की लिखित स्वीकृति देता है तथा जिसका नाम कम्पनी के सदस्यों के रजिस्टर में अभिलिखित है, वह भी कम्पनी का सदस्य होता है। (धारा 41)

यहाँ यह तथ्य महत्वपूर्ण है कि कम्पनी अधिनियम में पद 'सदस्य' तथा 'अंशधारी' को एक दूसरे के स्थान पर प्रयोग किया जाता है। एक अंशधारी वह व्यक्ति है जो कम्पनी के अंशों को धारित करता है। कुछ अपवादजनक मामलों में पद सदस्य तथा अंशधारी को पर्यायवाची के रूप में प्रयोग किया जाता है। इन अपवाद वाले

मामलों में व्यक्ति सदस्य तो हो सकता है, परन्तु अंशधारी नही अथवा वह अंशधारी हो सकता है सदस्य नहीं। निम्न मामलों में व्यक्ति सदस्य होता है, परन्तु अंशधारी नही होता हैः–

(क) एक व्यक्ति जो पार्षद सीमानियम पर हस्ताक्षर करता है, पार्षद सीमानियम का पंजीकरण होते ही बिना अंशों का आवंटन के तुरन्त सदस्य हो जाता है।

(ख) एक व्यक्ति जो अंशों का हस्तान्तरण करता है, वह तब तक कम्पनी के सदस्य बना रहता है जब तक कि उसके नाम को हस्तान्तरिती के नाम से प्रतिस्थापित नहीं किया जाता है, परन्तु वह अंशधारी नहीं रह जाता है।

(ग) एक व्यक्ति जो अंशों के हरण, समर्पण या हस्तान्तरण के कारण अंशधारी के रूप में प्रतिबंधित हो जाता है, वह वर्तमान सदस्य के विफल होने पर, अंशों की अदत राशि के भुगतान के लिये सदस्य के रूप में दायी होगा।

(घ) एक गारण्टी द्वारा सीमित कम्पनी यह असीमित कम्पनी, जिसकी अंश पूँजी नही है, में मात्र सदस्य होते हैं अंशधारी नहीं।

निम्न मामलों में एक व्यक्ति अंशधारी होगा, सदस्य नहीं:–

1. अंश अधिपत्र (Warrant) को रखने वाला व्यक्ति अंशधारी होगा परन्तु सदस्य नही होगा। (धारा 115(1)) हालाकि कुछ विशिष्ट मामलों में वह सदस्य माना जायेगा, यदि कम्पनी के पार्षद अन्तर्नियम इसका प्रावधान करते हैं।
2. मृत अंशधारी के विधिक प्रतिनिधि कम्पनी के अंशधारी होते हैं, जबकि उनका नाम कम्पनी रजिस्टर में नही चढ़ा होता है। वह सदस्य तभी बनेगा जब उसका नाम रजिस्टर में अभिलखित हो जाये।

महत्वपूर्ण नोट : डिपाजिटरी अधिनियम 1996 में नयी उपधारा 41(3) जोड़कर सदस्य की परिभाषा के विस्तृत कर दिया है। इस धारा के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति जो कम्पनी की समता अंश पूँजी धारित करता है तथा जिसका नाम डिपाजिटरी के अभिलेख में लाभकारी स्वामी के रूप में उल्लिखित है, कम्पनी का सदस्य माना जायेगा।

11.2 सदस्य की क्षमता

जहाँ तक सदस्य की क्षमता का संबंध है, कम्पनी विधि इस संबंध में मौन है, सामान्यतः क्षमता से आशय व्यक्ति की अनुबंध करना क्षमता से भी है। अन्य संविदा की तरह कम्पनी में अंशों के क्रय की संविदा होती है। कोई भी व्यक्ति जो वैध संविदा कर सकता है, कम्पनी की सदस्यता उसके लिये खुली रहती है। सदस्यों की क्षमता के संबंध में भारतीय संविदा अधिनियम 1872 लागू होता है। कुछ व्यक्तियों के कम्पनी का सदस्य बनने की क्षमता का विवेचन निम्न हैः–

1. **अवयस्क** : अवयस्क से किये गये सभी संविदा पूर्णतः व्यर्थ होते हैं। इसलिए कम्पनी के सदस्य नही बन सकते हैं। हालॉकि अवयस्क के नाम अंशों का आवंटन हो सकता है तथा उसका नाम सदस्यों के रजिस्टर में भी अभिलिखित हो सकता है। इसका आशय है कि यदि किसी भी स्थिति में अवयस्क कम्पनी का सदस्य बन जाता है तो उसे किसी स्थिति में किसी प्रकार के धन के भुगतान या अन्य दायित्व के लिये दायी नही ठहराया जा सकता है। अवयस्क के वयस्कता की आयु (18 वर्ष) प्राप्त करने पर तथा

अपने नाम की उपस्थिति कम्पनी के सदस्यों के रजिस्टर में होने की जानकारी होने पर, अवयस्क, न्यायिक निर्णयों द्वारा या विधि द्वारा निर्धारित समय के अन्दर अंशों के आवंटन का परित्याग कर सकता है। परन्तु यदि वह ऐसा नही करता है या कोई ऐसा कार्य करता है जिससे यह निश्चित हो कि उसने अंशों को स्वीकार कर लिया है, जैसे तो वह सदस्य के रूप में दायी होगा। अवयस्कता के दौरान अवयस्क किसी भी समय अंशों के आवंटन का परित्याग कर सकता है।

अवयस्क की सदस्यता के संबंध में निम्न बिन्दु न्यायिक निर्णयों पर आधारित है–

(क) यदि अंशों का हस्तान्तरण अवयस्क व्यक्ति को किया गया है, हस्तान्तरणकर्ता, हस्तान्तरिती के वयस्क होने तक, ऐसे अंशों के भविष्य की सभी याचना के लिये दायी होगा, भले ही हस्तान्तरणकर्ता को हस्तान्तरिती के अवयस्क होने की जानकारी न हो।

(ख) कम्पनी के पास पूर्णदत्त अंश होने की दशा में कम्पनी सदस्यों के रजिस्टर में अवयस्क का नाम लिख लेगी। ऐसी दशा में अवयस्क का कोई दायित्व नही होगा।

(ग) यदि अवयस्क का नाम सदस्यों के रजिस्टर में लिख गया है तो कम्पनी बाद में स्वतः उसका नाम नही काट सकती है। यदि अवयस्क का नाम इस प्रकार काटा गया है तो अवयस्क को सदस्यों के रजिस्टर में सुधार का अधिकार प्राप्त है।

(घ) अंग्रेजी विधि के अनुसार अवयस्क कम्पनी में सदस्य बन सकते हैं। इंग्लैण्ड में अवयस्क के साथ किया गया समझौता मात्र व्यर्थनीय होता है, पूर्णतः व्यर्थ नहीं। व्यर्थनीय समझौते पूर्णतः वैध होते हैं जब तक कि अवयस्क इन्हें समाप्त न कर दे।

2. **साझेदारी फर्म** : साझेदारी फर्म विधिक व्यक्ति नही है तथा वह अपने नाम से अंशों को क्रय करने में सक्षम नही होती है। इसलिये साझेदारी फर्म, कम्पनी की सदस्य नही बन सकती है। एक फर्म अपने साझेदारों के नाम से सयुक्त अंशधारी के रूप में कम्पनी के अंशों को धारित कर सकती है। अन्य शब्दों में फर्म अंशों का क्रय, फर्म की सम्पत्ति के एक भाग के रूप में कर सकती है, परन्तु अंश साझेदारी के नाम पर ही धारित होंगे।

   नोट– एक साझेदारी फर्म, किसी ऐसे संगठन या कम्पनी में सदस्य बन सकती है, जो धारा 25 के अन्तर्गत दान वाली संस्था के रूप में लाइसेन्स प्राप्त हो।

3. **कम्पनी** : हम जानते हैं कि कम्पनी एक विधिक व्यक्ति है तथा वैध संविदा करने में सक्षम है। इसलिये कम्पनी, अन्य कम्पनी की सदस्य बन सकती है, यदि पार्षद सीमानियम या अन्तर्नियम द्वारा अधिकृत है। यहॉ ध्यातव्य है कि एक कम्पनी, अन्य कम्पनी के अंशों में असीमित निवेश नही कर सकती है। वह, अन्य कम्पनी के अंशों में ऐसे निश्चित प्रतिशत निवेश कर सकती है, जो

समय–समय पर इस संबंध में विधि या सरकार द्वारा निर्धारित किया जाता है। इस संबंध में अन्य महत्वपूर्ण बिन्दु निम्न है–

एक सहायक कम्पनी उसकी सूत्रधारी कम्पनी में सदस्य नही बन सकती है। क्योंकि उसे उसकी सूत्रधारी कम्पनी के अंशों के क्रय की अनुमति नही होती है। (धारा 42)

4. **दिवालिया** : दिवालिया वह व्यक्ति है जिसे न्यायालय द्वारा अपने ऋण चुकाने में असमर्थ घोषित कर दिया गया है। यदि कम्पनी का कोई सदस्य दिवालिया घोषित हो गया है, तो वह तब तक कम्पनी का सदस्य रहता है जब तक कि उसका नाम कम्पनी में सदस्यों के रजिस्टर में लिखा होता है। उसके अंशों के लाभाँश सरकारी प्रतिनिधि या रिसीवर या Receiver के पास जमा हो जाते हैं। वह दिवालिया होने की स्थिति में किसी अन्य कम्पनी में सदस्य नही रह सकता है।
5. **विदेशी व्यक्ति** : भारत में पंजीकृत कम्पनी में विदेशी व्यक्ति सदस्य बन सकता है। इसके लिये उसे भारतीय रिजर्व बैंक (RBI) की अनुमति प्राप्त करना अनिवार्य है। परन्तु यदि वह विदेशी शत्रु हो जाता है तो सदस्यों के रूप में उसके अधिकार निलंबित हो जाते हैं।
6. **न्यासी** : न्यासी वह व्यक्ति है जो किसी अन्य व्यक्ति के लाभ के लिये अंशों को धारित करता है। एक न्यासी अपने नाम से सदस्य बन सकता है परन्तु अन्य के न्यासी के रूप में सदस्य नहीं बन सकता है। ऐसा इसलिये है क्योंकि कम्पनी के रजिस्टर में उसका नाम तो दर्ज होगा, परन्तु कम्पनी इस तथ्य को नही दर्ज करेगी कि अंशों को किसके हित में लिया गया है। इसलिये न्यासी अपनी व्यक्तिगत क्षमता में सदस्य होगा तथा अंशों के अदत्त याचना के भुगतान के लिये दायी होगा। (धारा 153)
7. **संयुक्त अंशधारी** : 'संयुक्त अंश धारी' वे व्यक्ति हैं जो कम्पनी के अंशों को संयुक्त नाम से धारित करते हैं। संयुक्त अंशधारी के सम्बंध में विधिक प्रावधान निम्न है–

   (i) निजी कम्पनी के सदस्यों की संख्या की गणना में संयुक्त अंशधारियों को एक सदस्य गिना जाता है।

   (ii) अधिकतम तीन व्यक्ति ही संयुक्त अंशधारी हो सकते हैं।

   (iii) असाधारण सामान्य सभा से संबंधित नोटिस या परिपत्र पर संयुक्त अंशधारियों में से एक का हस्ताक्षर पर्याप्त होता है। (धारा 169)

   (iv) कम्पनी, संयुक्त अंशधारियों को एक से अधिक अंश प्रमाण पत्र देने के लिये बाध्य नही है।

   (v) संयुक्त अंशधारियों में से कम्पनी उस व्यक्ति को लाभांश देगी जिसका नाम सदस्यों के रजिस्टर में पहले (संयुक्त अंशधारियों में से) लिखा हो। धारा 205(5)(क)

(vi) संयुक्त अंशधारियों द्वारा किया गया अंशों का हस्तान्तरण तभी प्रभावी होगा जब उसे सभी अंशधारियों द्वारा संयुक्त रूप से किया गया हो।

8. **श्रम संघ** : श्रम संघ अधिनियम के अन्तर्गत पंजीकृत श्रम संघ कम्पनी का सदस्य हो सकता है। इसलिये श्रम संघ कम्पनी के अंशों को अपने से धारित कर सकता है।

11.3 सदस्यता प्राप्त करने की विधियाँ

एक व्यक्ति निम्न में से किसी एक तरीके से कम्पनी में सदस्य हो सकता है–

1. **पार्षद सीमानियम पर हस्ताक्षर द्वारा–**

1. व्यक्ति द्वारा पार्षद सीमा नियम पर हस्ताक्षर करने को कम्पनी के सदस्य बनने की सहमति मानी जाती है। कम्पनी के पंजीकरण पर उनके नाम सदस्यों के रजिस्टर में सदस्य के रूप में चढ़ा दिये जाते हैं (धारा 41)। यहाँ ध्यातव्य है कि व्यक्ति जिसने पार्षद सीमा नियम पर हस्ताक्षर किया है, वह कम्पनी के पंजीकृत होते ही कम्पनी का सदस्य बन जाता है, चाहे उसका नाम सदस्यों के रजिस्टर में न चढ़ा हो।

2. **सदस्य बनने के लिखित सहमति** : व्यक्ति जिसने कम्पनी का सदस्य बनने की लिखित सहमति दी है तथा जिसका नाम सदस्यों के रजिस्टर में चढ़ा है वह कम्पनी का सदस्य बन जाता है। (धारा 41(2) पर नोट करने योग्य है कि व्यक्ति की कम्पनी का सदस्य बनने के लिये लिखित सहमति लिखित होनी चाहिये। व्यक्ति केवल मौखिक समझौते या अपने कार्य द्वारा कम्पनी का सदस्य नही बन सकता है।

उच्चतम न्यायालय के अनुसार किसी व्यक्ति (पार्षद सीमा नियम पर हस्ताक्षर के अतिरिक्त) को सदस्य बनने के लिये निम्न दो शर्तों को पूर्ण एवं संतुष्ट करना आवश्यक है–

(क) सदस्य बनने के लिए लिखित समझौता हुआ है।

(ख) आवेदक का नाम सदस्यों के रजिस्टर में चढ़ा हो।

इसलिये कोई व्यक्ति, कम्पनी के अंशों को लेने के लिये सामान्य रूप से आवेदन करके सदस्य नही बन सकता है।

कुछ मामलों में जब कम्पनी किसी व्यक्ति को अंश प्रमाण पत्र निर्गमित करती है तथा उसका नाम सदस्यों के रजिस्टर में चढ़ाना भूल जाती है तो ऐसा व्यक्ति कम्पनी का सदस्य माना जायेगा तथा उसे सदस्यों के सभी अधिकार प्राप्त होंगे।

जहाँ तक तथ्य का विषय है, सदस्यों के रजिस्टर में अंशधारियों का नाम चढ़ाना कम्पनी का कर्तव्य है। इसलिये कम्पनी, सदस्यों के रजिस्टर में अंशधारी का नाम चढ़ाने में भूल होने का लाभ नही ले सकती है। किसी व्यक्ति की कम्पनी का सदस्य बनने की लिखित सहमति निम्न परिस्थितियों में मानी जायेगीः–

(क) अंशों के आवेदन तथा आवंटन द्वारा

(ख) उसके नाम से अंशों का हस्तान्तरण द्वारा

(ग) उसके नाम से अंशों का पारेषण

नोटः कम्पनी का सदस्य बनने के लिये व्यक्ति को लिखित सहमति देना अनिवार्य है। कम्पनी (संशोधन) अधिनियम 1960 की धारा 41(2) 'लिखित' शब्द जोड़ा गया। इसका उद्‌देश्य उन अंशदायी के दायित्वों में अनियमित वृद्धि को रोकना था जिन्होंने कभी भी अंशों के लिये आवेदन नही किया था।

3. **अंशों के आवेदन तथा आवंटन द्वारा** : एक व्यक्ति जिसने कुछ अंशों के लिये आवेदन किया है, उसको अंशों का आवंटन होते ही कम्पनी का सदस्य बन जाता है तथा उसका नाम सदस्यों के रजिस्टर में यह जाता है। अंशों को लेने का आवेदन एक प्रस्ताव है तथा कम्पनी द्वारा अंशों का आवंटन, प्रस्ताव भी सहमति है। एक वैध आवंटन, द्वारा कम्पनी तथा आवेदक के मध्य बाध्यकारी संविदा उत्पन्न होता है तथा आवेदक का नाम सदस्यों के रजिस्टर में चढ़ा दिया जाता है। ऐसे पंजीकरण पर आवेदक कम्पनी का सदस्य बन जाता है। अंशों के आवंटन तथा अंशधारी का नाम सदस्यों के रजिस्टर में चढ़ते ही वह कम्पनी का सदस्य बन जाता है, चाहे उस व्यक्ति ने अंश प्रमाण पत्र प्राप्त किया हो या नही। (हरदीलिया उन्मेट से लिमिटेड बनाम रेनू जैन, (1988) 92, कम्पनी 841 (राज)।

   अंशों के लये आवेदन निरपेक्ष अर्थात शर्त रहित होना चाहिये। यदि वह निरपेक्ष है तो अंशों का आवंटन तथा उसकी नोटिस वैध संविदा का निर्माण करती है। यदि उसमें शर्त हे तो अंशों का आवंटन, आवेदन का शर्तों के अनुसार होना चाहिये। यदि आवंटन, आवेदन की शर्तों के अनुसार नही है तो वहाँ कम्पनी तथा आवेदन के मध्य वैध संविदा नही होगा।

4. **अंशों के हस्तान्तरण द्वारा** : हम यह जानते हैं कम्पनी के अंशों का स्वतंत्र हस्तान्तरण होता है। एक सदस्य, किसी अन्य व्यक्ति को अपने अंशों का हस्तान्तरण कर सकता है। हस्तान्तरण तथा हस्तान्तरिती द्वारा हस्ताक्षरित प्रपत्र के द्वारा अंशों का हस्तान्तरण होता है तथा कम्पनी में पंजीकरण के लिये उसको फाइल किया जाता है। अंशों के हस्तान्तरण का पंजीकरण होते ही हस्तान्तरिती कम्पनी का सदस्य बन जाता है। अतः एक व्यक्ति किसी वर्तमान सदस्य के अंश क्रय करके सदस्य बन सकता है तथा अंशों का हस्तान्तरण का पंजीकरण अपने नाम करा सकता है। वैध हस्तान्तरण में हस्तान्तरिती का नाम सदस्यों के रजिस्टर में चढ़ जाता है।

5. **अंशों के पारेषण द्वारा** : हम यह जानते हैं कि अंशों का पारेषण में अंशों का हस्तान्तरण विधि द्वारा होता है जैसे अंशधारी की मृत्यु या दीवालिया होना। अंशधारी की मृत्यु या दिवालिया होने पर, उसके विधिक प्रतिनिधि (मृत्यु की दशा में) या सरकारी प्रतिनिधि (दिवालिया की दशा में), मृत या दिवालिया अंशधारी के अंशों को प्राप्त करने अधिकारी होते हें। वे उन अंशों का पंजीकरण अपने नाम कराने के लिये कम्पनी में आवेदन कर सकते हैं। वैध पंजीकरण होने पर उनका नाम सदस्यों के रजिस्टर में चढ़ जाता है तथा वे कम्पनी के सदस्य बन जाते हैं।

6. **योग्यता अंशों के लेने की सहमति द्वारा** : लोक कम्पनी में व्यक्ति, निदेशक तभी होता है जब वह योग्यता अंशों को क्रय कर लेता है। जब निदेशक योग्यता अंशों के लेने तथा उनका भुगतान करने के लिये प्रपत्र हस्ताक्षर करके उसे रजिस्ट्रार के यहाँ दाखिल करता है तो वह पार्षद सीमा नियम के हस्ताक्षरकर्ता की स्थिति में आ जाता है। (धारा 266 (2) कम्पनी का पंजीकरण होने पर वह स्वतः सदस्य बन जाता है।

11.4 सदस्यता की समाप्ति

किसी व्यक्ति की सदस्यता तब समाप्त होती है जब उसका नाम सदस्यों के रजिस्टर से काट दिया जाा है। उसका नाम कटते ही कम्पनी से उसकी सदस्यता समाप्त हो जाती है। एक व्यक्ति की निम्न तरीकों से सदस्यता समाप्त होती है।

1. जब वह अंशों का हस्तान्तरण करता है।
2. जब उसके अंशों का कम्पनी द्वारा विधि पूर्ण हरण किया जाता है।
3. जब वह अपने अंशों का कम्पनी में वैध समर्पण करता है।
4. जब अंशों पर ग्रहणाधिकार होने के कारण कम्पनी उसके अंशों का विक्रय कर देती है।
5. जब उसकी मृत्यु हो जाती है तथा अंशों का पंजीकरण उसके विधिक प्रतिनिधि के नाम हो जाता है।
6. जब वह दिवालिया घोषित हो जाता है तथा उसके अंशों का हस्तान्तरण समापन द्वारा कर दिया जाता है तथा हस्तान्तरिती सदस्य के रूप में पंजीकृत हो जाता है।
7. जब पूर्णदत्त अंशों के बदले में उसे अंश अधिपत्र निर्गमित किये जाते हैं।
8. जब वह अनियमित आवंटन के आधार पर या प्रविवरण में गलत कथन के आधार पर अंशों को लेने की संविदा को तोड़ देता है।
9. जब वह विमोचनशील पूर्वाधिकार अंश धारित करता है तथा ऐसे अंशों का विमोचन हो गया है।
10. जब न्यायालय की डिक्री के अनुपालन में उसके अंशों का विक्रय कर दिया गया है।
11. जब कम्पनी का समापन हो गया है।
12. जब कम्पनी द्वारा उसके अंशों को बिना उसकी सहमति से ले लिया गया है। यह कम्पनी का अधिकार होता है। इस अधिकार का प्रयोग कम्पनी तभी कर सकती है जब कम्पनी के पार्षद अन्तर्नियम में इस शक्ति का उल्लेख हो। इस शक्ति का प्रयोग कम्पनी के हित में तथा सदभावर्पूक होना चाहिये। कम्पनी द्वारा इस अधिकार का प्रयोग उन परिस्थितियों में किया जाता है जब सदस्य कम्पनी के हितों के विरूद्ध कार्य करते हैं जैसे सदस्य का कम्पनी से प्रतिस्पर्धा करना।

11.5 सदस्यता का निष्कासन

जब कोई व्यक्ति कम्पनी में एक बार सदस्य के साथ में पंजीकृत हो जाता है तो वह कम्पनी अधिनियम के अन्तर्गत विभिन्न अधिकार प्राप्त करता है। कम्पनी उसे

सदस्यता से निलंबित करके इन अधिकारों से पृथक नही कर सकती है। सदस्य का (निष्कासन) संविदा का उल्लंघन है तथा यह विधि न्याय के प्राकृतिक सिद्धान्तों के विपरीत भी है।

कम्पनी मामलों के मंत्रालय ने स्पष्ट किया कि सदस्य के निष्कासन का पार्षद अन्तर्नियम में प्रावधान कम्पनी की शक्ति से परे तथा अवैध है। इसका कारण लोक कम्पनी में सदस्य के अधिकार से संबंधित विभिन्न प्रावधान है जो सदस्य के निष्कासन के विरूद्ध है। सदस्य के निष्कासन का पार्षद अन्तर्नियम में प्रावधान व्यर्थ है क्योंकि वह कम्पनी अधिनियम का उल्लंघन करता है।

11.6 सदस्यों के अधिकार

कम्पनी अधिनियम ने कम्पनी के सदस्यों को काफी संख्या में अधिकार दिये हैं जो निम्न हैः–

1. भावी अंशों के निर्गमन में अंश प्राप्त करने की प्राथमिकता का अधिकार।
2. अंशों के हस्तान्तरण का अधिकार।
3. अंश प्रमाण पत्र प्राप्त करने का अधिकार।
4. सदस्यों के रजिस्टर में संशोधन मे लिये ट्रिब्युनल मे आवेदन करने का अधिकार।
5. यदि कम्पनी का निदेशक मण्डल वार्षिक साधारण सभा बुलाने में असफल रहता है तो कम्पनी में वार्षिक साधारण सभा को कराने के लिये केन्द्र सरकार को आवेदन करने अधिकार।
6. कम्पनी में असाधारण सभा को बुलाने के लिये केन्द्र सरकार को आवेदन करने का अधिकार, यदि ऐसी सभा को बुलाना कम्पनी के लिये अव्यवहारिक है। (धारा 186)
7. वार्षिक साधारण सभा में अंकेक्षकों तथा निदेशकों की नियुक्तियों में भाग लेने का अधिकार।
8. कम्पनी के मामलों में जॉच के लिये आदेश हेतु केन्द्र सरकार को आवेदन करने का अधिकार।
9. अन्याय पूर्ण तथा कुप्रबंध के मामलों से राहत के लिये ट्रिब्यूनल में वाद करने का अधिकार (धारा 397, 398)
10. कम्पनी के समापन के लिये ट्रिब्यूनल में वाद प्रस्तुत करने का अधिकार।
11. कम्पनी के समापन पर उसकी सम्पत्तियों (लेनदारों का भुगतान के बाद आधिक्य) में हिस्सा लेने का अधिकार (धारा 475, 511)
12. कम्पनी को पार्षद सीमा नियम तथा पार्षद अन्तर्नियम में संशोधन का अधिकार।
13. पार्षद सीमा नियम, पार्षद अन्तर्नियम, आर्थिक चिट्ठा, लाभ–हानि खाता, प्रस्ताव, साधारण सभा की कार्यवाहियों के मिनट्स आदि प्रपत्रों की प्रति प्राप्त करने का अधिकार।

14. सदस्यों के रजिस्टर, ऋणपत्रधारियों के रजिस्टर, सभी वार्षिक रिटर्न की प्रतियाँ, प्रभारी के रजिस्टर, वार्षिक सभाओं की मिनट बुक के निरीक्षण का अधिकार।
15. बोनस अंश तथा लाभॉश प्राप्त करने का अधिकार।
16. सामान्य सभा की नोटिस प्राप्त करने का अधिकार।
17. साधारण सभाओं में उपस्थित रहने तथा मतदान का अधिकार।
18. अंशों के क्रय के संविदा को खुद करने तथा क्षतिपूर्ति की मॉग करने का अधिकार। इस अधिकार का प्रयोग तभी किया जाता है जब प्रविवरण में मात्र कथन के आधार पर अंशों का आवंटन किया गया है।
19. कम्पनी के प्रबंध में अवॉछित सदस्यों के विरूद्ध केन्द्र सरकार को शिकायत करने तथा उन्हें हटाने का आवेदन करने का अधिकार कम्पनी के सदस्यों का उपरोक्त अधिकार कार्यशैली के निरीक्षण तथा उत्तम नियंत्रण प्रदान करते हैं।

11.7 सदस्यों के दायित्व

कम्पनी के सदस्यों को दायित्व, कमपनी में स्वभाव पर निर्भर करता है। इसका वर्णन निम्न हैः–

(क) **असीमित दायित्व वाली कम्पनी** : कम्पनी के असीमित दायित्व के साथ पंजीकरण होने की दशा में प्रत्येक सदस्य अपनी सदस्यता के दौरान कंपनी द्वारा लियेगये सभी ऋणों के लिये दायी होगा।

(ख) **गारण्टी द्वारा सीमित कम्पनी** : गारण्टी द्वारा सीमित कंपनी की दशा में प्रत्येक सदस्य, पार्षद सीमा नियम के दायित्व वाक्य के उसके द्वारा ली गयी गारण्टी राशि, के लिये दायी होगा।

(ग) **अंशों द्वारा सीमित कंपनी** : अंशों द्वारा सीमित कम्पनी की दशा में, प्रत्येक सदस्य, उसके द्वारा धारित अंशों के सम–मूल्य के लिये दायी होगा। यदि उसने कुछ भाग का भुगतान किया है तो उसका दायित्व अंशों की अदत्त राशि के लिये होगा। यदि उसने पूर्ण भुगतान किया है तो उसका दायित्व शून्य होगा।

11.8 सदस्यों के रजिस्टर

प्रत्येक कम्पनी सदस्यों का रजिस्टर रखने के लिये बाध्य है। इस रजिस्टर में निम्न विवरणों का उल्लेख होगाः–

1. प्रत्येक सदस्य का नाम, पता तथा पेशा (यदि हो)।
2. सदस्यों के रजिस्टर में प्रत्येक व्यक्ति के प्रवेश (सदस्यता शुरू होने) की तिथि
3. किसी व्यक्ति की सदस्यता पर प्रतिबंध की तिथि
4. अंशों पूँजी वाली कम्पनी की दशा में प्रत्येक सदस्य द्वारा अंशों की संख्या (क्रम संख्या के साथ)। प्रत्येक अंश पर चुकायी गयी या चुकाये जाने वाली राशि का भी उल्लेख।
5. कम्पनी द्वारा अपने अंशों को स्टाक में परिवव्रन तथा परिवर्तन की नोटिस रजिस्ट्रार को देने का दशा में प्रत्येक सदस्य द्वारा धारित स्टाक की राशि को रजिस्टर में दिखाया जायो।

सदस्यों का रजिस्टर उसमें लिखे विषय सूची (Contents) के सही होने का प्रथम दृष्टया प्रमाण है जो कम्पनी अधिनियम द्वारा अधिकृत होते हैं। (धारा 164) 'प्रथम दृष्टया प्रमाण से आशय कोर्ट ऑफ लॉ यह मान लेगा कि रजिस्टर में लिखी गयी बातें (Content) सत्य तथा सही है तथा उनमें कोई संदेह नही है। इसलिये यदि किसी व्यक्ति का नाम रजिस्टर में तथा उसे इसके बारे में जानकारी है, तो वह कम्पनीका सदस्य माना जायेगा। उसका यह कर्तव्य है कि वह दिखाये क वह सदस्य नही है। इसके अतिरिकत वह कम्पनी लॉ बोर्ड में अपने नाम को हटाने के लिये आवेदन अतिशीघ्र करेगा, अन्यथा वह सदस्य के रूप में दायी होगा।

सदस्यों के रजिस्टर को कम्पनी पंजीकृत कार्यालय में रखा जायेगा। (धारा 163 (1)) डिपाजिटरी द्वारा रखे जाने वाले लाभकारी स्वामियों में रजिस्टर तथा अनुक्रमणिका की सदस्यों का रजिस्टर माना जायेगा (डिपाजिटरी अधिनियम 1996 में प्रतिस्थापित धारा 152ए)

सदस्यों के रजिस्टर में सुधार : हम यह चर्चा कर चुके हैं कि सदस्यों का रजिस्टर उसमें उल्लिखित बातों के सही होने का प्रथम दृष्टया प्रमाण है। इसलिये यदि व्यक्ति का नाम रजिस्टर में है तो वह सदस्य माना जायेगा, भले ही वह न हो। यदि व्यक्ति का नाम सदस्यों के रजिस्टर में नही है, तो वह तकनीकी रूप से वह सदस्य नही है, भले तथ्यतः वह सदस्य हो। यदि कम्पनी का रजिस्टर सही नही है तो उसका परिणाम अन्याय होगा। यह ध्यान देने योग्य है कि कम्पनी स्वयं रजिस्टर की त्रुटि दूर नही करती है। रजिस्टर में सुधार का आदेश देने की ट्रिब्यूनल के पास होती है। कम्पनी अधिनियम 1956 की धारा 111 तथा 111ए में सदस्यों के रजिस्टर में सुधार के विधिक प्रावधानों का उल्लेख है।

यह महत्वपूर्ण तथ्य है कि डिपाजिटरी अधिनियम 1996 की धारा 111 में संशोधन के पूर्व सदस्यों के रजिस्टर में सुधार से संबंधित विधिक प्रावधान लोक कम्पनी तथा निजी कंपनी में समान थे। संशोधन के द्वारा धारा 111 में नयी उपधारा 14 जोड़ी गयी। इस संशोधन के परिणामस्वरूप धारा 111 केवल निजी कम्पनियों तथा मानित लोक कम्पनी पर लागू होगी। डिपाजिटरी अधिनियम 1996 में संशोधन डिपाजिटरी संबंध कानून (संशोधन) अधिनियम 1997 द्वारा नयी 111ए जोड़ी गयी जो लोक कम्पनी के सदस्यों के रजिस्टर में सुधार पर लागू होती है। उस तिथि से लोक कम्पनी तथ निजी कम्पनी के सदस्यों के रजिस्टर में सुधार हेतु अलग–अलग प्रावधान है तथा आगे अलग–अलग, उसकी विवेचना की गयी है–

1. **निजी कंपनियों तथा मानित लोक कंपनियों के सदस्यों के रजिस्टर में सुधार :** सदस्यों के रजिस्टर में सुधार का आदेश देने की शक्ति ट्रिब्यूनल में निहित है। रजिस्टर में सुधार के लिये आवेदन कम्पनी स्वयं, कम्पनी का सदस्य या पीड़ित पक्षकार द्वारा ट्रिब्यूनल को दिया जाता है। निम्न आधारों पर सुधार के लिये आवेदन किया जा सकता है– (धारा 111(4)

(i) जहाँ किसी व्यक्ति का नाम रजिस्टर में बिना किसी उचित कारण के चढ़ा दिया गया है।

(ii) जहाँ किसी सदस्य का नाम बिना उचित कारण के रजिस्टर से काट दिया गया हो।

(iii) जहाँ किसी व्यक्ति ने कंपनी का सदस्य बनाने की सभी विधिक औपचारिकतायें पूर्ण कर ली है, परन्तु रजिस्टर में उसका नाम नही चढ़ा है या इसमें विलय किया जा रहा है।

(iv) जहाँ किसी व्यक्ति को सदस्यता से विधितः प्रतिबंधित करने के बाद उसका नाम रजिस्टर से नही काटा गया है।

(v) जहॉ कम्पनी अंशों का हस्तान्तरण करने से मना कर देती है। यह प्रावधान कम्पनी (संशोधन) अधिनियम 1988 द्वारा जोड़ा गया था।

रजिस्टर में सुधार का आदेश देने की शक्ति ट्रिब्युनल का अधिकार है। अतः वह आवेदन निरस्त कर सकता है या सुधार आदेश देसकता है। (धारा 111(5) जब सुधार का दिया जाता है, तो वह त्रुटि धारित होने की पिछली तिथि से लागू होता है।

रजिस्टर में सुधार की उपरोक्त राहत एक संक्षिप्त राहत है। यह राहत वहॉ उपलब्ध होती है जहाँ कोई कठिन प्रश्न नही शामिल होता है। इस प्रावधान में ट्रिब्युनल किसी व्यक्ति के स्वत्व तथा सुधार के आवेदन से संबंधित आवश्यक प्रश्नों का निर्णय करता है। (धारा 111(7)) निम्न मामलों में ट्रिबुनल सदस्यों के रजिस्टर में सुधार का आदेश कर सकता हैः–

क. जहाँ व्यक्ति को अंशों का आंवटन अनियमित या अवैध हो।

ख. जहाँ जाली हस्तान्तरण का पंजीकरण कर लिया गया है तथा अंशों के वास्तविक स्वामी का नाम हटा दिया गया है।

ग. जहाँ हस्तान्तरण के पंजीकरण करने से कम्पनी द्वारा अनुचित तरीके से मना किया गया हो।

घ. जहॉ अंशों का अनुचित ढंग से हरण किया गया हो।

ड. जहाँ अंशों का हस्तानतरण अनुचित ढंग से हुआ हो

च. जहाँ अंशोंका आवेदन ार्तपूर्ण था तथा कम्पनी ने बिना शर्त पूरा किये अंशों का आवंटन कर दिया हो।

छ. जहाँ अंशों का हस्तान्तरण दायित्व से बचने के लिये किया गया हो तथा ऐसा हस्तान्तरण पंजीकृत हो गया है।

नोट– धारा 111(4) में ट्रिब्यूनल में, रजिस्टर में सुधार हेतु आवेदन करने की कोई समय सीमा नही दी गयी है। यहाँ मात्र एक औपचारिकता है कि सदस्यों के रजिस्टर में सुधार के लिए राहत लेने अनुचित विलंब नही होना चाहिये।

2. उपरोक्त प्रावधान सदस्यों के रजिस्टर में संशोधन से संबंधित है तथा ऋण पत्रों के रजिस्टर में संशोधन पर भी लागू होते हैं। (धारा 111 (a)

3. लोक कम्पनी के सदस्यों के रजिस्टर में सुधारा (धारा 111–ए):– धारा 111 में केवल निजी कम्पनियों के सदस्यों के रजिस्टर में सुधार के लिये लागू होती है, लोक कम्पनियों पर नही। इसे ध्यान में रखते हुये डिपाजिटरी अधिनियम 1996

में डिपाजिटरी (संशोधन) अधिनियम 1997 के द्वारा नयी उप–धारा 111–ए जोड़ी गयी जो लोक कम्पनियों के सदस्यों के रजिस्टर में संशोधन पर लागू होती है। इस धारा के अनुसार लोक कम्पनी के अंश तथा ऋण पत्र स्वतंत्र रूप से हस्तान्तरणीय होते हैं तथा यह कुछ परिस्थितियों में सदस्यों के रजिस्टर में सुधार से संबंधित प्रावधान भी शामिल करती है।

लोक कम्पनी की दशा में भी सदस्यों के रजिस्टर में सुधार का आदेश देने की शक्ति ट्रिब्यूनल में निहित होती है। ट्रिब्यूनल में, सदस्यों के रजिस्टर में सुधार के लये आवेदन कम्पनी द्वारा या प्रतिभागी द्वारा या डिपाजिटरी द्वारा या सेवी (SEBI) द्वारा किया जा सकता है। निम्न आधारों पर सुधार के लिए आवेदन किया जा सकता है (धारा 111ए (3)

क. जहाँ अंशों का हस्तान्तरण, भारतीय प्रतिभूति एवं विनिमय बोर्ड अधिनियम 1992 के प्रावधान या किसी अन्य नियम का उल्लंघन करके किया गया है।

ख. जहाँ बीमार औद्योगिक कम्पनियाँ (विशेष प्रावधान) अधिनियम 1985 के प्रावधानों का उल्लंघन करके अंशों का हस्तान्तरण किया गया हो।

ग. जहाँ उस समय प्रचलित किसी अन्य नियम के प्रावधानों का उल्लंघन करके अंशों का हस्तान्तरण किया गया हो।

इससे स्पष्ट होता है कि अंशों के अवैधानिक हस्तान्तरण में सुधार के लिए ट्रिब्युनल खुला है। आवेदन की प्राप्ति के बाद ट्रिब्युनल जाँच करता है तथा इसके बाद कम्पनी या डिपाजिटरी को अपना रजिस्टर या रिकार्ड में सुधार का निर्देश देता है। यहाँ उल्लेखनीय है कि अंशों के हस्तान्तरण में उपरोक्त नियमों के उल्लंघन होने पर ही ट्रिब्युनल की सदस्यों के रजिस्टर में सुधार का आदेश देने की शक्ति है। अतः ट्रिब्युनल की शक्तियाँ सीमित है तथा कपट, चोरी, अधिकारहीनता तथा प्रक्रिया आदि की जाँच तक विस्तृत नही है। (एस0पी0एल0 इण्टरनेशनल लि0 बनाम विजय रेमेडीज लि0 1988) 30 कारणी है एल0ए0 1113 सी0एल0बी0) लोक म्पनी के मामलों में ट्रिब्यूनल का क्षेत्राधिकार अंशों के हस्तान्तरण तक तथा विधिपूर्ण हस्तान्तरण को लागू करना एवं अवैध हस्तान्तरण को रोकने तक, सीमित है। (धारा 111ए) कोई अन्य मामला जो अंशों के हस्तान्तरण से पृथक है, तो वह न्यायालय का दीवानी मामला बनता है, ट्रिब्यूनल का नही। इसलिये अंशों के हस्तान्तरण के अतिरिक्त अन्य आधार पर सदस्यों के रजिस्टर में सुधार दिवानी न्यायालय का विषय है, ट्रिब्यूनल का नही।

नोट– सदस्यों के रजिस्टर में सुधार के लिये ट्रिब्यूनल में आवेदन, अंश के हस्तान्तरण प्रपत्र को कमपनी के सुपुर्द होने 2 माह के अन्दर, हो जाना चाहिये। डिपाजिटरी की दशा में, अंशों के हस्तान्तरण की तिथि के 2 माह के अन्दर आवेदन हो जाना चाहिये।

2. उपरोक्त प्रावधान सदस्यो में रजिस्टर में सुधार से संबंधित है तथा ऋणपत्रधारी के रजिस्टर में सुधार पर भी लागू होते हैं।

11.8.1 सदस्यों की अनुक्रमणिका

हम यह चर्चा कर चुके हैं कि प्रत्येक कम्पनी, सदस्यों का रजिस्टर बनाने के लिये बाध्य है। परन्तु जब कम्पनी में सदस्यों की संख्या 50 से अधिक होती है तो उसे सदस्यों के नाम की अनुक्रमणिका भी रखनी होती है। (धारा 151) कम्पनी या तो सदस्यों के नाम की पृथक अनुक्रमणिका (कार्ड इण्डेक्स में रूप में) बनाये या सदस्यों का रजिस्टर इस ढंग से रखे कि अनुक्रमणिका का निर्माण हो जाए। अनुक्रमणिका में किसी सदस्य से संबंधित पर्याप्त जानकारी होती है। सदस्यों के रजिस्टर में कोई भी परिवर्तन होने पर 14 दिन के अन्दर उसका लेखा अनुक्रमणिका (Index) में हो जाना चाहिये। (धारा 151)

नोट– 1. कम्पनी को अपने पंजीकृत कार्यालय में सदस्यों की अनुक्रमणिका रखनी चाहिये। (धारा 163 (1))

2. सदस्यों का रजिस्टर तथा अनुक्रमणिका एक लोक दस्तावेज है तथा ये प्रपत्र, सदस्यों तथा जनता के निरीक्षण के लिये खुले रहते हैं। धारा 163(2) से (6)

11.8.2 अनुक्रमणिका तथा रजिस्टर का निरीक्षण

सदस्यो का रजिस्टर तथा अनुक्रमणिका लोक दसतावेज है तथा जनता के निरीक्षण के लिये खुले होते हैं। रजिस्टर तथा अनुक्रमणिका को कार्यदिवसों में न्यूनतम 2 घंटा प्रतिदिन जनता के निरीक्षण हेतु उपलब्ध होना चाहिये। सदस्यों के निरीक्षण हेतु उपलब्ध कराने का उद्देश्य सदस्यता के बारे में जानना होता है।

रजिस्टर तथा अनुक्रमणिका (Index) के निरीक्षण के संबंध में विधिक प्रावधानों का उल्लेख धारा 163(2) से (6) तक किया गया है जो संक्षेप में निम्न है–

1. प्रत्येक सदस्य को बिना शुल्क जमा किये निरीक्षण का अधिकार है।
2. बाह्य व्यक्ति (सदस्य के अतिरिक्त व्यक्ति) को प्रत्येक निरीक्षण हेतु केन्द्र सरकार द्वारा निर्धारित शुल्क जमाकर निरीक्षण का अधिकार है।
3. निरीक्षण के अधिकार में रजिस्टर या अनुक्रमणिका से सारांश लेने तथा उसकी प्रति प्राप्त करना भी शामिल है। ऐसी प्रति केन्द्र सरकार द्वारा निर्धारित शुल्क जमा करने पर प्राप्त की जा सकती है।
4. यदि कम्पनी द्वारा निरीक्षण के अधिकार के प्रावधानों का उल्लंघन किया जाता है को कम्पनी तथा प्रत्येक दोषी अधिकारी 500/– प्रतिदिन (जब तक उल्लंघन जारी रहता है) से दण्डनीय होंगे।
5. कम्पनी में तुरंत निरीक्षण कराने तथा तुरंत प्रतियां देने का आदेश ट्रिब्यूनल कर सकता है। कम्पनी (द्वितीय संशोधन) अधिनियम, 2002 के पूर्व यह शक्ति कम्पनी लॉ बोर्ड में निहित थी।

नोट– 1. उपरोक्त प्रावधान ऋण पत्र धारियों के रजिस्टर तथा अनुक्रमणिका के निरीक्षण में भी लागू होंगे। अतः ऋणपत्रधारी को रजिस्टर तथा अनुक्रमणिका (Index) के निरीक्षण का समान अधिकार है।

2. कम्पनी वर्ष में 45 दिन सदस्यों या ऋण पत्रधारियों के रजिस्टर को बन्द रख सकती है, परन्तु एक बार में अधिकतम 30 दिन ही बन्द कर सकती है। ऐसी बंदी के कम से कम 7 दिन पूर्व बंदी की नोटिस देना आवश्यक होता है।

ऐसी नोटिस विज्ञापन के रूप में, कमपनी में पंजीकृत कार्यालय वाले जिले के समाचार पत्र प्रकाशित होना चाहिये। (धारा 154)

11.9 सारांश

अंत में हम कह सकते हैं कि कम्पनी का सदस्य बनने के लिये व्यक्ति का नाम, सदस्य के रजिस्टर में दर्ज होना चाहिये। सदस्य के पास अत्यधिक अधिकार होते हैं जो कमपनी में उसका हित सुरक्षित रखने में मददगार होते हैं।

11.10 शब्दावली

- **सदस्यता–** कम्पनी के पार्षद सीमा नियम पर हसताक्षर करने वाले व्यक्ति तथा जिनका नाम सदस्यों के रजिस्टर में दर्ज होता है कम्पनी के सदस्य होते हैं।
- **सदस्यों का रजिस्टर** : प्रत्येक कम्पनी को सदस्यों का रजिस्टर रखना आवश्यक है जिसमें सदस्य का नाम, पता, पेशा, प्रवेश, परित्याग की तिथियों का उल्लेख होता है।
- **सदस्यो की अनुक्रमणिका** : ऐसी कम्पनी जहां सदस्यों की संख्या 50 से अधिक होती है वहाँ सदस्यों की अनुक्रमणिका बनाना अनिवार्य है।

11.11 बोध प्रश्न

खाली स्थान भरो–

1. कम्पनी का सदस्य वह व्यक्ति होता है जो कम्पनी का .... में हस्ताक्षर करता है।
2. अंश अधिपत्र को रखने वाला व्यक्ति अंशधारी होगा परन्तु ....नही होगा।
3. अवयस्क से किये गये सभी संविदा पूर्णतः .... होते हैं।
4. कम्पनी का सदस्य बनने के लिये व्यक्ति को लिखित सहमति देना................है।

11.12 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. पार्षद सीमानियम, 2. सदस्य, 3. व्यर्थ, 4. अनिवार्य ।

11.13 स्वपरख प्रश्न

1. कम्पनी के सदस्यों से आपका क्या आशय है? एक व्यक्ति कम्पनी का सदस्य कैसे बन सकता है?
2. सदस्यों के रजिस्टर से आपका क्या आशय है? इसे कैसे तैयार किया जाता है?
3. कम्पनी में एक सदस्य के रूप में एक नाबालिग की क्षमता को परिभाषित कीजिए।

11.14 सन्दर्भ पुस्तकें

1. गोगना पी0पी0एस0 (2009) ए0 टेक्सट बुक ऑन कम्पनी ला, नई दिल्ली, एस0 चन्द एण्ड कम्पनी।
2. कपूर जी0के0 एण्ड गुप्ता, सी0बी0 (2008), लॉ एथिक्स एण्ड कम्यूनिकेशन, नई दिल्ली, सुल्तान चन्द्र एण्ड सन्स।
3. सिंह अवतार, (2004) कम्पनी लॉ, लखनऊ, ईस्टर्न बुक कम्पनी।

इकाई 12 निदेशक

इकाई की रूपरेखा

12.1 प्रस्तावना
12.2 निदेशकों की विधिक स्थिति
12.3 निदेशकों की संख्या
12.4 निदेशकों की योग्यता
12.5 निदेशकों की अयोग्यता
12.6 निदेशकों की नियुक्ति
12.7 निदेशकत्व की संख्या
12.8 निदेशक द्वारा कार्यालय से अवकाश
12.9 निदेशकों को हटाना
12.10 निदेशकों की शक्ति
12.11 निदेशकों के कर्तव्य
12.12 निदेशकों के दायित्व
12.13 प्रबंध निदेशक
12.14 मण्डल की सभा
12.15 साराँश
12.16 शब्दावली
12.17 बोध प्रश्न
12.18 बोध प्रश्नों के उत्तर
12.19 स्वपरख प्रश्न
12.20 संदर्भ पुस्तकें

उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप इस योग्य हो सकेंगे कि –

- निदेशक की विधिक स्थिति का वर्णन कर सकें।
- निदेशकों की योग्यता तथा अयोग्यता का विवेचन कर सकें।
- प्रबंध निदेशक की परिभाषा की व्याख्या कर सकें।

12.1 प्रस्तावना

कम्पनी अधिनियम 1956 के अनुसार कम्पनी के प्रबंध के लिये निदेशक मण्डल होना आवश्यक है। अन्य प्रबंधकीय अधिकारी जैसे प्रबंध निदेशक या प्रबंधक वैकल्पिक है। निदेशक मण्डल स्वयं या प्रबंधक या प्रबंध निदेशक की सहायता से प्रबंध करता है। धारा 2(13) के अनुसार कोई भी व्यक्ति जो निदेशक की स्थिति में है निदेशक कहलाता है। निदेशकों के समूह को निदेशक मण्डल कहते हैं। [252(3)] क्योंकि परिभाषा में निदेशक के पद धारक को निदेशक परिभाषित किया गया है, इसलिये आइये निदेशक की विधिक स्थिति का अध्ययन करते हैं।

12.2 निदेशकों की विधिक स्थिति

विधि में निदेशकों की स्थिति को परिभाषित नही किया गया है। अधिनियम की 2(30) में निदेशकों को कम्पनी के अधिकारियों में सम्मिलित किया गया है। न्यायालयों के निर्णयों के आधार पर निदेशकों की कहीं–कहीं एजेण्ट, प्रबंधकीय साझेदार तथा न्यासी माना गया है

1. **एजेण्ट के रूप में :** निदेशकों को कम्पनी का एजेण्ट माना गया है क्योंकि कम्पनी स्वयं, व्यक्ति की तरह कार्य नही कर सकती है। वह निदेशकों के माध्यम से कार्य करती है, इसलिये वे कम्पनी में एजेण्ट होते हैं। कम्पनी मालिक की तरह कार्य करती है। ऐजेण्ट का कृत्य मालिक का कृत्य होता है। इसलिये निदेशक, कम्पनी को बाध्य कर सकते हैं। निदेशकों के दायित्व कम्पनी के दायित्व होते हैं। परन्तु एजेण्ट को व्यक्तिगत दायित्व से बचने के लिये व्यवसाय का संचालन पूर्ण सावधानी तथा परिश्रम से करना चाहिये। निदेशक भी कम्पनी के पार्षद सीमानियम तथा पार्षद अन्तर्नियम से बाध्य होते हैं। जब वे संविदा करते हैं तो एजेण्ट की तरह कम्पनी की तरफ से हस्ताक्षर करते हैं। निदेशक चुने जाते हैं तथा एजेण्ट की नियुक्ति होती है, चुने नही जाते हैं। संकीर्ण अर्थों में, निदेशक, कम्पनी के एजेण्ट नही होते हैं।

2. **प्रबंधकीय साझेदार के रूप में :** निदेशकों का वर्णन प्रबंधकीय साझेदार के रूप में किया गया है। कभी–कभी फर्म के सभी साझेदार प्रबंध नही कर सकते हैं, तो वे प्रबंध के लिये उनमें से एक को चुन लेते हैं। अतः निदेशकों का चुनाव अन्य अंशधारियों द्वारा होता है। वे अंशधारी भी होते हैं। निदेशक सभी उद्यमिता वाले कार्यों को करते हैं। जैसे– अंशो का आवंटन, याचना करना, अंश का हरण। परन्तु निदेशकों के पास फर्म में साझेदारों की तरह अन्य निदेशकों तथा अंशधारियों को बाध्य करने का अधिकार नही होता है, वे चक्रानुक्रम में अवकाश ग्रहण करते हैं, परन्तु साझेदार चक्रानुक्रम में अवकाश ग्रहण नही करते हैं। इसलिये पूर्ण अर्थों में वे प्रबंधकीय साझेदार या उद्यमी नहीं होते हैं।

3. **न्यासी के रूप में :** कई मामलों में निदेशक, कम्पनी के न्यासी की स्थिति में होते हैं। निदेशको की सभी शक्ति, न्यास की शक्ति होती है। वे अधिक धनार्जन के लिये दायी होते हैं जबकि न्यासी होने के आधार पर वे ऐसा नही कर सकते हैं। वे कम्पनी के हितों की रक्षा के लिय विश्वासाश्रित क्षमता में होते हैं। अंशधारियों के लिये व्यक्तिगत रूप से निदेशक न्यासी की स्थिति में नही होते हैं। न्यासी तृतीय पक्ष से अपने नाम से संविदा कर सकते हैं, परन्तु निदेशक नही कर सकते हैं।

अतः निदेशक, कम्पनी में एजेण्ट, प्रबंध साझेदार तथा न्यासी की स्थिति में होते हैं, परन्तु संकीर्ण अर्थों में उन्हें इन स्थितियाँ नही माना जा सकता हैं

12.3 निदेशकों की संख्या

प्रत्येक लोक कम्पनी में कम से कम 3 निदेशक तथा निजी कम्पनी में कम से कम दो निदेशक होने चाहिये। कम्पनी अधिनियम 1956 में निदेशकों की अधिकतम संख्या निर्धारित नही है, जबकि कम्पनी के पार्षद सीमा नियम तथा पार्षद अन्तर्नियम मण्डल के लिये न्यूनतम तथा अधिकतम निदेशक संख्या निर्धारित कर सकते हैं। सामान्य सभा में साधारण प्रस्ताव पारित कर निदेशक संख्या मे वृद्धि या कमी की जा

सकती है। (धारा 252, 258)। धारा 259 के अनुसार लोक कम्पनी की रक्षा में, पार्षद अन्तर्नियम द्वारा निर्धारित अधिकतम निदेशक संख्या से अधिक वृद्धि करने पर, केन्द्र सरकार, द्वारा अनुमोदित होना चाहिये, जहाँ निदेशकों की संख्या 12 से अधिक हो।

एक लोक कम्पनी (क) जिसके पास 5 करोड़ रूपये की प्रदत्त पूजी है तथा (ख) (1000) एक हजार या उससे अधिक छोटे अंशधारी है, में निदेशक का चुनाव केन्द्र सरकार द्वारा निर्धारित विधि के अनुसार ऐसे छोटे अंशधारी करेंगे। छोटे अंशधारी (Small Share Holder) से आशय ऐसे अंधधारी से है जिनके पास 20000 रू0 या इससे कम नाममात्र मूल्य (Nominal Value) के अंश हो। ऐसे निदेशक का कार्यकाल 3 वर्ष होता है तथा ये चक्रानुसार अवकाश ग्रहण नही करते हें।

12.4 निदेशकों का योग्यता

एक निदेशक को कम्पनी का अंशधारी होना आवश्यक नही है यदि अन्तर्नियम अनुमति देते हैं तो एक निदेशक को नियुक्ति की तिथि के 2 माह के अन्दर योग्यता अंश (यदि नही हो तो) ले लेना चाहिये। निदेशकों द्वारा योग्यता अंश धारित करने के बाद ही रजिस्ट्रार व्यापार प्रारम्भ करने का प्रमाण पत्र जारी करते हैं। तालिका 'अ' के अनुसार अंशों द्वारा सीमित कम्पनी के निदेशक के पास कम से कम एक अंश, योग्यता अंश के रूप में होना चाहिये। योग्यता अंश का नाम मात्र मूल्य 5000 रू0 अधिक नही होना चाहिये। यदि निदेशक योग्यता अंश धारित करने में असफल रहते हैं तो वह 500/- रू0 प्रतिदिन से दण्डनीय होगा, जब तक निर्धारित समय की समाप्ति के बाद निदेशक के रूप में कार्य करते रहते है। वह निदेशक के रूप में स्वतः प्रतिबंधित हो जाता है। (धारा 272)

केन्द्र सरकार द्वारा नियुक्त या विशेष हित वाले या निजी कम्पनी के अंशधारियों के लिये योग्यता अंशों को क्रय करना आवश्यक नही है।

निदेशक पहचान संख्या (डी0आइ0एन0) : प्रत्येक व्यक्ति जो कम्पनी में निदेशक बनने का इच्छुक है उसे केन्द्र सरकार को डी0आई0एन0 के आवंटन के लिये आवेदन करना होगा।

12.5 निदेशकों की अयोग्यतायें

एक व्यक्ति निदेशक नही नियुक्त होगा यदिः–

1. वह अस्वस्थ मस्तिष्क का घोषित हुआ है।
2. वह दिवालिया घोषित है।
3. उसने दिवालिया घोषित होने के लिए आवेदन किया है।
4. वह नैतिक अपराध के लिए न्यायालय में दोषी सिद्ध हो चुका है तथा उसके न्यूनतम माह के लिये कारावास का दण्ड मिला हो तथा ऐसे दण्ड मिले 5 वर्ष नही व्यतीत हुये हैं।
5. वह 6 माह से याचना का भुगतान करने में असमर्थ हो।
6. वह कम्पनी के संवर्धन या प्रबंध की कपटपूर्ण गतिविधियों के लिये न्यायालय द्वारा अयोग्य घोषित किया गया है।
7. वह एक लोक कम्पनी का पहले से निदेशक है जिसका

क. लगातार 3 वित्तीय वर्षों से उसने वार्षिक खाते तथा वार्षिक रिटर्न नही फाइल किया है।

ख. देय तिथि पर उसकी जमाओं तथा उस पर ब्याज का पुनर्भुगतान करने या देय तिथि पर ऋण पत्रों के धन की वापसी में या लाभांश को भुगतान करने में असमर्थ रहता है तथा ऐसी असमर्थता एक वर्ष या उससे अधिकतम बनी रहती है।

12.6 निदेशको की नियुक्ति

उपरोक्त अध्ययन से यह पाया गया कि मात्र व्यक्ति ही जिसके पास डी0आई0एन0 है, योग्यता अंशधारित करते हैं तथा अयोग्य नही घोषित है, निदेशक नियुक्त हो सकते हैं फर्म या संगठन या कम्पनी नही बना सकते हैं।

1. **प्रथम निदेशक :** प्रथम निदेशक पार्षद सीमा नियम के हस्ताक्षरकर्ताओं द्वारा नियुक्त होते हैं तथा जिनका नाम पार्षद अन्तर्नियम में उल्लिखित होता है। यदि नही, तो पार्षद सीमा नियम के हस्ताक्षरकर्ता ही प्रथम निदेशक माने जायेंगे। कम्पनी की प्रथम वार्षिक साधारण सभा पर प्रथम निदेशक अवकाश ग्रहण करते हैं।

2. **बाद के निदेशक :** निदेशकों की कुल संख्या का 2/3 निदेशक प्रत्येक वार्षिक साधारण सभा (AGM) में चक्रानुसार अवकाश ग्रहण करेंगे, जब तक पार्षद अन्तर्नियम में प्रत्येक ए0जी0एम0 में सभी निदेशकों के अवकाश ग्रहण का प्रावधान न हो। लोक कमपनी में कुल निदेशकों का 1/3 तथ निजी कम्पनी में सभी निदेशकों को नियुक्त करने की अनुमति अधिनियम देता है। नामित निदेशक गैर चक्रानुसार आधार पर विशिष्ट लेनदार या ऋणपत्रधारी द्वारा नियुक्त किये जाते हैं।

अवकाश ग्रहण करने वाले निदेशक पुनर्नियुक्ति के योग्य होते हैं। कोई नया व्यक्ति (अवकाश ग्रहण करने वाला निदेशक नही) कम्पनी में 500/— रू0 जमाकर तथा कम्पनी को 14 दिन की नोटिस स्वयं या किसी अन्य सदस्य द्वारा जिसने उसका नाम निदेशक के लिये प्रस्तावित किया है, देकर, नियुक्त हो सकता है। उसे नियुक्ति के 30 दिन के अन्दर रजिस्ट्रार को लिखित सहमति भेजनी पड़ती है। प्रत्येक निदेशक साधारण बहुमत के पृथक प्रस्ताव द्वारा चुना जाता है।

आनुपातिक प्रतिनिधित्व द्वारा नियुक्ति : यह कम्पनी के लिये वैकल्पिक हे कम्पनी के अन्तर्नियम यह प्रावधान कर सकते हैं कि कुल निदेशकों का न्यूनतम एक तिहाई निदेशक आनुपातिक प्रतिनिधित्व द्वारा नियुक्त होंगे।

निदेशक मण्डल द्वारा नियुक्ति : निम्न दशाओं में निदेशक मण्डल निदेशक की नियुक्ति करेगा—

(क) **मृत्यु या त्यागपत्र से आकस्मिक रिक्ति—1** ऐसा निदेशक, मूल निदेशक के कार्यकाल तक पर घोषित करेग।

(ख) **अतिरिक्त निदेशक** यदि अन्तर्नियम इसकी अनुमति देते हैं।

(ग) **वैकल्पिक निदेशक** : निदेशक के 3 माह से अधिक अनुपस्थित रहने पर यदि अन्तर्नियम इसकी अनुमति देते हैं, अतिरिक्त निदेशक मूल निदेशक के वापस आने तक या मूल निदेशक का कार्यकाल समाप्त होने तक निदेशक पद धारित करेगा।

केन्द्र सरकार द्वारा नियुक्ति : कम्पनी के अन्यायपूर्ण आचरण तथा कुप्रबंध को रोकने के लिये कम्पनी या केन्द्र सरकार, कम्पनी लॉ बोर्ड (सी0एल0बी0) द्वारा दिये गये लिखित आदेश पर, आदेश में लिखित संख्या में निदेशक, केन्द्र सरकार नियुक्त कर सकती है। कम्पनी लॉ बोर्ड द्वारा ऐसा आदेश, कम से कम 100 सदस्यों के आवेदन पर या कुल मताधिकार सदस्यों का न्यूनतम 10 प्रतिशत सदस्यों द्वारा आवेदन करने पर दिया जा सकता है। ऐसे निदेशक कम्पनी में अधिकतम 3 वर्ष के लिये निदेशक पद धारण करेंगे। ऐसे निदेशकों को योग्यता अंश रखने की आवश्यकता नही होती है तथा चक्रानुक्रम (रोटेशन) में अवकाश ग्रहण करना भी आवश्यक नही है। (धारा 408)

तृतीय पक्ष द्वारा नियुक्ति : कम्पनी के अन्तर्नियम तृतीय पक्ष जैसे ऋणपत्रधारी या अन्य उल्लिखित लेनदार को लोक कम्पनी को कुल निदेशक का 1/3 निदेशक तथा निजी कम्पनी में सभी निदेशकों का बिना चक्रानुक्रम (Non rotational) आधार पर नियुक्ति के लिये अधिकृत करते हैं।

वित्तीय संस्थाओं द्वारा नामांकित निदेशक : विभिन्न वित्तीय संस्थायें जैसे IDBI, यू0टी0आई0, भारतीय जीवन बीमा निगम, तथा राज्य वित्तीय निगम अपने अधिनियम के लागू होने के आधार पर तथा उनके वित्तीयन के आधार पर कम्पनियों में एक या अधिक निदेशक नियुक्त कर सकते हैं। इन वित्तीय संस्थाओं पर कम्पनी अधिनियम या पार्षद सीमा नियम तथा पार्षद अन्तर्नियम में उल्लिखित निदेशकों की नियुक्ति से संबंधित प्रावधान नही लागू होते हैं। जैसे चक्रानुक्रम में अवकाश ग्रहण, 2/3 से अधिक संख्या होना आदि।

12.7 निदेशकत्व की संख्या (Directorship) :

दिनांक 13.12.2000 से कोई भी व्यक्ति एक समय में 15 से अधिक कम्पनियों का निदेशक नही हो सकता है इस संख्या की गणना में निम्न को नही सम्मिलित किया जायेगा।

1. निजी कम्पनी में निदेशक जो लोक कम्पनी की न तो सूत्रधारी कम्पनी, न ही सहायक कम्पनी है।
2. असीमित कम्पनी में निदेशकत्व
3. लाभ न कमाने या लाभांश भुगतान पर प्रतिबंध वाली संस्थाओं में निदेशक
4. वैकल्पिक निदेशक– कोई भी व्यक्ति जो एक ही समय में 15 से अधिक कम्पनियों में निदेशक के रूप में कार्य करता है तो वह 15 के बाद वाली कम्पनियों के संबंध में 50,000/– रू0 तक के जुर्माने से दण्डनीय होगा।

12.8 निदेशक द्वारा कार्यालय से अवकाश

निदेशक का पद स्वतः रिक्त माना जायेगा यदि धारा 12.5 में दी गयी सात अयोग्यताओं में से कोई एक लागू होती है। निदेशक का पद तब भी रिक्त हो जायेगा जबकि–

1. उसने नियुक्ति के 2 माह के अन्दर योग्यता अंशों का क्रय नही किया है या उसने समय के अन्दर ऐसे अंशों का धारण नही किया है।
2. वह बोर्ड से बिना अनुमति किये बोर्ड की लगातार तीन सभाओं या लगातार 3 माह तक बोर्ड की सभी सभाओं में, जो दोनों में अधिक हो, में अनुपस्थित रहता है।
3. वह या उसकी फर्म या कोई निजी कम्पनी जिसमें वह संचालक है, कमपनी से धन उधार लेता है।
4. वह कम्पनी से हुये संविदा में, निदेशक मण्डल के समक्ष अपने हित का प्रकटीकरण नही करता है।
5. उसे कम्पनी में कार्यालय में कार्य करने के लिये, उसके नियुक्तिकर्ता द्वारा प्रतिबंधित कर दिया गया है।
6. उसे अंशधारियों द्वारा हटा दिया गया है।
7. उस कम्पनी ला बोर्ड द्वारा अन्यायपूर्ण कार्य या कुप्रबंध को बढ़ावा देने के कारण हटा दिया गया है।
8. उसे केन्द्र सरकार द्वारा कपट, अपकरण, विश्वास भंग आदि के लिये कार्यालय से हटा दिया गया है।
9. उसे, निरीक्षक द्वारा निरीक्षण हेतु मॉगी गयी जानकारी या लेखा पुस्तकों को न उपलब्ध कराने का दोषी माना गया है।
10. उसने या उसके सहयोगी ने बिना अंशधारियों में विशेष प्रस्ताव के अनुमोदन के बिना, लाभ का पद धारण किया है।

    यदि निदेशक कार्यालय बना रहता है तो वह 5000/– रू0 प्रति दिन जुर्माने से दण्डनीय होगा, जब तक कि वह कार्यालय में निदेशक के रूप में कार्य करता रहता है।

12.9 निदेशकों को हटाना

निदेशकों को निम्न द्वारा हटाया जा सकता है–

(क) अंशधारियों द्वारा (ख) केन्द्र सरकार द्वारा (ग) कम्पनी लॉ बोर्ड

(क) **अंशधारियों द्वारा हटाया जाना** : कम्पनी विशेष नोटिस देकर तथा सभा में विशेष प्रस्ताव पारित कर निदेशक को हटा सकती है। अंशधारियों की निदेशक को हटाने के आशय की सूचना कम्पनी को 14 दिन पूर्व देनी चाहिये। संबंधित निदेशक को सभा से अपना पक्ष रखने तथा कम्पनी को लिखित प्रतिवेदन देने का अधिकार होता है। ऐसे प्रतिवेदन की प्रति कम्पनी के सभी सदस्यों को भेजी जायेगी। केन्द्र सरकार द्वारा नियुक्त निदेशक या विशेष हित का प्रतिनिधित्व करने वाले निदेशक या आनुपातिक निदेशकों द्वारा चुने गये निदेशक को अंशधारियों को हटाने का अधिकार नही होता है।

(ख) **केन्द्र सरकार द्वारा हटाया जाना :** किसी भी निदेशक की, जिसके विरूद्ध कम्पनी लॉ बोर्ड द्वारा विपरीत निर्णय दिया गया है, केन्द्र सरकार द्वारा हटाया जा सकता है। निदेशक को केन्द्र सरकार कपट, अपकरण सकल लापरवाही अथवा विश्वासभंग के आधार पर हटा सकती है।

(ग) **कम्पनी लॉ बोर्ड द्वारा हटाया जाना (CLB) :** कम्पनी लॉ बोर्ड को अन्यायपूर्ण आचरण या कुप्रबंध को रोकने के लिये उसको आवेदन देने पर कम्पनी ला बोर्ड निदेशक को हटा सकती है। निदेशक, अन्तर्नियम में दिये गये नियमों के अनुसार किसी भी समय अपने पद से त्यागपत्र दे सकता है।

12.10 निदेशकों की शक्तियाँ

कम्पनी के पार्षद अन्तर्नियम तथा कम्पनी अधिनियम 1956 के प्रावधानों के अनुसार निदेशकों को ऐसे सभी कार्य करने का अधिकार है, जिन्हें कम्पनी करने के लिये अधिकृत होती है। अन्तर्नियम, निदेशकों की शक्तियों को निर्धारित करते हैं। यदि अंशधारी, निदेशक की शक्तियों को अस्वीकार कर देते हैं तो उसका एकमात्र हल अन्तर्नियमों में संशोधन होता है। हालॉकि निदेशक को कम्पनी के हित में अपनी शक्तियों का प्रयोग करना चाहिये। यदि निदेशक मात्र अपने हित में कार्य करते हैं या कार्य करने में अक्षम हो गये हो या कार्य के प्रति अनिच्छा है या कार्य करने में असमर्थ है, तो अंशधारी साधारण सभा में हस्ताक्षेप कर सकते हैं तथा बोर्ड की शक्ति का प्रयोग कर सकते हैं।

धारा 292 के अनुसार मण्डल केवल साधारण सभा में प्रस्तावों द्वारा, अन्तर्नियम के द्वारा प्रतिबंध की सीमा तक, निम्न शक्तियों का प्रयोग कर सकता है। निदेशकों की निम्न शक्तियाँ प्राप्त होती है–

1. याचना करना की पुनर्खरीद के लिये अधिकृत करना।
2. कम्पनी को अपने अंशों या अन्य प्रतिभूतियों जो कुल दत्त पूजी तथा मुक्त संचय के 10 प्रतिशत से अधिक न हो।
3. ऋण पत्र को निर्गमित करना
4. ऋण पत्रों के अतिरिक्त, अन्य माध्यमों से ऋण लेने का अधिकार (जैसे जन निक्षेप)
5. कम्पनी के कोषों का विनियोग
6. ऋण देने का अधिकार

उपरोक्त चौथी, पाँचवी, तथा छठी शक्तियों को, बोर्ड के प्रस्ताव द्वारा, कम्पनी के निदेशकों की समिति अथवा प्रबंध निदेशक अथवा प्रबंधक अथवा वरिष्ठ अधिकारी को प्रतिनिधायन किया जा सकता है।

उपरोक्त शक्तियों के अतिरिक्त, अन्य शक्तियाँ, कम्पनी अधिनियम के विभिन्न भागों में दी गयी है।

1. कम्पनी में प्रथम अंकेक्षक की नियुक्ति तथा अंकेक्षक की आकस्मिक रिक्त को भरने का अधिकार, जब तक कि ऐसी रिक्तता अंकेक्षक के त्यागपत्र से न हुयी हो। (धारा 224)
2. अतिरिक्त निदेशकों की नियुक्ति (धारा 260)

3. निदेशकों में से आकस्मिक रिक्तियों का भरना (धारा 262)
4. वैकल्पिक निदेशकों की नियुक्ति (धारा 313)
5. एक व्यक्ति की प्रबंध निदेशक या प्रबंधक के पद पर नियुक्त का अधिकार, यदि वह मात्र एक अन्य कम्पनी में प्रबंध निदेशक या प्रबंधक हो [धारा 316(2), धारा 386(2)]
6. ऐसी संविदाओं का अनुमोदन पारित करना जिसमें निदेशक या उनके संबंधियों का हित हो (धारा 297)
7. अंशधारियों के वार्षिक साधारण सभा मे अनुमोदन पर, घोषित होने वाली लाभाँश दर को संस्तुत करने की शक्ति।
8. किसी अन्य कम्पनी के अंशों या ऋण पत्रों में विनियोग या ऋण का अधिकार (372ए)

शक्ति सं0 2, 3, 4 अन्तर्नियम पर आधारित है। शक्ति संख्या 5 के लिये सभा में उपस्थित सभी निदेशकों की सहमति आवश्यक है।

निदेशकों की शक्तियों पर प्रतिबंध (धारा 293)

12.11 निदेशकों के कर्त्तव्य

निदेशकों के कर्तव्यों को दो भागों में वर्गीकृत किया गया है– (क) सामान्य कर्तव्य (ख) विधिक कर्तव्य। सामान्य कर्तव्यों को दो भागों में उपविभाजित किया गया है– (i) विश्वासाश्रित कर्तव्य जैसे– कम्पनी की ईमानदारी तथा कम्पनी के हित में लिये कार्यप्रणाली के प्रति कर्तव्य (ii) कर्तव्यों को पूर्ण सावधानी, क्षमता तथा निष्ठा से करना। अधिनियम के अन्तर्गत विधिक कर्तव्य निम्न है–

1. आवंटन के प्रतिवेदन को फाइल करना।
2. 1996 से अविमोचनीय पूर्वाधिकार अंशों का निर्गमन न करना तथा 20 वर्ष से अधिक विमोचनीय अंशों का निर्गमन करना।
3. रजिस्ट्रार की वैधानिक रिपोर्ट की प्रति भेजना
4. वैधानिक, वार्षिक साधारण सभा तथा असाधारण सभा का संचालन करना।
5. कम्पनी के अधिकारियों की रिपोर्ट, जिसमें निदेशक मण्डल की रिपोर्ट संलग्न हो, के साथ लाभ हानि खाता व आर्थिक चिट्ठे को तैयार करना तथा वार्षिक साधारण सभा में प्रस्तुत करना।
6. कम्पनी के प्रथम अंकेक्षकों की नियुक्ति
7. वार्षिक वित्तीय विवरणों को अधिकृत तथा अनुमोदित करना।
8. कम्पनी के लागत अंकेक्षक की नियुक्ति
9. मण्डल की सभाओं में उपस्थिति
10. कम्पनी के किसी संव्यवहार में हित का प्रकटीकरण करना
11. कम्पनी की सम्पत्ति के हस्तान्तरण से प्राप्ति का प्रकटीकरण
12. अंशों में हस्तान्तरिती से प्राप्ति का प्रकटीकरण
13. सदस्यों द्वारा ऐच्छिक समापन की दशा में, कम्पनी के शोधनक्षमता की घोषणा करना।

14. कम्पनियों के आर्थिक चिट्ठे की स्थिति का पूर्ण विवरण, जिसके साथ लेनदारों की सूची तथा उनके दावे की अनुमानित राशि संलग्न हो–

12.12 निदेशकों के दायित्व

निदेशकों के दायित्वों की निम्न शीर्षकों में विभाजित कर सकते हैं–

1. कम्पनी के प्रति दायित्व
2. तृतीय पक्ष के प्रति दायित्व
3. विधिक दायित्वों के अतिक्रमण पर दायित्व
4. सह–निदेशकों के कृत्यों पर दायित्व
5. आपराधिक दायित्व

कम्पनी के प्रति दायित्व : कम्पनी के निदेशकों का निम्न के प्रति दायित्व होता है–

क. विश्वासाश्रित दायित्व का उल्लंघन

ख. अधिकार से परे कृत्यों पर

ग. लापरवाही तथा अवॉछित कृत्य पर

निदेशक, कम्पनी तथा अंशधारियों के न्यासी होते हैं। यदि वे कम्पनी के हितों के विरूद्ध कोई कार्य करते है तो वे विश्वासाश्रित दायित्व के उल्लंघन के दोषी होंगे।

निदेशकों द्वारा कम्पनी अधिनियम, पार्षद सीमानियम तथा अन्तर्नियम का सीमाओं के बाहर किये गये कार्य अधिकार से परे कृत्य होते हैं।

लापरवाही कृत्य तब उत्पन्न होता है जब निदेशक अपने दायित्वों के निष्पादन में पूर्ण सावधानी तथा क्षमता का प्रयोग नही करते हैं।

कम्पनी की सम्पत्ति या धन का दुरूपयोग अवांछित (Malagide Act) कृत्य कहलाता है। आवांछित कृत्य में अनुशासनहीनता अपकरण तथा शक्तियों का दुरूपयोग आता है।

तृतीय पक्षकारों के प्रति दायित्व– निम्न परिस्थितियों में निदेशक व्यक्तिगत रूप से तृतीय पक्ष के दायी होंगे।

(i) प्रविवरण में गलत कथन या छिपाव पर

(ii) अनियमित आवंटन पर जैसे– बिना न्यूनतम अभिदान प्राप्त किये आवंटन या रजिस्ट्रार में यहाँ बिना स्थानापन्न प्रविवरण दाखिल किये आवंटन करना।

(iii) प्रविवरण दाखिल किये आवंटन करना प्रतिभूतियों के सूचीयन का आवेदन न करने पर

(iv) न्यूनतम अभिदान प्राप्त न होने की दशा में आवेदन राशि का उत्तर देने में असफल होना।

(v) कम्पनी के नाम का बिना उल्लेख किये विनिमय साध्य विलेख पर आपने स्वयं के नाम से हस्ताक्षर करना।

(vi) प्राधिकारी की गर्भित वारण्टी का उल्लंघन करने पर जैसे कम्पनी या उसकी शक्तियें से परे कार्य।

(vii) सीमा नियम व अर्न्तर्नियम के प्रावधानों के अनुसार दायित्व का असीमित हो जाने पर।

(viii) उनके द्वारा कपटपूर्ण व्यापार करने पर न्यायालय द्वारा दायी ठहराये जाने पर कम्पनी में समापन के समय उसे ऋणी तथा दायित्वों के लिये।

(ix) कपटपूर्ण कृत्य करने पर

आपराधिक दायित्व : अधिनियम के विभिन्न प्रावधानों का अनुपालन न करने तथा कपट के लिये, निदेशक आपराधिक रूप से दायी होते हैं। वे प्रविवरण में असत्य कथन, आवंटन का प्रतिवेदन दाखिल करने में असफल रहने पर, सदस्यों के रजिस्टर को न उपलब्ध कराने पर, कम्पनी द्वारा निर्मित प्रभारों का विवरण दाखिल करने में असफल रहने पर, 15 से अधिक कम्पनियों में कार्यभार ग्रहण करने पर, वार्षिक वित्तीय विवरणों को प्रस्तुत करने में असफल रहने पर आदि अधिनियम के विभिन्न प्रावधानों का उल्लंघन होने पर जुर्माना या कारावास या दोनों से दण्डनीय होंगे।

12.13 प्रबंध निदेशक

प्रबंध निदेशक एक निदेशक है जो

(क) कम्पनी के साथ समझौते या प्रस्ताव पारित करके (ख) कम्पनी की सामान्य सभा में या (ग) निदेशक मण्डल द्वारा (छ) या पार्षद सीमा नियम या अन्तर्नियम द्वारा, प्रबंध की सारवान शक्तियों का प्रयोग तथा निदेशक को सम्मिलित करता है, जो निदेशक के पद पर है, चाहे जो नाम हो।

प्रत्येक लोक कम्पनी जिसके पास 5 करोड़ रूपये या उससे अधिक दत्त अंश पूँजी है, में प्रबंध निदेशक या पूर्णकालिक निदेशक या प्रबंधक होगा। कार्यात्मक आधार पर एक से अधिक प्रबंध निदेशक हो सकते हैं व कुछ परिस्थितियों में उनकी नियुक्ति केन्द्र सरकार के अनुमोदन के बिना हो सकती है। उनकी नियुक्ति अधिकतम 5 वर्ष के लिये हो सकती है। कोई भी व्यक्ति एक ही समय में 2 कम्पनियों से अधिक में प्रबंध निदेशक नही हो सकता है।

प्रबंध निदेशक तथा पूर्णकालिक निदेशक एक ही नही है। प्रबंध निदेशक कम्पनी की सारवान शक्तियों से संबंधित होता है। जबकि पूर्णकालिक निदेशक कम्पनी के साधारण कर्मचारी की भांति होता है। प्रबंध निदेशकों की नियुक्ति में अंशधारियों की सहमति आवश्यक नही है जबकि पूर्णकालिक निदेशक की नियुक्ति हेतु विशेष प्रस्ताव आवश्यक है। या तो प्रबंध निदेशक या प्रबंधक नियुक्त हो सकते हैं। परन्तु पूर्णकालिक निदेशक तभी नियुक्त हो सकते हैं जबकि वहाँ प्रबंध निदेशक या प्रबंधक हों। प्रबंध निदेशक को 5 वर्षों के लिये तथा एक से अधिक कम्पनी में नियुक्त किया जा सकता है। एक पूर्णकालिक निदेशक एक समय में मात्र एक कम्पनी में पद धारित कर सकता है तथा उसे किसी भी अवधि के लिये नियुक्त किया जा सकता है।

12.14 बोर्ड/ मण्डल की सभायें

प्रत्येक कम्पनी के निदेशक मंडल की सभा प्रत्येक तीन माह में एक बार तथा प्रत्येक वर्ष में कम से कम ऐसी चार सभायें होनी चाहिये।

सूचना : बोर्ड के अध्यक्ष के पास बोर्ड सभाओं को संचालित करने की शक्ति होती है। कम्पनी के सचिव या प्रबंधक, प्रबंध निदेशक, निदेशक के आवेदन पर बोर्ड की सभा होनी आवश्यक है। सभा होने की नोटिस प्रत्येक निदेशक को उसकेभारत के पते पर लिखित रूप में भेजना चाहिये। अधिनियम में नोटिस के प्रारूप या नोटिस की अवधि निर्धारित नही है। उसमें केवल सभा के स्थान, समय तथा तिथि का उल्लेख होना आवश्यक है।

गणपूर्ति (कोरम) : निदेशक मंडल की सभा के लिये गणपूर्ति (कोरम), निदेशक मण्डल की कुल संख्या का 1/3 के बराबर या दो निदेशक, इनमें से जो अधिक हो, होता है। प्रस्ताव में हित रखने वाले निदेशकों की गणना कोरम में नही की जाती है। कोरम के अभाव के कारण मंडल की सभा नही हो पाती है तो उस सभा को अगले सप्ताह के उसी दिन, समय व स्थान के लिये कोरम की गणना विधि द्वारा न्यूनतम संख्या है।

परिचालन द्वारा प्रस्ताव : परिचालन द्वारा भी प्रस्ताव पारित किये जा सकते हैं यदि उसे साधारण सभा में प्रस्ताव पारित किया गया है। ऐसे प्रस्ताव को मताधिकार वाले अधिकतर निदेशकों द्वारा अनुमोदित होना चाहिए।

बोर्ड की सभाओं को संचालित करने की विधि : बोर्ड की सभाओं के सभी प्रस्ताव, साधारण बहुमत द्वारा पारित होना चाहिये। परन्तु सभी निदेशकों की सहमति आवश्यक है, यदि प्रस्ताव निम्न से संबंधित है–

क. प्रविवरण का अनुमोदन

ख. ऐसे व्यक्ति की प्रबंध निदेशक या प्रबंधक के रूप में नियुक्ति जो अन्य कम्पनी में पहले से प्रबंध निदेशक या प्रबंधक है।

ग. अन्तर निगमीय ऋण एवं विनियोग बोर्ड सभा में सामान्यतः हाथ के दिखाकर मत दिया जाता है। अध्यक्ष का मत निर्णायक होता है। स्थगित बोर्ड (मण्डल) सभा अवकाश के दिन नही होगी।

मण्डल की सभा की कार्यवृत्त (मिनट्स) रखे जाने चाहिये।

12.15 सारांश

व्यक्ति जो निदेशक की स्थिति में है, निदेशक कहलाता है। निदेशकों के समूह को निदेशक मण्डल कहते हैं। निदेशकों को कम्पनी का एजेण्ट माना गया है क्योंकि कम्पनी स्वयं, व्यक्ति की तरह कार्य नही कर सकती है। कम्पनी अधिनियम 1956 में निदेशकों की अधिकतम संख्या निर्धारित नही है, जबकि कम्पनी के पार्षद सीमा नियम तथा पार्षद अन्तर्नियम मण्डल के लिये न्यूनतम तथा अधिकतम निदेशक संख्या निर्धारित कर सकते हैं। निदेशकों द्वारा योग्यता अंश धारित करने के बाद ही रजिस्ट्रार व्यापार प्रारम्भ करने का प्रमाण पत्र जारी करते हैं। कम्पनी के पार्षद अन्तर्नियम तथा कम्पनी अधिनियम 1956 के प्रावधानों के अनुसार निदेशकों को ऐसे सभी कार्य करने का अधिकार है, जिन्हें कम्पनी करने के लिये अधिकृत होती है। प्रत्येक कम्पनी के निदेशक मंडल की सभा प्रत्येक तीन माह में एक बार तथा प्रत्येक वर्ष में कम से कम ऐसी चार सभायें होनी चाहिये।

12.16 शब्दावली

निदेशकः निदेशक कम्पनी के वह अधिकारी हैं जो कम्पनी के प्रबंधन के लिए उत्तरदायी होते हैं और शेयरधारकों के लाभ के लिए, प्रतिदिन के आधार पर इसके संचालन के लिए निर्णय लेते हैं।

12.17 बोध प्रश्न

सही या गलत

क. केवल व्यक्ति ही निदेशक नियुक्त हो सकते हैं।

ख. एक व्यक्ति केवल एक कम्पनी में निदेशक हो सकता है।

ग. प्रथम निदेशक अन्तर्नियम द्वारा नामित होता है।

घ. एक व्यक्ति प्रबंध निदेशक तथा पूर्ण कालिक निदेशक हो सकता है।

ड. सभा के दो सप्ताह पूर्व नये निदेशक को लिखित सूचना होनी चाहिये।

12.18 बोध प्रश्नों के उत्तर

(क) सही (ख) गलत (ग) सही (घ) सही (ड.) सही

12.19 स्वपरख प्रश्न

1. निदेशक, प्रबंध निदेशक तथा पूर्णकालिक निदेशक की परिभाषा दीजिये।
2. निदेशक की स्थिति एजेण्ट, प्रबंध निदेशक तथा न्यासी की तरह होती है। व्याख्या कीजिये।
3. निदेशक में कौन–कौन सी योग्यतायें होनी चाहिये? उसकी आयोग्यतायें क्या हैं?
4. निदेशक की नियुक्ति कैसे होती है तथा निदेशक को कौन नियुक्त कर सकता है?
5. किन आधारों पर निदेशक का पद रिक्त माना जायेगा? उसे कैसे हटाया जा सकता है?
6. निदेशकों की शक्तियों तथा दायित्वों का विवेचन कीजिये।
7. कम्पनी तथा तृतीय पक्ष के प्रति निदेशकों के दायित्व का वर्णन कीजिये। क्या वह आपराधिक रूप से दायी होता है?

12.20 सन्दर्भ पुस्तकें

1. गोगना पी0पी0एस0 (2009) ए0 टेक्सट बुक ऑन कम्पनी ला, नई दिल्ली, एस0 चन्द एण्ड कम्पनी।
2. कपूर जी0के0 एण्ड गुप्ता, सी0बी0 (2008), लॉ एथिक्स एण्ड कम्यूनिकेशन, नई दिल्ली, सुल्तान चन्द्र एण्ड सन्स।
3. सिंह अवतार, (2004) कम्पनी लॉ, लखनऊ, ईस्टर्न बुक कम्पनी।

इकाई 13 प्रबंधकीय पारिश्रमिक

इकाई की रूपरेखा

13.1 प्रस्तावना
13.2 निदेशकों का वर्गीकरण
13.3 निदेशकों की योग्यतायें तथा अयोग्यतायें
13.4 निदेशकों की नियुक्ति
13.5 निदेशकों को हटाना
13.6 निदेशकों के पारिश्रमिक
13.7 निदेशकों की शक्तियाँ
13.8 निदेशकों के दायित्व
13.9 साराँश
13.10 शब्दावली
13.11 बोध प्रश्न
13.12 बोध प्रश्नों के उत्तर
13.13 स्वपरख प्रश्न
13.14 सन्दर्भ पुस्तकें

उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् आप इस योग्य हो सकेंगे किः–

- निदेशकों तथा उनकी योग्यताओं का वर्णन कर सकें।
- निदेशकों की नियुक्ति का विवेचन कर सकें।
- निदेशकों की शक्तियों का वर्णन कर सकें।
- निदेशकों के पारिश्रमिक का वर्णन कर सकें।

13.1 प्रस्तावना

कम्पनी अधिनियम के अनुसार निदेशक पद पर आसीन व्यक्ति होता है जो निदेशक का पद धारित करता है, चाहे उसे जिस नाम से बुलाया जाय। अतः एक व्यक्ति जो वैध रूप से निदेशक मण्डल के लिये नियुक्त है या चयनित है तथा जिसकी ओर से संबंधित अधिकारियों को महत्वपूर्ण (कार्य) प्रपत्र दाखिल किये जाते हैं, की प्रबंधक के पद पर माना जाता है नाम का निर्धारण कम्पनी तथा उस व्यक्ति के समझौते द्वारा निर्धारित होता है।

निदेशक एक व्यक्ति होता है जो कम्पनी की गतिविधियों के प्रबंध तथा संचालन से सुसज्जित होता है। निदेशक (एक निकाय या 'निदेशक मण्डल' या 'मण्डल' के रूप में) टीम के रूप में सभाओं को संचालित करते हैं। बोर्ड एक टीम के रूप मे कम्पनी मामलों का संचालन तथा नियमन करता है।

कम्पनी अधिनियम, मण्डल की उन सभी कार्यों को करने की शक्ति देता है, जिन्हें कम्पनी करने के लिये अधिकृत है।

सामान्यतः निदेशक अपने कर्तव्य निर्वहन में दोहरी भूमिका निभाता है– (1) कम्पनी के एजेण्ट के रूप में (2) व्यक्ति के रूप कम्पनी के प्रति विश्वासाश्रित कर्तव्य एक निदेशक को अपने कर्तव्य निर्वहन में व्यक्तिगत निदेशक के रूप में कम शक्तियां प्राप्त होती है। कम्पनी के बोर्ड को कम्पनी की गतिविधियों के संचालन तथा एक 'टीम' के रूप में कम्पनी के व्यवसायिक उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिये, शक्तियाँ तथा अधिकार प्राप्त होते हैं। व्यक्तिगत रूप में निदेशक को कम्पनी के किसी मामले में कोई शक्ति प्राप्त नही होती है, सिवाय कम्पनी अधिनियम या किसी अन्य विधि द्वारा निर्धारित सीमाओं के अन्दर बोर्ड द्वारा दी गयी शक्तियों को छोड़कर निदेशकों द्वारा किये गये संविदा पर कम्पनी तभी बाध्य होगी जब उन्हें वास्तविक अधिकार हो या कम्पनी के पार्षद सीमानियम या कम्पनी के उपनियम या प्रबंध के अन्तरिम नियम (पार्षद अन्तर्नियम) द्वारा बोर्ड में प्रस्ताव द्वारा ऐसा अधिकार प्राप्त हुआ हो, चाहे ऐसी शक्ति वास्तव में प्राप्त हो या नहीं। प्रबंध निदेशक इस संबंध में एक अपवाद है, जिसके पास कम्पनी की तरफ से संविदा करने के लिये काल्पनिक (Ostensible) अधिकार प्राप्त होता है।

कम्पनी द्वारा किये गये सभी संविदा तथा अन्य प्रपत्रों पर कम्पनी या उसके प्रमण्डल (बोर्ड) द्वारा अधिकृत कम्पनी के प्रतिनिधि के हस्ताक्षर होने चाहिये। कम्पनी का निदेशक, बोर्ड (प्रमण्डल) द्वारा अधिकृत हस्ताक्षरकर्ता होता है। यह सब करते समय यह देखना आवश्यक है कि निदेशक कम्पनी की ओर से में कार्य करें, व्यक्तिगत रूप में नहीं।

ऐसा कम्पनी की सार्वमुद्रा के अन्तर्गत हस्ताक्षर करके तथा इस बात का विशेष उल्लेख करके कि हस्ताक्षरकर्ता, कम्पनी का अधिकृत हस्ताक्षरकर्ता है कर सकते हैं। कुछ मामलों में प्रमण्डल तथा अंशधारियों द्वारा उपयुक्त प्रस्ताव पारित किये जाते हैं। निदेशक को संविदा करने का अधिकार कम्पनी की तरफ से ही होता है, अपनी व्यक्तिगत स्थिति में स्वतः कोई अधिकार नही होता है। उन्हें अंशधारियों या मण्डल (बोर्ड) द्वारा अधिकृत होना आवश्यक है।

कम्पनी अधिनियम के अनुसार उल्लंघन होने पर दायित्व का बटवारा बोर्ड के सभी सदस्यों में नही होगा। अधिकतर मामलों में कम्पनी अधिनियम के प्रावधानों का उल्लंघन होने पर, दायित्व, दोषी अधिकारी का होगा। दोषी अधिकारी पद के अन्तर्गत प्रबंध निदेशक, पूर्णकालिक निदेशक, प्रबंधक, कंपनी का सचिव तथा कोई व्यक्ति जिसे प्रमण्डल (बोर्ड) द्वारा अनुपालन का दायित्व सौंपा गया है। जहां पर कम्पनी में प्रबंध निदेशक, पूर्णकालिक निदेशक या प्रबंधक, बोर्ड (मण्डल) द्वारा उल्लिखित निदेशक या कोई ऐसा निदेशक उल्लिखित नही है, वहाँ सभी निदेशकों को दोषी अधिकारी माना जायेगा। कुछ मामलों में कम्पनी अधिनियम सभी निदेशकों पर दायित्व आरोपित करता है। उदाहरण कम्पनी के समापन की दशा में सभी निदेशकों को यह सुनिश्चित करना चाहिये कि समापन तिथि तक सभी लेखा पूर्ण तथा अंकेक्षित है तथा उन्हें कम्पनी के खर्चे पर संबंधित न्यायालय में जमा कर दिया गया है। जिसका उल्लंघन होने पर निदेशक (1) एक वर्ष के कारावास तथा एक सौ हजार रूपये जुर्माने से दण्डनीय होंगे।

13.2 निदेशकों का वर्गीकरण

कम्पनी अधिनियम ने निदेशकों की दो श्रेणियों में विभाजित किया है–

1. प्रबंध निदेशक
2. पूर्णकालिक निदेशक

प्रबंध निदेशक वह निदेशक है जिसे कम्पनी बोर्ड के नियंत्रण, पर्यवेक्षण तथा निर्देशन के मामलों में प्रबंध की सारवान व्यक्तियाँ प्राप्त होती है। पूर्णकालिक निदेशक में वह निदेशक सम्मिलित किये जाते हैं, जो कम्पनी के पूर्णकालिक कर्मचारी हैं, कम्पनी के पूर्ण कार्य घण्टों में कार्य करते हैं तथा उनका कम्पनी में महत्वपूर्ण व्यक्तिगत हित होता है।

प्रत्येक लोक कम्पनी तथा निजी कम्पनी जो लोक कम्पनी की सहायक कम्पनी है, जिसके पास पाँच करोड़ रू0 की अंश पूंजी है, में प्रबंध निदेशक या पूर्णकालिक निदेशक या प्रबंधक को होना आवश्यक है।

उनकी नियुक्तियों से संबंधित परिस्थितियों के आधार पर, कम्पनी अधिनियम ने निदेशकों के निम्न प्रकार बताये हैं:–

1. **प्रथम निदेशक** : कम्पनी के पार्षद अन्तर्नियम के नियम–1 अनुसार, पार्षद सीमानियम के हस्ताक्षरकर्ता को कम्पनी का निदेशक माना जायेगा, जब तक कि वार्षिक साधारण सभा में निदेशक नियुक्त नही हो जाते हैं।
2. **आकस्मिक रिक्त** : जहां वार्षिक साधारण सभा द्वारा नियुक्त निदेशक समय से पूर्व या साधारण प्रक्रिया में पद त्याग करते हैं तो ऐसी रिक्त पद को अन्तर्नियमों के अनुसार बोर्ड द्वारा भरा जायेगा। ऐसा नियुक्ति व्यक्ति, उस अवधि तक निदेशक पद धारित करेगा जिस अवधि तक पद त्याग करने वाला निदेशक रहता है, यदि उसने पद त्याग नही किया होता है।
3. **अतिरिक्त निदेशक** : यदि अन्तर्नियम अनुमति देते हैं, तो बोर्ड अपने विवेक पर जहां वह आवश्यक तथा उचित समझे अगले वार्षिक साधारण सभा तक के लिये अतिरिक्त निदेशक नियुक्त कर सकता है। निदेशकों की संख्या तथा अतिरिक्त निदेशक दोनों सम्मिलित रूप में अन्तर्नियम द्वारा निर्धारित कुल अधिकतम निदेशक संख्या से अधिक नही हो सकती है।
4. **वैकल्पिक निदेशक** : यदि अन्तर्नियम इसके लिये अधिकृत करते हैं या कम्पनी द्वारा वार्षिक सभा में प्रस्ताव पारित किया गया है तो मूल निदेशक के किसी भी कारण से उस राज्य से अनुपस्थित रहने पर जो 3 माह से जहाँ सभा होती है, के लिये अतिरिक्त निदेशक नियुक्त कर सकता है। ऐसा वैकल्पिक निदेशक उस अवधि तक पद धारित करेगा जिस अवधि तक मूल निदेशक पद पर है। अवकाश प्राप्त निदेशकों की स्वतः पुनर्नियुक्ति के प्रावधान मूल निदेशकों पर लागू होते हैं, अतिरिक्त निदेशकों पर नही।
5. **छाया निदेशक** : ऐसा व्यक्ति है जो मण्डल (बोर्ड) द्वारा निदेशक नियुक्त नही है, परन्तु उसके निर्देशानुसार बोर्ड कार्य करता है, तो वह कमपनी के निदेशक की भांति दायी होगा, जब तक कि ऐसी सलाह पेशेवर न हो। अतः ऐसा छाया निदेशक कम्पनी अधिनियम के अन्तर्गत दोषी अधिकारी माना जायेगा।

6. **तथ्यतः निदेशक** : जहाँ कोई व्यक्ति जो वास्तव में निदेशक नियुक्त नही हुआ है, परन्तु निदेशक की भाँति कार्य करता है तो ऐसा व्यक्ति कम्पनी का तथ्यतः निदेशक माना जायेगा। कम्पनी अधिनियम के अनुसार ऐसा तथ्यतः निदेशक, निदेशक के रूप में दायी होगा।
7. **चक्रानुसार निदेशक** : लोक कम्पनी या ऐसी निजी कम्पनी जो लोक कम्पनी की सहायक कम्पनी है, के कुल निदेशकों का न्यूनतम (2/3) दो तिहाई चक्रानुसार अवकाश प्राप्त करेंगे तथा चक्रानुसार निदेशक वह निदेशक है जिन्हें एक समय के बाद अवकाश ग्रहण करना है।
8. **नामांकित निदेशक** : ऐसे निदेशक, अंशधारियों, संविदा से तृतीय पक्षकार ऋणदाता लोक वित्तीय संस्थान या बैंक या कुप्रबंध के कारण केन्द्र सरकार द्वारा नियुक्त किये जाते हैं। नामित निदेशकों के अधिकारों की सीमा तथा अंशधारियों द्वारा पर्यवेक्षण के क्षेत्र, का उल्लेख संविदा मे होते हैं।

सूचीयन समझौते के अन्तर्गत वर्गीकरण

प्रतिभूति संविदा (नियमन) अधिनियम, 1956 के अनुसार प्रत्येक कम्पनी, जो अपने अंशों का मान्यता प्राप्त भारतीय स्टाक विपणि में सूचीयन कराने की इच्छुक है, को ऐसे भारतीय स्कंध विपणि से सूचीयन समझौता करना होगा। यह समझौता समय–समय पर सेबी (SEBI) द्वारा निर्धारित मानक प्रारूप के अनुसार होना चाहिये। इस समझौते में निदेशकों की निम्न श्रेणियों को बताया गया है–

1. प्रशासनिक निदेशक
2. गैर प्रशासनिक निदेशक
3. स्वतंत्र निदेशक

प्रशासनिक निदेशक, कम्पनी का पूर्णकालिक निदेशक (जो कम्पनी के सम्पूर्ण कार्य घंटों में रहता हैं तथा कम्पनी में उसका महत्वपूर्ण व्यक्तिगत हित होता है) हो सकता है या प्रबंध निदेशक (जिसके पास कम्पनी प्रबंध की सारवान शक्तियाँ होती है) हो सकता है। इसके विपरीत गैर प्रशासनिक निदेशक वह निदेशक है जो न तो पूर्णकालिक निदेशक हो सकता है न ही प्रबंध निदेशक। समझौते के वाक्य 49 के अनुसार बोर्ड में प्रशासनिक तथा गैर प्रशासनिक निदेशकों का अनुकूलतम संयोजन होना चाहिये, बोर्ड (मण्डल) में 50 प्रतिशत से कम गैर प्रशासनिक निदेशक नही होने चाहिये। जहाँ बोर्ड का अध्यक्ष, गैर प्रशसनिक निदेशक है, तो बोर्ड में न्यूनतम एक तिहाई (1/3) स्वतंत्र निदेशक होने चाहिये तथा यदि अध्यक्ष प्रशासनिक निदेशक है, तो बोर्ड में न्यूनतम आधे स्वतंत्र निदेशक होने चाहिये, जहां बोर्ड का गैर प्रशासनिक अध्यक्ष कम्पनी के प्रवर्तक है या किसी प्रवर्तक से संबद्ध है या वह व्यक्ति बोर्ड (मण्डल) स्तर पर प्रबंधकीय स्थिति में है या बोर्ड से एक स्तर नीचे है, तो कम्पनी में बोर्ड में कम से कम 1/2 स्वतंत्र निदेशक होने चाहिये।

समझौते के अनुसार स्वतंत्र निदेशक, कम्पनी का वह गैर प्रशासनिक निदेशक है जो–

(क) प्रबंधकीय परिश्रमिक प्राप्त करने के बाद भी उसका कम्पनी, उसकी प्रवर्तक, उसके निदेशकों, उसके वरिष्ठ प्रबंधक या उसकी सूत्रधार कम्पनी, उसकी

सहायक कम्पनी तथा सहायक, जो निदेशक की स्वतंत्रता को प्रभावित कर सकते हैं, से महत्वपूर्ण सबन्ध नही थे।

(ख) प्रवर्तकों या बोर्ड स्तर पर महत्वपूर्ण प्रबंधकीय स्थिति में है या बोर्ड से एक स्तर नीचे वाले व्यक्ति से संबंधित नही है।

(ग) विगत तीन वित्तीय वर्षो से कम्पनी में अधिकारी नही है।

(घ) निम्न में पिछले तीन वित्तीय वर्षों में न साझेदार या नही अधिकारी था–

(i) वैधानिक अंकेक्षण कार्य या आन्तरिक अंकेक्षण कार्य, जो कम्पनी से संबंधित नही है तथा

(ii) विधिक फर्में तथा सलाहकारी फर्में जो कम्पनी से महत्वपूर्ण रूप से संबंधित है।

(ड.) वह कम्पनी की सामग्री का आपूर्तिकर्ता, सुविधादाता या ग्राहक या पट्टादाता या पट्टा लेने वाला नही है, जो निदेशक की स्वतंत्रता को प्रभावित कर सकते हैं।

(च) वह कम्पनी का सारवान अंशधारी नही है जैसे कम्पनी के मताधिकार वाले अंशों में 2 प्रतिशत से अधिक हो।

(छ) वह 21 वर्ष से कम आयु का न हो।

नामांकित निदेशकों की नियुक्ति संस्थाओं द्वारा की जाती है जिन्होंने कम्पनी को धन दिया है, स्वतंत्र निदेशक माने जाते हैं।

13.3 निदेशकों की योग्यतायें तथा अयोग्यतायें

कम्पनी अधिनियम में किसी कम्पनी के निदेशक के लिये कोई योग्यता निर्धारित नही है। इसलिये भारतीय कम्पनियाँ अपने पार्षद अन्तर्नियमों में निदेशकों की योग्यतायें निर्धारित करती है। कम्पनी अधिनियम के अनुसार लोक कम्पनी या निजी कम्पनी जो लोक कम्पनी की सहायक है में निदेशक बनने के लिये विशिष्ट योग्यता अंश लेने होंगे जो 5000/– पांच हजार रू0 में होगें।

इस भाग में अयोग्यताओं को तीन श्रेणियों में बांटा गया है, मूलभूत अयोग्यता, निगमीय व्यवहार के कारण अयोग्यता तथा अतिरिक्त अयोग्यता/मूलभूत अयोग्यतायें (धारा 16 का भाग 2) एक व्यक्ति कम्पनी के निदेशक पद पर नियुक्त होने के लिये योग्य नही होगा यदि–

(क) यदि वह अस्वस्थ मस्तिष्क का है तथा ऐसा सक्षम न्यायालय द्वारा का घोषित है।

(ख) वह दिवालिया है।

(ग) उसने न्यायालय में दिवालिया घोषित के लिये आवेदन किया है।

(घ) वह न्यायालय द्वारा किसी नैतिक अपराध या अन्य अपराध के दोषी सिद्व हुआ है तथा उसे कम से कम 6 माह की सजा हुई है तथा सजा होने की तिथि से 5 वर्ष नही व्यतीत हुये हैं। यदि किसी व्यक्ति को किसी अपराध में 7 वर्ष या उससे अधिक कारावास की सजा होती है तो वह किसी कम्पनी में निदेशक होने के लिये अयोग्य होगा।

(ड.) न्यायालय या ट्रिब्युनल द्वारा वह व्यक्ति निदेशक पद पर नियुक्ति हेतु अयोग्य घोषित है।

(च) उसने अपने द्वारा धारित कम्पनी के अंशों पर किसी याचना का कोई भुगतान नही किया है तथा पिछले याचना के भुगतान की तिथि से 6 माह बीत चुके हैं।

(छ) वह विगत 5 वर्षों में किसी भी समय धारा 188 के अन्तर्गत संबंधित पक्ष से लेन–देन का दोषी सिद्ध हो चुका है।

(ज) उसे निदेशक पहचान संख्या आवंटित नही है।

उपर्युक्त अयोग्यता के धारा 1 के वाक्य (घ) (ड) तथा (छ) प्रभाव नही होंगे–

1. अयोग्यता के दोष सिद्धि या आदेश की तिथि से 30 दिन तक।
2. जहाँ ऐसे अयोग्यता आदेश केविरूद्ध अपील लम्बित है, जब तक ऐसी अपील के मुकदमें का निर्णयन हुये 7 दिन न बीत गये हों।
3. जहाँ अपील में निर्णयन के बिन्दु फिर से अपील कर दी गयी है तथा उसका निर्णयन नही हुआ है

निगमीय लापरवाही के कारण आयोग्यता धारा 164(2) कोई व्यक्ति कम्पनी का निदेशक नही होगा यदिः–

क. यदि उसने विगत 3 वर्षों के वित्तीय प्रपत्र या वार्षिक रिटर्न को दाखिल नही किया है।

ख. यदि वह जमा का पुनर्भुगतान या जमा के ब्याज का भुगतान करने में देय तिथि पर या ऋण पत्रों के ब्याज या पुनर्भुगतान या लाभांश का भुगतान करने में देय तिथि पर असफल रहता है तथा यह प्रक्रम एक वर्ष या अधिकतम चलता रहता है तो ऐसा व्यक्ति उस कम्पनी या अन्य कमपनी में भुगतान मे असफल होने के 5 वर्ष बाद निदेशक के रूप में पुनर्नियुक्त होगा।

निजी कम्पनी को अतिरिक्त अयोग्यता जारी करने की शक्ति प्राप्त है।

13.4 निदेशकों की नियुक्ति

निदेशक की नियुक्ति मात्र प्रशासनिक आवश्यकता ही नही है, बल्कि प्रत्येक कम्पनी द्वारा पूर्ण की जाने वाली प्रक्रियात्मक आवश्यकता हैं। कम्पनी अधिनियम के अनुसार केवल व्यक्ति ही निदेशक नियुक्त हो सकता है। निगम, संगठन, फर्म या अन्य संस्थान, जिनका कृत्रिम वैधानिक व्यक्तित्व है, निदेशक नियुक्त नही हो सकते हैं। सामान्यतः लोक कम्पनी या निजी कमपनी, जो लोक कम्पनी की सहायक कम्पनी है, में कुल निदेशक संख्या के 2/3 निदेशक, अंशधारियों द्वारा नियुक्त होंगे तथा शेष (1/3) एक–तिहाई निदेशक, अन्तर्नियम में निर्धारित प्रक्रिया के अनुसार नियुक्त होंगे। इसमें असफल रहने पर शेष 1/3 निदेशक भी अंशधारियों द्वारा नियुक्त होंगे। लोक कम्पनी या निजी कम्पनी, जो लोक कम्पनी की सहायक कम्पनी है, के अन्तर्नियम के अनुसार प्रत्येक वार्षिक साधारण सभा में सभी निदेशकों के अवकाश ग्रहण करने का प्रावधान है।

एक निजी कम्पनी, जो लोक कम्पनी की सहायक कम्पनी नही हैं के अन्तर्नियम किसी या सभी निदेशकों की नियुक्ति की प्रक्रिया को निर्धारित कर सकते

हैं। यदि अन्तर्नियम इस संबंध में मौन है, तो निदेशकों की नियुक्ति अंशधारी करेंगे। कम्पनी अधिनियम, अन्तर्नियम को यह अनुमति देता है कि वह 2/3 निदेशकों की नियुक्ति आनुपातिक प्रतिनिधित्व के सिद्धान्त में आधार पर करें।

अन्यायपूर्ण आचरण या कुप्रबंध की दशा में, नामांकित निदेशकों की नियुक्ति तृतीय पक्षकार द्वारा या केन्द्र सरकार द्वारा की जाती हैं।

प्रबंध निदेशक को एक व्यक्ति ही होना चाहिये तथा उसकी नियुक्ति की अधिकतम अवधि 5 वर्ष होती है।

एक व्यक्ति जो प्रबंध निदेशक/प्रबंधक है पहले से लोक या निजी कम्पनी, जो लोक कम्पनी को सहायक है, में ऐसी कम्पनी से पूर्व अनुमोदन से मात्र एक अन्य कम्पनी का प्रबंध निदेशक/प्रबंधक बन सकता है। शुद्ध निजी कम्पनी पर यह नियम लागू नही होता है।

लोक कम्पनी या निजी कम्पनी, जो लोक कम्पनी की सहायक कम्पनी है, की दशा में है, में यदि नियुक्ति, कम्पनी अधिनियम की अनुसूची XIII के भाग–I तथा II के अनुरूप नही है, तो ऐसी नियुक्ति को केन्द्र सरकार द्वारा अनुमोदित होना चाहिये। एक लोक कम्पनी या निजी कम्पनी जो लोक कम्पनी की सहायक कम्पनी है, की दशा में पारिश्रमिक का भुगतान कम्पनी अधिनियम के प्रावधानों के अनुसार होगा तथा निर्धारण अन्तर्नियम द्वारा या कम्पनी की साधारण सभा में विशेष प्रस्ताव द्वारा होगा, यदि अन्तर्नियम इसकी अनुमति देते हैं।

13.5 निदेशकों को हटाना

एक निदेशक की, विशेष नोटिस देकर, कम्पनी की साधारण सभा में साधारण प्रस्ताव पारित कर हटाया जा सकता है। परन्तु यह नियम, आनुपातिक प्रतिनिधित्व द्वारा नियुक्त या केन्द्र सरकार द्वारा नियुक्त निदेशक पर लागू नही होता है।

कार्यालय में पद की रिक्ति : एक लोक कम्पनी या निजी कम्पनी, जो लोक कम्पनी की सहायक कम्पनी हे, में निदेशक का पद रिक्त माना जायेगा, यदि–

1. उसके कार्यावधि के दौरान उपरोक्त वर्णित तीन अयोग्यताओं (प्रबंध निदेशक या पूर्णकालिक निदेशक की अयोग्यता में संबंध) में कोई एक पायी जाती है।
2. निर्धारित अवधि में योग्यता अंश को लेने में असफल रहने पर (लोक कम्पनी में 2 माह) या कोई ऐसी अवधि जो अन्तर्नियमों द्वारा निर्धारित हो।
3. वह, बोर्ड की लगातार तीन सभा या लगातार तीन माह से बोर्ड की सभाओं, जो दोनों में लेना हो, में बिना बोर्ड के पूर्व अवकाश लिये अनुपस्थित रहता है।
4. यदि वह या उसकी ओर से कोई व्यक्ति या कोई फर्म जिसमें वह साझेदार है या कम्पनी, जिसमें वह निदेशक है, ऐसा ऋण की गारंटी लेता है, जो निदेशकों को ऋण नियमन प्रावधानों के विपरीत है।
5. हितों के प्रकरटीकरण से संबंधित औपचारिकताओं का उल्लंघन करने पर।
6. कम्पनी अधिनियम के अनुसार कार्यालय से हटा दिया गया है।
7. निदेशक के साथ कम्पनी में अन्य पद धारित करने पर इसके अतिरिक्त ऐसी लाभ कम्पनी या निजी कम्पनी जो लोक कम्पनी की सहायक कम्पनी है, में निदेशक या उसके संबंधी, बिना कमपनी की पूर्वानुमति में या ऐसे निदेशक की

जानकारी के बिना पद धारित करते हैं, तो ऐसे निदेशक का पद रिक्त माना जायेगा।

इसके अतिरिक्त, विशुद्ध निजी कम्पनी, निदेशक भी पद रिक्त में उपरोक्त कारणों के अतिरिक्त अन्य कारणों को अपने अन्तर्नियम में निर्धारित कर सकती है।

यदि कोई व्यक्ति निदेशक पद से हटाने के बाद भी पद पर बना रहता है तो 5000/– रूपये प्रति दिन से दण्डनीय होगा (जब तक कि ऐसा उल्लंघन जारी रहता है।)

त्यागपत्र : कम्पनी अधिनियम निदेशकों के त्यागपत्र के संबंध में मौन है। अधिकतर मामलों में, निदेशकों के त्यागपत्र का प्रावधान अन्तर्नियम में होता है। जहॉं पर इस संबंध अन्तर्नियम मौन रहते हैं, वहॉं निदेशकों के त्यागपत्र के संबंध में कोई निरपेक्ष प्रतिबंध नही है, जो ऐसे त्यागपत्र को दाखिल करने तथा कम्पनी रजिस्ट्रार के यहॉं ऐसे त्यागपत्र का कार्य दाखिल करने से संबंधित होता है।

उपरोक्त नियम का एकमात्र अपवाद प्रबंध निदेशक, पूर्णकालिक, प्रशासनिक निदेशकों की दशा में है, जो कम्पनी के कर्मचारी होते हैं तथा उनकी सेवा संविदा में त्यागपत्र, नोटिस की अवधि तथा उसके क्षतिपूर्ति के राशि का उल्लेख होता है।

कार्यालय त्याग पर क्षतिपूर्ति : कम्पनी अधिनियम में उल्लिखित सीमाओं के अन्तर्गत केवल प्रबंध निदेशक, या निदेशक, जो कार्यालय में प्रबंधक है त्था पूर्णकालिक निदेशक, कार्यालय त्याग या अवकाश ग्रहण के लिये क्षतिपूर्ति प्राप्त कर सकते हैं।

13.6 निदेशकों को पारिश्रमिक

1. धारा 198 के अनुसार, लोक कम्पनी या निजी कम्पनी, जो लोक कम्पनी की सहायक कम्पनी है, द्वारा अपने निदेशकों को (जिसमें प्रबंध निदेशक, पूर्णकालिक निदेशक व प्रबंधक शामिल) धारा 349 व 350 के अनुसार उस वित्तीय वर्ष में आगणित शुद्ध लाभ का 11 प्रतिशत से अधिक पारिश्रमिक नही दे सकते हैं। इस अधिकतम (11 प्रतिशत) सीमा में निदेशकों को बोर्ड/कमेटी की सभाओं में भाग लेने का शुल्क शामिल नही किया जाता है। [309(2)]
2. कम्पनी का निदेशक, जबकि उसका कर्मचारी नही है, जब तक कि उसका किसी विशिष्ट कार्य में हित न हो, जो पूरा समय तथा क्षमता मॉंगता है अर्थात गैर प्रशासनिक निदेशक की तरह प्रत्याशित से अधिक प्रयास आवश्यक है। हालॉंकि निदेशक कम्पनी का पूर्णकालिक कर्मचारी होता है तथा उसे स्वीकृत बैठने/पारिश्रमिक दिया जाता है। अतः विशिष्ट समझौते की अनुपस्थिति में निदेशक द्वारा सेवाओं के लिये कोई पारिश्रमिक देय नही होगा सिवाय बोर्ड/कमेटी की सभाओं में उपस्थिति के फलस्वरूप प्राप्त शुल्क को छोड़कर।
3. अधिनियम की धारा 309(2) के अनुसार निदेशक, कम्पनी की बोर्ड या कमेटी की सभा में भाग लेने के लिये, शुल्क के रूप में पारिश्रमिक ले सकता है।

   ऐसी कमपनी जिसकी दत्त पूँजी तथा मुक्त संचय का योग 10 करोड़ रूपये या उससे अधिक है अथवा उसका टर्न ओवर 50 करोड़ रूपये या उससे अधिक है तो निदेशक को प्रत्येक सभा में भाग लेने के लिये 20000/– रूपये से अधिक शुल्क का भुगतान नही होगा। अन्य कम्पनियों मे भाग लेने के लिये

10000/– रूपये से अधिक भुगतान नही होगी। [नोटिफिकेशन नं0 GSR580(E) dt. 24.07.03] कम्पनी (केन्द्र सरकार) सामान्य नियम व प्रपत्र 1956 का नियम 10B]

4. अधिनियम की धारा 309(4) के अनुसार एक निदेशक, जो न तो कम्पनी में पूर्णकालिक रोजगार में है तथा न ही प्रबंध निदेशक है, को पारिश्रमिक का भगतान होगा–

क. केन्द्र सरकार में अनुमोदन पर मासिक, त्रैमासिक या वार्षिक भुगतान

ख. या कमीशन के माध्यम से, यदि कम्पनी ने विशेष प्रस्ताव द्वारा ऐसे भुगतान को अधिकृत किया है;

ऐसे निदेशक को किया गया भुगतान या जहाँ पर ऐसे एक से अधिक ऐसे निदेशक है, उन सभी को किया गया भुगतान निम्न से अधिक नही होगा–

(i) कम्पनी के शुद्ध लाभों का 1 प्रतिशत, यदि कम्पनी में प्रबंध निदेशक या पूर्णकालिक निदेशक या प्रबंधक है।

(ii) अन्य दशा में कम्पनी शुद्ध लाभ का 3 प्रतिशत कम्पनी केन्द्र सरकार द्वारा अनुमोदन तथा कम्पनी की सामान्य सभा में पारित कर ऐसे पारिश्रमिक को 1 प्रतिशत या 3 प्रतिशत की दर से अधिक (जैसी स्थिति हो) के भुगतान को अधिकृत कर सकती है।

पत्रांक सं0 4/2011 दिनांक 4 मार्च, 2011 में यह निर्णय हुआ कि कम्पनी के गैर पूर्णकालिक निदेशकों की, सिटिंग शुल्क के अतिरिक्त यदि उनका कुल कमीशन, शुद्ध लाभ के 1 प्रतिशत से अधिक नही है तथा यदि कम्पनी पूर्णकालिक निदेशक है, तो शुद्ध लाभ के 3 प्रतिशत से अधिक नही है, यदि वह प्रबंध निदेशक नही है, कमीशन के माध्यम से भुगतान के लिये केन्द्र सरकार के अनुमोदन की आवश्यकता नही है।

खण्ड–I लाभ अर्जित करने वाली कम्पनियों द्वारा पारिश्रमिक का भुगतान धारा 198 तथा 309 के अनुसार किसी वित्तीय वर्ष में कम्पनी को लाभ होने पर किसी पारिश्रमिक का भुगतान वेतन, महंगाई भत्ता, अनुलाभों, कमीशन तथा भत्तों में किया जायेगा, जो शुद्ध लाभ के 5 प्रतिशत से अधिक नही होगा, यदि ऐसा एक प्रबंधकीय व्यक्ति है तथा यदि ऐसे एक से अधिक प्रबंधकीय व्यक्ति है, तो सभी को शुद्ध लाभ का 10 प्रतिशत होगा।

खण्ड-II अपर्याप्त लाभ या बिना लाभ वाली कम्पनियों द्वारा पारिश्रमिक का भुगतान :

(क) जहां किसी वित्तीय वर्ष में प्रबन्धकीय व्यक्ति के कार्यकाल के दौरान कम्पनी को लाभ नही प्राप्त हुआ है या इसे प्राप्त होने वाले लाभ अपर्याप्त हैं तो कम्पनी प्रबन्धकीय व्यकित को वेतन, महंगाई भत्ता, परिलब्धियों और किसी अन्य भत्ते के रूप में पारिश्रमिक, जिसकी अधिकतम सीमा 24,00,000 रूपये वार्षिक या 2,00,000 रूपये प्रतिमाह नही है, का भुगतान निम्नलिखित वेतनमान की गणना के आधार पर कर सकती है।

	जहां कम्पनी की प्रभावी पूंजी है	अधिकतम देय मासिक पारिश्रमिक
(i)	1 करोड़ रूपये से कम	75000 रू.
(ii)	1 करोड़ रूपये या उससे अधिक किन्तु 5 करोड़ रूपये से कम	100000 रू.
(iii)	5 करोड़ रूपये या उससे अधिक किन्तु 25 करोड़ रूपये से कम	125000 रू.
(iv)	25 करोड़ रूपये या उससे अधिक किन्तु 100 करोड़ रूपये से कम	150000 रू.
(v)	100 करोड़ रूपये या उससे अधिक	200000 रू.

परन्तु उपरोक्त अधिकतम सीमा उन परिस्थितयों में लागू होगी जबकि :

(i) पारिश्रमिक का भुगतान पारिश्रमिक समिति द्वारा पारित प्रस्ताव द्वारा अनुमोदित है।

(ii) कम्पनी ने ऋणों (जिसमें सार्वजनिक जमा सम्मिलित है) या ऋणपत्रों या उस पर देय ब्याज का भुगतान ऐसे प्रबन्धकीय व्यक्ति की नियुक्ति की तिथि से पूर्व लगातार तीस दिन की अवधि तक करने में त्रुटि न की हो।

(ख) जिसकी अधिकतम सीमा 4800000 रू0 वार्षिक या 400000 रू0 प्रतिमाह नही है, का भुगतान निम्नलिखित पैमाने के आधार पर होगा :

	जहां कम्पनी की प्रभावी पूंजी है	अधिकतम देय मासिक पारिश्रमिक
(i)	1 करोड़ रूपये से कम	150000 रू.
(ii)	1 करोड़ रूपये या उससे अधिक किन्तु 5 करोड़ रूपये से कम	200000 रू.
(iii)	5 करोड़ रूपये या उससे अधिक किन्तु 25 करोड़ रूपये से कम	250000 रू.
(iv)	25 करोड़ रूपये या उससे अधिक किन्तु 50 करोड़ रूपये से कम	300000 रू.
(v)	50 करोड़ रूपये या उससे अधिक किन्तु 100 करोड़ रूपये से कम	350000 रू.
(vi)	100 करोड़ रूपये या उससे अधिक	400000 रू.

परन्तु उपरोक्त अधिकतम सीमा उन परिस्थितियों में लागू होगी जबकि :

(i) पारिश्रमिक का भुगतान पारिश्रमिक समिति द्वारा पारित प्रस्ताव द्वारा अनुमोदित है।

(ii) कम्पनी ने ऋणों (जिसमें सार्वजनिक जमा सम्मिलित है) या ऋणपत्रों या उस पर देय ब्याज का भुगतान ऐसे प्रबन्धकीय व्यक्ति की नियुक्ति की तिथि से पूर्व लगातार तीस दिन की अवधि तक करने में त्रुटि न की हो।

(iii) कम्पनी की साधारण सभा में तीन वर्ष से अधिक के लिए पारिश्रमिक के भुगतान के बारे में विशेष प्रस्ताव पारित किया गया है।

अंशधारकों को साधारण सभा के बारे में दिए गए नोटिस में निम्नलिखित के बारे में जानकारी दी जानी चाहिए, यथा :

1. **सामान्य जानकारीः**
   (i) उद्योग की प्रकृति;
   (ii) वाणिज्यिक उत्पादन शुरू होने की तिथि या सम्भावित तिथि;
   (iii) नई कम्पनियों के मामले में वित्तीय संस्थानों द्वारा अनुमोदित योजना के अनुसार कार्य शुरू होने की सम्भावित तिथि;
   (iv) दिए गए सूचकों पर आधारित वित्तीय अनुपालन की स्थिति;
   (v) निर्यात अनुपालन और शुद्ध विदेशी विनिमय सहयोग;
   (vi) विदेशी विनिवेश या सहयोग, यदि कोई हो।
2. **नियुक्त व्यक्ति के बारे में जानकारीः**
   (i) पिछला ब्यौरा;
   (ii) पिछला पारिश्रमिक;
   (iii) पुरस्कार की स्वीकृति;
   (iv) कार्य की रूपरेखा;
   (v) प्रस्तावित पारिश्रमिक;
   (vi) उद्योग की बाबत तुलनात्मक पारिश्रमिक की रूपरेखा, कम्पनी का आकार, स्थिति की रूपरेखा;
   (vii) कम्पनी के साथ प्रत्यक्ष या परोक्ष आर्थिक सम्बन्ध या प्रबन्धकीय व्यक्ति से सम्बन्ध।
3. **अन्य जानकारी :**
3. **सामान्य जानकारीः**
   (i) हानि या अपर्याप्त लाभ के कारण;
   (ii) सुधार के लिए किए गए या प्रस्तावित कार्य;
   (iii) उत्पादकता में संभावित वृद्धि।

13.7 निदेशकों की शक्तियाँ

निदेशकों की शक्तियाँ सामान्यतः अन्तर्नियम द्वारा निर्धारित होती है। निदेशक मण्डल के कार्य करने के ढंग को अंशधारियों द्वारा नही नियंत्रित किया जा सकता है।

कम्पनी अधिनियम 1956 की धारा 291 के निदेशक मण्डल को सामान्य शक्तियाँ प्रदान करती है। उसके अनुसार निदेशक मण्डल (कम्पनी अधिनियम के प्रावधानों के अन्तर्गत) उन सभी कार्यों को कर सकता है, जिन्हें कम्पनी करने के लिये अधिकृत है। हालांकि, मण्डल (बोर्ड) किसी ऐसी शक्ति का प्रयोग या ऐसा कृत्य नही कर सकता है, जिसके लिये अधिनियम द्वारा या सीमानियम द्वारा या अन्तर्नियम सुरक्षा या कम्पनी द्वारा सामान्य सभा बुलाना आवश्यक है।

निदेशकों की व्यक्तिगत शक्ति : जब तक अधिनियम या अन्तर्नियम में अन्य प्रावधान न हो, तब तक बोर्ड में निर्णय मात्र बहुमत से होता है। व्यक्तिगत निदेशकों के पास कोई सामान्य शक्तियाँ नही होती है। उनके पास मात्र पार्षद सीमानियम तथा अन्तर्नियम द्वारा दी गयी शक्तियाँ होती है।

कम्पनी अधिनियम की धारा 292(1) के अनुसार कम्पनी का निदेशक मण्डल, कम्पनी की तरफ से निम्न शक्तियों का प्रयोग करेगा तथा उन्हें, मण्डल की सभा में पारित प्रस्ताव के माध्यम से ही प्रयोग करेगा।

(क) अंशों की अदत्त राशि के संबंध में अंशधारियों से याचना करने की शक्ति

(ख) धारा 77ए (2) वाक्याँश (ब) के प्रथम प्रावधान के अनुसार पुनर्खरीद को अधिकृत करने की शक्ति

(ग) ऋणपत्र निर्गमित करने की शक्ति

(घ) ऋण पत्रों के अतिरिक्त, ऋण लेने की शक्ति

(ड.) कम्पनी के कोष को विनियोग करने की शक्ति

(च) ऋण लेने की शक्ति

13.8 निदेशकों के दायित्व

1. कम्पनी के प्रति दायित्व

(क) विश्वासाश्रित कर्तव्य का उल्लंघन : जहाँ पर निदेशक, कम्पनी के हित के प्रति ईमानदारी से कार्य नही करते हैं, वह वे विश्वासाश्रित कर्तव्य के उल्लंघन के दोषी होंगे। निदेशकों की अधिकाँश शक्तियों, विश्वासाश्रित शक्तियॉ होती है तथा उन्हें कम्पनी के हित में प्रयोग करना चाहिये, निदेशकों या सदस्यों में एक वर्ग के हित में नही।

(ख) अधिकार से परे कार्य : निदेशकों से यह अपेक्षा की जाती है कि वे कम्पनी अधिनियम, पार्षद सीमा नियम तथा पार्षद अन्तर्नियम के प्रावधानों के अन्तर्गत कार्य करेंगे। इसके अतिरिक्त निदेशकों की शक्तियों को अन्तर्नियम या सीमा नियम के विशिष्ट प्रतिबंध द्वारा सीमित किया जाता है। उपरोक्त सीमाओं के परे या बाहर किये गये कृत्यों के लिये, निदेशक व्यक्तिगत रूप से दायीं होंगे।

(ग) लापरवाही : निदेशकों द्वारा कम्पनी के प्रति कर्तव्य निभाते समय यह अपेक्षा की जाती है कि वे दूरदर्शी व्यवसायी की तरह शक्तियों का प्रयोग उचित क्षमता तथा सावधानी से करेंगे। परन्तु जहाँ पर वे उचित सावधानी तथा क्षमता से कार्य करने में असफल रहते हैं, तो यह माना जायेगा कि उन्होंने कर्तव्य निभाने में लापरवाही की है तथा वे उससे होने वाली हानि के लिये दायी होंगे।

(घ) गलत कृत्य : निदेशक, कम्पनी की सम्पत्ति तथा धन के न्यासी होते हैं। यदि वे बेइमानी या गलत ढंग से अपनी शक्तियों का प्रयोग तथा कर्तव्यों का निर्वहन करते हैं तो वे विश्वास भंग में दायी होंगे तथा उनके ऐसे कार्यों से कम्पनी को हुयी हानि को सही करने की अपेक्षा की जाती है। वे, कम्पनी की तरफ से कर्तव्य निर्वहन के क्रम में बनाये गये गुप्त लाभों के लिये कम्पनी के प्रति जवाबदेह होंगे। निदेशक कर्तव्य भंग के कृत्यों के लिये भी दायी होंगे।

2. **तृतीय पक्ष के प्रति दायित्व :**
कम्पनी अधिनियम के अन्तर्गत–

(क) **प्रविवरण** : दायित्व अधिनियम की अनुसूची II के तथा धारा 56 के अनुसार प्रविवरण में आवश्यक विवरण देने में असफल होने या प्रविवरण में तथ्यों का गलत कथन होने पर निदेशक व्यक्तिगत रूप से तृतीय पक्ष को हर्जाना देने के लिए दायी होंगे। धारा 62 यह प्रावधान करती है कि निदेशक ऐसे प्रत्येक व्यक्ति को क्षतिपूर्ति के लिये दायी होंगे, जिसने अंशों या ऋण पत्रों का क्रय असत्य कथन वाले प्रविवरण पर विश्वास करके किया तथा इससे उसे हानि हुई है।

(ख) **आवंटन के संबंध में :** निदेशक निम्न के लिये व्यक्तिगत रूप में दायी होंगे–

(i) अनियमित आवंटन जैसे : न्यूनतम अभिदान की प्राप्ति के पूर्व आवंटन (धारा 69) या बिना स्थानापन्न विवरण दाखिल किये (धारा 70) धारा 71 (3) धारा 71 (3) के अनुसार यदि कोई निदेशक, आवंटन से संबंधित धारा 69 व 70 के प्रावधानों का जानबूझकर उल्लंघन करता है या उल्लंघन के लिये अधिकृत या जानबूझ अनुमति देता है तो वह कम्पनी तथा आवंटी को हानि के लिये क्षतिपूर्ति के लिये दायी होगा।

(ii) निर्गम खुलने के 120 दिनो के अन्दर न्यूनतम अभिदान न होने पर आवंटन राशि लौटाने में असफल होने पर : धारा 69(5) सेबी, दिशा निर्देश के साथ पढ़ा जाय, के अनुसार प्रविवरण निर्गमन की तिथि से 130 दिनों के अन्दर यदि धनराशि वापस नही की जाती है तो कम्पनी के निदेशक, 130वें दिन बीतने पर 6 प्रतिशत प्रति वर्ष, मूलराशि के लौटाने के लिये संयुक्त रूप से दायी होंगे। निदेशक तभी दायी नही होंगे जब वह सिद्ध कर दे कि धन के पुनर्भुगतान न होने में उनकी ओर कोई लापरवाही नही की गयी थी।

(iii) प्रतिभूतियों के सूचीयन का आवेदन न करने या निरस्त होने पर धनराशि का पुनर्भुगतान न होने की दशा में– धारा 73(2) के अनुसार जहाँ कम्पनी की प्रतिभूतियों के सूचीयन हेतु आवेदन नही किया गया या आवेदन करने पर निरस्त कर दिया गया तो कम्पनी को सभी धनराशि का बिना ब्याज भुगतान करना होगा। यदि कम्पनी के लौटाने के दायी हाने के संदर्भ में अन्दर धनराशि का भुगतान नही किया जाता है तो कम्पनी का प्रत्येक दोषी अधिकारी न्यूनतम 4 प्रतिशत तथा अधिकतम 15 प्रतिशत ब्याज के साथ धनराशि को लौटाने के लिये संयुकत रूप से दायी होगा।

(ग) **असीमित कम्पनी** : धारा 322 (सीमानियम) या धारा 323 (विशेष प्रस्ताव द्वारा सीमानियम में परिवर्तन) के अनुपालन में यदि निदेशक के दायित्व को असीमित बना दिया है तो कम्पनी के निदेशक व्यक्तिगत रूप में तृतीय पक्ष के प्रति दायी होंगे। धारा 322 के अनुसार कम्पनी का सीमानियम सभी या किसी निदेशक के दायित्व की असीमित बना सकता है। इस दशा में, निदेशक,

प्रबंधक तथा सदस्य, जो व्यक्ति को निदेशक या प्रबंधक के रूप में नियुक्त करनेके लिये प्रस्तावित करते हैं, उन्हें नियुक्ति के प्रस्ताव के साथ एक कथन जोड़ देना चाहिये कि निदेशक पद वाले व्यक्ति का दायित्व असीमित होगा। ऐसे कथन की नोटिस निम्न को या निम्न में एक व्यक्ति को दे देनी चाहिये। प्रवर्तक, निदेशक, प्रबंध व अधिकारी सीमित दायित्व वाली कम्पनी की दशा में, यदि कम्पनी अन्तर्नियमों द्वारा अधिकृत है, तो विशेष प्रस्ताव पारित कर कम्पनी निदेशक या प्रबंधक के दायित्व की असीमित कर सकती है। परन्तु यह संशोधन तभी प्रभावी होगा जब संबंधित अधिकारियों से उनके सीमित दायित्व को असीमित करने की सहमति ले ली गयी हो।

(घ) **कपटपूर्ण व्यापारः** धारा 542 के अनुसार न्यायालय के आदेश द्वारा कम्पनी के दायित्वों या ऋणों में लिये निदेशकों व्यक्तिगत रूप से दायी होंगे। ऐसा आदेश, न्यायालय तभी देगा जबकि निदेशक कपटपूर्ण व्यापार के दोषी पाये जाते हैं। धारा 542(1) के अनुसार कम्पनी के समापन पर, यदि यह पाया जाता है कम्पनी के व्यापार को कपटपूर्ण उद्देश्य से चलाया जा रहा था, तो न्यायालय कमपनी के सरकारी समापक या समापक या किसी लेनदार या अंशदायी के आवेदन पर, उन व्यक्तियों को बिना दायित्व की सीमा लगाये, कम्पनी के समक्ष दायित्वों या ऋणों को चुकाने के दायी ठहरा सकता है।

इसके अतिरिकत धारा 542(3) के अनुसार प्रत्येक दोषी व्यक्ति, जो उपरोक्त कपटपूर्ण व्यवसाय के बारे में जानता था, को न्यायालय 2 वर्ष तक का कारावास या 50,000 रूपये जुर्माना या दोनों से दण्डनीय होगा।

(ड.) **वारण्टी के उल्लंघन पर दायित्व** : निदेशकों से यह आशा की जाती है कि अपने अधिकारों की सीमा के अन्तर्गत कार्य करेंगे। अतः वे ऐसा कोई व्यवहार करते हैं, जो कम्पनी की शक्ति से परे हो या निदेशक तृतीय पक्ष को होनें वाली हानि के प्रति व्यक्तिगत रूप से दायी होंगे।

(च) **विधिक दायित्वों के उल्लंघन पर दायित्व:** कम्पनी अधिनियम 1956 के विभिन्न धाराओं के अन्तर्गत निदेशकों पर विभिन्न विधिक कर्तव्य आरोपित किये गये हैं। इन कर्तव्यों के अनुपालन में उल्लंघन होने पर दण्ड का प्रावधान है।

(छ) **सह–निदेशकों के कृत्यों पर दायित्व** : साधारण सभा में कम्पनी के साथ किये जाने वाले मामलों को छोड़कर निदेशक, कम्पनी के एजेण्ट होते है। इसी के अनुसार बोर्ड द्वारा कुछ भी न करने पर बोर्ड, ऐसी निदेशक पर दायित्व आरोपित कर सकता है जिसे इस बारे में कुछ पता ही नही है। ऐसे दायित्व के लिये या तो उसने गलत कृत्य के लिये सहमति दी हो या उसमें पक्षकार रहा हो। अतः निदेशक की सभा से अनुपस्थिति उसे सह निदेशक के कपटपूर्ण कृत्य के लिये इस आधार पर दायी नही ठहराया जा सकता है कि उसे कपट खोजना चाहिये था।

(ज) **आपराधिक दायित्व** : कम्पनी के निदेशकों पर सिविल दायित्व के अतिरिक्त, आपराधिक दायित्व भी आपेक्षित हो सकते हैं। कम्पनी अधिनियम के कुछ प्रावधान, जो निदेशकों पर आपराधिक दायित्व डालते हैं, निम्न है–

(i) धारा 44(4) के अनुसार असत्य कथन वाले प्रविवरण या स्थानापन्न प्रविवरण दाखिल करने पर दोवर्ष का कारावास या 50,000 रू0 जुर्माना या दोनों।

(ii) धारा 58ए(3) के अनुसार निर्धारित समय सीमा में जमा का पुनर्भुगतान के असफल होने पर 5 वर्ष का कारावास या जुर्माना (धारा 58ए(5)

(iii) निर्धारित सीमा से अधिक जमा आमंत्रित करना या स्वीकार करने पर 5 वर्ष तक का कारावास या जुर्माना धारा 58ए(6)

(iv) असत्य कथन वाले प्रविवरण का निर्गमन करने पर 2 वर्ष तक का कारावास या 50,000 रू0 तक का जुर्माना (धारा 63)

(v) जनता के धन के विनियोग के लिये आकर्षित करने हेतु जानबूझकर असत्य, कपटपूर्ण कथन करने पर 5 वर्ष तक का कारावास या 100000 रूपये जुर्माना।

(vi) अतिरिक्त आवेदन राशि में पुनर्भुगतान में असफल होने पर 50000 रू0 तक का जुर्माना परन्तु यदि 8 दिन के बाद 6 माह में पुनर्भुगतान नही किया तो एक वर्ष तक की सजा। (धारा 73)

(vii) अंश प्रमाणपत्र का कपटपूर्ण नवीनीकरण या डुप्लीकेट प्रमाण पत्र जारी करने पर 6 माह की सजा या 100000 रू0 तक का जुर्माना।

(viii) लेनदार का नाम छिपाने या किसी लेनदार के दावे या ऋण की राशि तथा सवभाव का गलत वर्णन करने पर एक वर्ष का कारावास या जुर्माना या दोनों (धारा 105)

(ix) अविमुक्त दिवालिये का निदेशक के रूप में कार्यरत रहने पर 2 वर्ष तक का कारावास या 50000 रू0 तक जुर्माना धारा 202(1)

(x) लाभांश के वितरण में अनियमितता होने पर 3 वर्ष तक का साधारण करावास या अनियमितता जार रहने तक 1000 रू0 प्रति दिन जुर्माना (धारा 207)

(xi) कम्पनी की पुस्तकों के निरीक्षण के लिये केन्द्र सरकार के अधिकृत अधिकारी या रजिस्ट्रार को पुस्तकें व प्रपत्र उपलब्ध कराने में असफल रहने पर एक वर्ष तक का कारावास या 50000 रू0 तक जुर्माना धारा 209(17)

(xii) वार्षिक साधारण सभा मे आर्थिक चिट्ठा, लाभ–हानि खाता आदि को प्रस्तुत न कर पाने पर 6 माहतक का कारावास या 10000 रू0 तक का जुर्माना धारा 210(5)

(xiii) आर्थिक चिट्ठे तथा उसके विवरण एवं लाभ–हानि खाता व संलग्नक को तैयार करने में धारा 211 का अनुपालन न किये जाने पर 6 माह तक का कारावास या 10000 रू0 तक का जुर्माना धारा 211(8)

(xiv) निदेशक मण्डल के प्रतिवेदन के समय आर्थिक चिट्ठा संलग्न करने में असफल रहने पर 6 माह तक का कारावास या 20000 रू0 तक का जुर्माना धारा 217(5)

(xv) अंकेक्षकों को संरचना प्रदान करने में असफल रहने पर 6 माह तक का कारावास या 50000 रू0 तक जुर्माना धारा 221(4)

(xvi) कम्पनी के लागत खाते के अंकेक्षण में धारा 233बी(11) की औपचारिकताओं का अनुपालन न करने पर 3 वर्ष तक का कारावास या 50000 रू0 तक का जुर्माना या दोनों।

(xvii) कम्पनी विधि प्रमण्डल द्वारा अंशों व ऋण पत्रों पर लगाये गये प्रतिबंधों का पालन न करने पर 6 माह तक का कारावास या 50,000 रू0 तक का जुर्माना धारा 250(9)

(xviii) धारा 293ए का उल्लंघन कर राजनैतिक दल को योगदान देने पर या राजनैतिक उद्देश्य से योगदान करने पर 3 वर्ष तक कारावास या जुर्माना धारा 293ए(5)

(xix) केन्द्र सरकार की पूर्व अनुमति के बिना निदेशकों को ऋण प्रदान करने पर 6 माह तक का कारावास या 50000 रू0 तक जुर्माना धारा 295(4)

(xx) संविदा में हित के प्रकृतीकरण न करने पर 50,000 रू0 तक जुर्माना धारा 299(4)

(xxi) अंशधारिता के प्रकटीकरण में असफल रहने पर 2 वर्ष तक का कारावास या 50000 रू0 जुर्माना या दोनो धारा 308(3)

(xxii) धारा 370 में निर्धारित सीम से अधिक अन्य निगम को ऋण देने पर 50000 रू0 तक जुर्माना या 6 माह तक का कारावास (धारा 371)

(xxiii) कोई व्यक्ति, जिसकी संविदा को धारा 402 के अन्तर्गत भंग कर दिया गया है, वह कम्पनी ला बोर्ड के अनुमोदन के बिना संविदा भंग के 5 वर्ष बीतने के पूर्व जानबूझकर प्रबंध निदेशक या अन्य निदेशक के तौर पर कार्य करता है तो एक वर्ष तक कारावास या 50,000 रू0 तक जुर्माना या दोनों धारा 407(2)

(xxiv) कम्पनी की शोधन क्षमता के संबंध में गलत कथन करने पर 6 माह तक का कारावास या 50,000 रू0 तक जुर्माना या दोनों। धारा 488(3)

(xxv) लेखा पुस्तकों को रखने की औपचारिकताओं का अनुपालन न करने पर 50,000 रू0 का जुर्माना तथा प्रत्येक अपराध के लिये एक वर्ष कारावास के दण्ड का प्रावधान है। धारा 209(8)

13.9 सारांश

यह निर्विवाद रूप से कहा जा सकता है कि निदेशक कम्पनी के महत्वपूर्ण स्तंभ होते हैं। उनके अधिकार तथा दायित्व असंख्य होते हैं। निदेशक को दिया जाने वाला पारिश्रमिक नियमानुसार तथा अधिनियम द्वारा निर्धारित सीमा से अधिक नही

होना चाहिए।

13.10 शब्दावली

निदेशक: वह व्यक्ति होता है जो कम्पनी की गतिविधियों के प्रबंध तथा संचालन से सुसज्जित होता है।

प्रबंध निदेशकः वह निदेशक है जिसे कम्पनी बोर्ड के नियंत्रण, पर्यवेक्षण तथा निर्देशन के मामलों में प्रबंध की सारवान व्यक्तियाँ प्राप्त होती है।

13.11 बोध प्रश्न

1. प्रत्येक लोक कम्पनी तथा निजी कम्पनी जो लोक कम्पनी की सहायक कम्पनी है, जिसके पास .... की अंश पूंजी है, में प्रबंध निदेशक या पूर्णकालिक निदेशक या प्रबंधक को होना आवश्यक है।
2. कम्पनी अधिनियम के अनुसार लोक कम्पनी या निजी कम्पनी जो लोक कम्पनी की सहायक है में .... बनने के लिये विशिष्ट योग्यता अंश लेने होंगे जो 5000/— पांच हजार रू0 में होगें।
3. लोक कम्पनी या निजी कमपनी, जो लोक कम्पनी की सहायक कम्पनी है, में कुल निदेशक संख्या के ....निदेशक, अंशधारियों द्वारा नियुक्त होंगे।
4. लाभ अर्जित करने वाली कम्पनियों द्वारा पारिश्रमिक का भुगतान धारा .... के अनुसार किसी वित्तीय वर्ष में कम्पनी को लाभ होने पर किसी पारिश्रमिक का भुगतान वेतन, महंगाई भत्ता, अनुलाभों, कमीशन तथा भत्तों में किया जायेगा ।

13.12 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. पाँच करोड़ रू0 2. निदेशक 3. 2/3 4. 198 तथा 309

13.13 स्वपरख प्रश्न

1. कम्पनी के निदेशकों से क्या आशय है? निदेशकों के वर्गीकरण का वर्णन कीजिये।
2. निदेशकों के विभिन्न शक्तियों तथा दायित्वों का वर्णन कीजिये?
3. कम्पनी अधिनियम के अनुसार निदेशकों को भुगतान किये जाने वाले पारिश्रमिक का वर्णन कीजिये।

13.14 सन्दर्भ पुस्तकें

1. पी0पी0एस0 गोगना, मर्केन्टाइल ला, एस0 चन्द्र एण्ड कम्पनी, नई दिल्ली।
2. एन0डी0 कपूर, कम्पनी लॉ, सुल्तान चन्द्र एण्ड सन्स, नई दिल्ली।
3. एस0सी0 अग्रवाल, कम्पनी लॉ, धनपत राय पब्लिकेशन, नई दिल्ली।

इकाई 14 सभायें, कार्यवृत्त, प्रस्ताव तथा मसौदा

इकाई की रूपरेखा

14.1 प्रस्तावना
14.2 कम्पनी की सभायें
14.3 वैध सभा के आवश्यक लक्षण
14.4 सभा के प्रकार
14.4.1 वैधानिक सभा
14.4.2 वार्षिक साधारण सभा
14.4.3 असाधारण सामान्य सभा
14.4.4 वर्ग सभा
14.5 प्रस्ताव
14.5.1 साधारण प्रस्ताव
14.5.2 विशेष प्रस्ताव
14.5.3 विशेष सूचना वाले प्रस्ताव
14.6 सारांश
14.7 शब्दावली
14.8 बोध प्रश्न
14.9 बोध प्रश्नों के उत्तर
14.10 स्वपरख प्रश्न
14.11 सन्दर्भ पुस्तकें

उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् आप इस योग्य हो सकेंगे किः–

- कम्पनी सभा के विभिन्न प्रकारों का वर्णन कर सकें।
- प्रस्ताव के प्रकार तथा उनके पारित होने के समय का वर्णन कर सकें।
- मसौदा (मिनट्स), गणपूर्ति तथा कार्यसूची (एजेण्डा) को परिभाषित कर सकें।
- वैध सभा की आवश्यकताओं का विवेचन कर सकें।

14.1 प्रस्तावना

सभा से आशय दो या दो से अधिक व्यक्तियों का उसी निश्चित स्थान तथा समय पर चर्चा के लिये एकत्रित होने से है। कम्पनी की दशा में, कुछ अपवादात्मक मामलों में, वैध सभा के लिये एक व्यक्ति पर्याप्त है। कम्पनी की सभा, चाहे वह सदस्यों की हो या लेनदारों, निदेशकों, ऋणपत्रधारियों, अंशदायी की हो, कम्पनी अधिनियम 1956 के प्रावधानों के अनुसार संचालित होनी चाहिये। सभा में निर्णय, संस्थान के संविधान में दिये गये नियमों के अनुसार (जैसे 1/3 या 1/2 या 3/4) बहुमत से लिये जाते हैं। इस इकाई में आप कम्पनी की सभायें, उनके प्रकार, वैध सभा के आवश्यक तत्व, प्रस्ताव तथा प्रस्ताव के विभिन्न प्रकारों, मसौदा (मिनट्स),

कार्यसूची (एजेण्डा) तथा गणपूर्ति का अध्ययन करेंगे।

14.2 कम्पनी की सभायें

जैसे कि ऊपर वर्णन किया गया है कि सभा से आशय किसी विधिपूर्ण व्यवसाय हेतु चर्चा के लिये व्यक्तियों के एकत्रित होने से है। कम्पनी की सभाओं में अंशधारी, ऋणपत्रधारी, लेनदार, निदेशक, अंशदायी की सभा हो सकती है। इसका वर्गीकरण निम्न प्रकार कर सकते हैं–

(i) **अंशधारियों की सभा :** इस सभा को निम्न प्रकार उपविभाजित कर सकते हैं–
क. वैधानिक सभा ख. वार्षिक साधारण सभा ग. असाधारण सामान्य सभा
घ. वर्ग सभा जैसे पूर्वाधिकार अंशधारियों की सभा।

(ii) **लेनदारों तथा ऋणपत्रधारियों की सभा** : यह दो प्रकार की होती है।
- क. कम्पनी के समापन को छोड़कर, अन्य उद्देश्य के लिये कम्पनी के जीवनकाल में सभा।
- ख. समापन के समय सभा

(iii) **समापन के समय अंशदायी की सभा**

(iv) **निदेशकों की सभा**
- क. मण्डल (बोर्ड) की सभा
- ख. मण्डल (बोर्ड) की समितियों की सभा

14.3 वैध सभा के आवश्यक लक्षण

कम्पनी अधिनियम की धारा 171 से 186 के अनुसार, कम्पनी की वैध सभा के आवश्यक तत्व निम्न हैंः–

1. उचित अधिकार
2. सभा की नोटिस तथा एजेण्डा
3. सभा की गणपूर्ति (कोरम)
4. सभा का अध्यक्ष
5. प्रतिपुरुष (Proxy)
6. मतदान
7. सभा के मिनट्स

आइये इन्हें एक–एक कर समझते हैं–

1. **उचित अधिकार :** उचित अधिकार से आशय किसी कार्य को करने के लिये पूर्ण शक्ति से है। सभाओं को बुलाने का उचित प्राधिकार निदेशक मण्डल, अंशधारियों तथा केन्द्र सरकार/ट्रिब्युनल के पास होता है। कुछ परिस्थितियों में अंशधारी, असाधारण सभा बुला सकते हैं। ऐसी सभाओं को निदेशकों द्वारा, अंशधारियों की मॉग पर बुलाया जाता है। किसी सदस्य के वाद पर कम्पनी ला बोर्ड (CLB), वार्षिक साधारण सभा तथा आधारण सभा को बुला सकती है। सदस्यों से आवेदन प्राप्ति के 21 दिनों के अन्दर, बोर्ड को सभायें हो जानी चाहिए।

2. **सभा का मसौदा तथा कार्यसूची :** कम्पनी के अन्तर्नियमों में उल्लिखित नियमों में अतिरिक्त कम्पनी अधिनियम 1956 की धारा 53 166, तथा 171 से 173 एवं 176(2)

में नोटिस से संबंधित सामान्य नियम दिये गये हैं–
सभा की नोटिस से संबंधित सामान्य नियम निम्न है:–

1. नोटिस में सभा के स्थान तिथि तथा सभा का स्पष्ट उल्लेख होना चाहिये।
2. इसमें व्यवसाय के स्वभाव जैसे सभा में चर्चा होने वाले तथ्यों, का उल्लेख होने चाहिये।
3. इसे व्यक्तिगत रूप से या डाक द्वारा भेजना चाहिये।
4. इसे कम्पनी के उन सभी सदस्यों को भेजा जाता है, जिनका नाम सदस्यों के रजिस्टर में दिया गया है। यह ध्यान देने योग्य है कि स्थगित सभा के लिये नोटिस आवश्यक नही है।

कम्पनी अधिनियम 1956 के अनुसार नोटिस के निम्न है:–

(क) **नोटिस का अवधि :** इसका आशय सभा से कितने दिन पूर्व सदस्यों को सूचना भेजने से है।
किसी प्रकार की सभाओं के लिये 21 दिन की नोटिस का प्रावधान है। वार्षिक साधारण सभा के लिये, सभी सदस्य के सहमत होने पर तथा अन्य सभाओं के लिये, कुल दत्त पूँजी या मताधिकार या 95 प्रतिशत सदस्यो के सहमत होने पर, लघ अवधि का सूचना (नोटिस) पर्याप्त होगी (धारा 171) 21 दिनों की संख्या की गणना मेंनोटिस जारी होने वाला दिन, डाक यात्रा के 48 घंटे तथा सभा वाले दिन को नही जोड़ा जायेगा। (धारा 53)

(ख) **सामाचार पत्र में नोटिस का प्रकाशन :** समाचार पत्र में नोटिस के प्रकाशन की दशा में, 21 दिन की गणना, प्रकाशन विज्ञापित होने की तिथि से की जायेगी। (धारा 53(3)

(ग) **अंशों के संयुक्त धारकों को नोटिस :** यह तब पूर्ण मानी जायेगी, जब नोटिस, संयुक्त धारकों में से रजिस्टर में पहले लिखे नाम को, पहुँच जाय। (धारा 53(4)

(ग) **लघु सूचना का प्रभाव :** ऐसी सभा का कोई प्रस्ताव तब तक प्रभावी नही होगा, जब तक कि उसे ए0जी0एम0 की दशा में अंशधारियों द्वारा जिनके पास 95 प्रतिशत मताधिकार या दत्त पूँजी हो संशोधित न किया जाय। धारा 25 की कम्पनियों की सभा के लिये न्यूनतम 14 दिन की लिखित सूचना आवश्यक है।

(घ) **नोटिस के पक्षकार :** धारा 172 कें अनुसार नोटिस– (i) भारत में पंजीकृत पते वाले प्रत्येक व्यक्ति को (ii) मृत सदस्यों के विधिक उत्तराधिकारियों को (iii) दिवालिया सदस्य की दशा में सरकारी अधिकारी (iv) कम्पनी में अंकेक्षक को, दी जानी चाहिये। यदि इसमें कोई भी त्रुटि होती है या सूचना नही प्राप्त होती है, तो सभा अवैध होगी। [धारा 172(3)]

(च) **सूचना का ढांचा :** नोटिस में निम्न होना चाहिये–

(i) **स्थान :** वार्षिक साधारण सभा का आयोजन पंजीकृत कार्यालय में या उसी शहर, कस्बा, या गॉव में, जहाँ पंजीकृत कार्यालय स्थित है।

(ii) **तिथि** : वार्षिक साधारण सभा, (अन्य प्रकार की सभाओं को छोड़कर) सार्वजनिक अवकाश वाले दिन नही हो सकती है।

(iii) **समय** : मात्र कार्यशील घंटों में (परन्तु कार्यशील घंटों के अतिरिक्त जारी) में हो सकता है।

(iv) **प्रतिपुरुष (Proxy) :** सदस्य अपने प्रतिपुरुष को नियुक्त कर सकता है। धारा 176(2)

(v) **कार्य सूची (एजेण्डा)** : नोटिस में सभा के एजेण्डा का उल्लेख होना चाहिये। एजेण्डा से आशय सभा में चर्चा होने वाले तथ्यों से है। एजेण्डा का प्रथम बिन्दु हमेशा पिछली सभा के मसौदा (मिनट्स) अनुमोदन होता है। किसी विशेष तथ्य से संबंधित वर्णनात्मक विवरण, (जिसमें सभी महत्वपूर्ण तथ्य उल्लिखित हो) को नोटिस के साथ संलग्न करना चाहिये। निम्न प्रपत्रों को भी नोटिस के साथ संलग्न करना चाहिये–

क. **वार्षिक साधारण सभा (ए0जी0एम0)** : लेखों के अंकेक्षित वित्तीय विवरण, निदेशकों तथा अंकेक्षकों के प्रतिवेदन (रिपोर्ट) तथा प्राक्सी प्रपत्र।

ख. **वैधानिक सभा** : वैधानिक रिपोर्ट तथा प्राक्सी प्रपत्र।

ग. **असाधारण सामान्य सभा : वर्णात्मक विवरण तथा प्रतिपुरुष (प्राक्सी) प्रपत्र :**

कई बार एजेण्डा में अन्तिम बिन्दु में सभा के अध्यक्ष की अनुमति से 'कोई अन्य मामला या व्यवहार'' की जोड़ा जाता है। इन शब्दों का अर्थ यह है कि अध्यक्ष द्वारा किसी मामले को अगली सभा के एजेण्डा में भेजने से है। एजेण्डा का अन्तिम बिन्दु 'धन्यवाद' होता है।

3. **सभा की गणपूर्ति (कोरम)** : गणपूर्ति से आशय, उस न्यूनतम सदस्य संख्या से है जिसका सभा में उपस्थित रहना, विधिक प्रावधानों के अनुसार आवश्यक है।

साधारण सभा के लिये गणपूर्ति कोरम का उल्लेख कम्पनी के पार्षद अन्तर्नियम में होता है। पार्षद अन्तर्नियम में ऐसे प्रावधान के न होने पर धारा 174के अनुसार लोक कम्पनी की दशा 5 सदस्य तथा निजी कम्पनी की दशा में 2 सदस्यों का उपस्थित होना गणपूर्ति माना जायेगा। अन्तर्नियमों में इससे अधिक कोरम का प्रावधान किया जा सकता है, परन्तु वह 5 या 2 से कम नही होना चाहिये।

गणपूर्ति मान लेना : सामान्यतः कोरम का हमेशा पूर्ण मान लिया जाता है जब तक कि कोरम के विषय में सभा में या रिकार्ड में प्रश्न न हुआ हो कि कोरम तथ्य रूप में नही है।

कोरम कब होना चाहिये : इस बिन्दु पर अधिनियम मौन है। परन्तु नियम 49(1) के तालिका 'अ' (ए) के अनुसार ''सभा में तब तक कोई कार्यवाही नही होगी जब तक कि सभा शुरू होने पर सदस्यों की गणपूर्ति (कोरम) उपस्थित न हो।'' इसका अर्थ है कि कोरम की आवश्यकता सभा के आरंभ में होती है, पूरी सभा के दौरान नही। परन्तु अंश पूँजी वाली लोक कम्पनी को इससे छूट दी गयी है। अंग्रेजी कम्पनी अधिनियम तथा भारतीय संसद के अनुसार पूर्ण सभा के दौरान गणपूर्ति

(कोरम) आवश्यक है।

कोरम न होने पर विकल्प : जब तक अन्तर्नियम में अन्य प्रावधान न हो, तो ऐसी स्थिति में धारा 174 के अन्तर्गत निम्न विकल्प उपलब्ध हैं–

(i) यदि सभा प्रारम्भ होने के आधे घंटे के अन्दर गणपूर्ति (कोरम) पूर्ण नही होती है, तो सभा को अगले सप्ताह, उसी समय तथा स्थान या कोई ऐसा दिन, समय तथा स्थान, जो निदेशक निश्चित करें, तक के लिए स्थगित कर दी जायेगी।

(ii) यदि सभा का आयोजन मॉग पर किया जाता है, तो सभा प्रारम्भ होने के आधे घटे के अन्दर गणपूर्ति (कोरम) पूर्ण न होने पर सभा निर्धारित कर दी जायेगी।

(iii) (i) मामले में, यदि स्थगित सभा में भी सभा प्रारम्भ होने के आधे घंटे के अन्दर गणपूर्ति (कोरम) पूर्ण नही हो पाता है, तो उपस्थित सदस्यों को ही गणपूर्ति (कोरम) मान लिया जायेगा। अतः स्थगित सभा में कोरम की आवश्यकता नही होती है।

एक व्यक्ति की सभा : एक व्यक्ति गणपूर्ति (कोरम) पूर्ण नही कर सकता है, परन्तु वर्ग सभा की दशा में, मात्र एक व्यक्ति उस वर्ग के सभी अंशों को धारित कर सकता है या वहाँ एक ही लेनदार या ऋणपत्रधारी हो, गणपूर्ति (कोरम) पूर्ण करेगा। धारा 167 या 186 के अनुसार जब कम्पनी विधि प्रमण्डल (CLB) के आदेश पर वार्षिक साधारण सभा या असाधारण सभा होती है, तो वह निर्देश दे सकती है कि ऐसी सभा के लिये एक व्यक्ति की व्यक्तिगत या प्रतिपुरुष के रूप में उपस्थिति गणपूर्ति (कोरम) पूर्ण करेगी।

गणपूर्ति (कोरम) से संबंधित सामान्य नियम :

(i) अन्तर्नियम, सभा की गणपूर्ति (कोरम) के लिए प्राक्सी को शामिल नही कर सकते हैं।

(ii) बिना मताधिकार वाले पूर्वाधिकार अंशधारी तथा समता अंशधारियों को कोरम की गणना में सम्मिलित नही किया जाता है। पूर्वाधिकार अंशधारियों को गणना में तभी शामिल किया जायेगा यदि सभा में किसी बिन्दु से वे प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित हो रहे हैं।

(iii) सभा की गणपूर्ति (कोरम) के लिये अंशों के संयुक्त धारकों को एक सदस्य माना जायेगा।

(iv) सभा में एक सदस्य, यदि दो हैसियत से सदस्य के रूप में तथा न्यासी के रूप में, सम्मिलित होता है, तो कोरम (गणपूर्ति) की गणना में उसे, दो सदस्यों की उपस्थिति मानी जायेगी।

(v) यदि कोई व्यक्ति जो अन्य कम्पनी में सदस्य है, कम्पनी ने प्रस्ताव द्वारा अधिकृत किया है, तो ऐसे व्यक्ति की गणना कोरम को भी जायेगी। यदि एक ही व्यक्ति दो या अधिक कम्पनियों का प्रतिनिधित्व करता है, जो अन्य कम्पनी का सदस्य है, कोरम के लिये ऐसे व्यक्ति को प्रत्येक कम्पनी के लिये पृथक

रूप से एक व्यक्ति माना जायेगा अर्थात एक व्यक्ति को गणना दो या अधिक व्यक्ति माना जायेगा, जैसी स्थिति हो (धारा 187)

(vi) जहॉ भारत के राष्ट्रपति या राज्य के राज्यपाल कम्पनी के अंशों को धारित करते हैं, तथा उस कम्पनी की सभा के लिये किसी व्यक्ति की प्रतिनिधि नियुक्त करते हैं, तो ऐसे व्यक्ति की गणपूर्ति (कोरम) में गणना की जायेगी। (धारा 187ए)

(vi) जहाँ कम्पनी के कुल सदस्यों की संख्या, अन्तर्नियम द्वारा निर्धारित कोरम (गणपूर्ति) से कम हो गयी है तो कम्पनी के सभी सदस्यों की सभा में उपस्थिति पर गणपूर्ति (कोरम) में उपस्थिति पर गणपूर्ति (कोरम) पूर्ण माना जायेगा।

4. **अध्यक्ष (Chairman) :** धारा 175 के अनुसार–

(i) यदि कम्पनी के अन्तर्नियम अन्य प्रावधान नही है, तो सभा के अध्यक्ष का चुनाव सभा के अध्यक्ष का चुनाव सभा में उपस्थित सदस्यों, अपने में ही, हाथ उठाकर किया जायेगा।

(ii) यदि अध्यक्ष के चुनाव को मत पत्र से कराने की मॉग की गयी है तो अध्यक्ष की नियुक्ति प्रत्येक प्रस्तावित सदस्य का हाथ उठाकर की जायेगी।

(iii) अध्यक्ष की नियुक्ति, अन्तर्नियम में दिये गये नियम के अनुसार की जाती है। परन्तु यदि इस विषय में अन्तर्नियम मौन है तो तालिका 'अ' के नियम संख्या 50, 51 तथा 52 लागू होंगे, जो निम्न हैः–

नियम संख्या 50 : कम्पनी की प्रत्येक साधारण सभा की अध्यक्षता, बोर्ड का अध्यक्ष करेगा।

नियम 51 : यदि ऐसा कोई अध्यक्ष नही है या सभा का अध्यक्ष नियुक्त होने में 15 मिनट के अन्दर वह उपस्थित नही होता है या वह अध्यक्ष बनने से अनिच्छा व्यक्त करता है, तो निदेशक अपने में से, किसी एक को अध्यक्ष चुन लेंगे।

नियम 52 : यदि किसी सभा में कोई भी निदेशक अध्यक्ष बनने का इच्छुक नही है या अध्यक्ष नियुक्त होने के 15 मिनट के अन्दर उपस्थित नही होता है, तो उपस्थित सदस्य में से किसी एक को अध्यक्ष चुन लिया जायेगा।

सभा के अध्यक्ष की शक्तियाँ तथा कर्तव्य :

अध्यक्ष की शक्तियॉ : अध्यक्ष की निम्न शक्तिया हैं–

(i) सभा में अनुशासन तथा शान्ति व्यवस्था बनाये रखना, उदा0 अमर्यादित भाषा या आचरण के उपयोग पर रोक।

(ii) किसी सदस्य द्वारा प्रश्न पूछने पर उसका विधिवत व बिन्दुवार उत्तर देना।

(iii) वक्ताओं की प्राथमिकताओं का निर्धारण।

(iv) गणपूर्ति (कोरम) न होने की स्थिति में सभा को स्थगित करना।

(v) किसी मामले के मतदान में दो पक्षों के समान मत होने पर अपने निर्णय के

मत के उपयोग करनो अधिकार है। Casting मत अध्यक्ष का द्वितीय मत होता है, जो उसके सदस्य के रूप में प्रथम मत के अतिरिक्त होता है।

(vi) मतदान का परिणाम घोषित करना।

(vii) वक्ताओं के बोलने का क्रम निर्धारित करना

अध्यक्ष के कर्तव्य : अध्यक्ष के निम्न कर्तव्य होते हैं–

(i) यह देखना कि, सभा का संचालन, उचित तथा विधिपूर्ण है।

(ii) यह देखना कि व्यवसाय का संचालन नियमों के अनुसार हो।

(iii) सभा को बोलने का समान अवसर देना।

(iv) सभा में उठने वाले मुद्दों को एजेण्डा के अनुसार लेना।

5. **(प्राक्सी) प्रतिपुरुष** : (प्राक्सी) प्रतिपुरुष वह व्यक्ति है जो किसी सदस्य का मतदान करने के लिये, प्रतिनिधि होता है। 'प्राक्सी' शब्द का प्रयोग पत्र के लिये किया जाता है जिसके द्वारा किसी व्यक्ति को प्राक्सी नियुक्त किया जाता है। प्रतिपुरुष (प्राक्सी) से संबंधित निम्न प्रावधान है–

(i) प्राक्सी को नियुक्तकर्ता या उसके अधिकृत अधिवक्ता (एटार्नी) द्वारा हस्ताक्षरित लिखित प्रपत्र, जिसे अनुसूची IX को निर्धारित फार्म।

(ii) प्रतिपुरुष (प्राक्सी) प्रपत्र को सभा के 48 घंटे पूर्व कम्पनी में जमा करना आवश्यक होता है।

(iii) बिना अंशपूँजी वाले सदस्य को प्राक्सी नियुक्त करने का अधिकार नही होता है।

(iv) निजी कम्पनी का सदस्य, समान अवसर में भाग लेने के लिये एक से अधिक प्राक्सी को नियुक्त नही कर सकता है।

(v) प्राक्सी को मतदान को छोड़कर अन्य प्रकार से मत देने का अधिकार नही होता है। परन्तु यदि अन्तर्नियम अनुमति देता है तो प्राक्सी हाथ उठाकर भी मतदान कर सकता है।

(vi) प्रत्येक सभा के लिये पृथक प्राक्सी आवश्यक होता है।

(vii) सभा में नोटिस में इसका स्पष्ट उल्लेख होना चाहिये कि जो सदस्य सभा में भाग लेने तथा मत देने के अधिकार हैं, प्राक्सी को नियुक्त कर सकते हैं।

(viii) प्राक्सी से संबंधित अधिनियम के प्रावधानों का अनुपालन न होने पर, प्रतयेक दोषी अधिकारी, 5000/– रू0 तक के दण्ड का भागी होगा।

(ix) प्राक्सी को सभा में बोलने का अधिकार नही होता है।

संयुक्त धारकों द्वारा प्राक्सी : तालिका 'अ' के नियम 57 के अनुसार प्राक्सी की नियुक्ति के लिये संयुक्त धारकों में से प्रथम धारक वैध होगा। प्राक्सी प्रपत्र को, सभी संयुक्त धारकों द्वारा या उनमें से कोई एक या दो, जो अधिकृत है, द्वारा भरा जाना चाहिये।

प्राक्सी प्रपत्र का निरीक्षण : सदस्य द्वारा कम्पनी को 3 दिन पूर्व लिखित

नोटिस (सूचना) देकर प्राक्सी प्रपत्र का निरीक्षण किया जा सकता है। इसका सभा के प्रारम्भ होने में 24 घटे पूर्व से सभा के अन्त तक निरीक्षण किया जा सकता है।

प्राक्सी को हटाना : यदि अन्तर्नियम अनुमति दे, तो सदस्य की मृत्यु या पागलपन पर प्राक्सी को हटाया जा सकता है। यदि अंशधारी स्वयं सभा में भाग लेता है तो प्राक्सी स्वतः हट जाता है। प्राक्सी की नियुक्ति के लिये सदस्यों को आमंत्रित नही किया जा सकता है। मूल सभा के लिये नियुक्त प्राक्सी स्थागित सभा के लिये भी वैध होता है। स्थगित सभा के लिये भी प्राक्सी की नियुक्ति कहा जा सकती है।

6. **मतदान** : अधिनियम के प्रावधानों के अन्तर्गत, पार्षद अन्तर्नियम साधारण सभा के मतदान के नियम तथा विधि निर्धारित करते हैं। साधारण सभा के प्रत्येक प्रस्ताव में, मतदान में प्रत्येक मताधिकार वाले सदस्य, जिसका नाम सदस्यों में रजिस्टर में अभिलिखित है को मत देने का अधिकार उसके द्वारा धारित अंशों के याचना के भुगतान सके अनुपात में होता है, [धारा 87(1)]

पूर्वाधिकार अंशधारियों को निम्न दो मामले को छोड़कर अन्य मामलों में मत देने का अधिकार नही होता है। [धारा 77(2)]

(i) जब प्रस्ताव से प्रत्यक्ष रूप में करने के लिये उनके अधिकार से संबंधित हो।

(ii) जब अंशों पर लाभॉश (अघोषित या घोषित) का भुगतान न किया गया हो।

जहाँ किसी पूर्वाधिकार अंशधारी को उपरोक्त प्रावधानों के अनुसार किसी प्रस्ताव पर मत देने का अधिकार होता है, तो मताधिकार का वही अनुपालन होगा, जो कुल अंश पूँजी में उसके द्वारा पूर्वाधिकार अंशों के चुकायी गयी पूँजी से कुल दन्त क्षमता अंश पूंजी का है। ये प्रावधान निजी कम्पनी पर लाू नही होते हैं, क्योंकि निजी कम्पनी बिना अनुपात केमताधिकार वाले पूर्वाधिकार अंश जारी कर सकती है। [धारा 90(2)]

संयुक्त धारकों की स्थिति में वह व्यक्ति जिसका नाम रजिस्टर में पहले लिखा है स्वीकार्य होगा। दिवालिया अंशधारी को मतदान से मना करने का अधिकार होता है यदि उसका नाम सदस्यों के रजिस्टर में लिखा है।

लोक कम्पनी के सदस्य का अन्य राशि बकाया होने या याचना के भुगतान न होने के आधार को छोड़कर, अन्तर्नियम द्वारा मतदान पर प्रतिबंध लगाना व्यर्थ होगा। [धारा 181, 182]

मतदान की विधि : मतदान की निम्न विधियाँ हैं–

(i) **आवाज द्वारा** : सदस्यों द्वारा ताली बजाकर या आवाज द्वारा किसी प्रस्ताव को पारित या गैर पारित किया जा सकता है।

(ii) **ध्वनि द्वारा मतदान** : इसमें कुछ 'हां' कहते हैं तथा कुछ 'नहीं' अध्यक्ष दोनों पक्षों को सुनकर निर्णय देता है।

(iii) **विभाजन द्वारा** : इसमें सदस्य दो भागों में बॉटे जाते हैं एक पक्ष में तथा दूसरा विपक्ष में। अध्यक्ष दोनों पक्षों की गणना के बाद अपना निर्णय देता है।

(iv) **हाथ दिखाकर** : इसमें बारी–बारी से 'हाँ' तथा 'नही' के लिये सदस्यों द्वारा

हाथ उठाया जाता है।

(v) **मतदान द्वारा** : इसमें सदस्य मत पत्र पर अभिलिखित मतपत्र पर करके उसे बक्से में डाल देते हैं यह गुप्त मतदान पद्धति है क्योंकि इसमें यह पता नही चलता है कि मतदाता को मत पक्ष में दिया या विपक्ष में।

(vi) **मतगणना** : इसमें मत सदस्य द्वारा धारित अंशों की संख्या में आधार पर दिया जाता है। जैसे एक सदस्य के पास 10 अंश है तो उसे मत देने का अधिकार होता है। धारा 177 के अनुसार साधारण सभा में कोई भी मतदान प्रस्ताव के लिये मतदान हाथ दिखाकर किया जायेगा, जब तक कि Poll भाग–I की गयी है। मिनट्स में अध्यक्ष को अपना निर्णय अभिलिखित करना चाहिये। पक्ष तथा विपक्ष में पड़े भर्ती का प्रूफ लेना आवश्यक नही होता है।

मतगणना की मांग कौन कर सकता है : धारा 179 के अनुसार निम्न भी मॉग पर मतगणना का आदेश हो सकता है–

मतदान, डाक द्वारा किया जाता है। डाक द्वारा मतदान में इलेक्ट्रानिक मतदान शामिल होता है। डाक द्वारा मतदान की दशा में कम्पनी, पंजीकृत डाक द्वारा या एक स्थानीय तथा अंग्रेजी समाचार पत्र में विज्ञापन प्रकाशित कर नोटिस (सूचना) देंती है। इस नोटिस के साथ पहले से भुगतान किया हुआ लिफाफा भी भेजा जाता है। इन प्रावधानों के अनुपालन न होने पर दोषी अधिकारी 50,000 रू0 तक के दण्ड के भागी होंगे।

7. **कार्यवृत्त (मिनट्स)** : सभा की कार्यवाहियों का अभिलेख (मिनट्स) (कार्यवृत्त) कहलाता है।

मिनट्स : धारा 193 के अनुसार प्रत्येक कम्पनी को प्रत्येक साधारण सभा के होने के 30 दिन के अन्दर उसके मिनट्स कार्यवृत रखने आवश्यक है। इस संबंध में निम्न प्रावधान हैः–

(i) मिनट्स पुस्तक का प्रत्येक पृष्ठ पर क्रम से संख्या मुद्रित होनी चाहिये तथा उसमें बीच में कोई अतिरिक्त पृष्ठ नही लगाया जायेगा। प्रत्येक पृष्ठ हस्ताक्षरित होना चाहिये।

(ii) मिनट्स पुस्तक को कोई संशोधन होने पर मिनट्स पुस्तक पर हस्ताक्षर करने वाले व्यक्ति के हस्ताक्षर होने चाहिये।

(iii) मिनट्स पुस्तक के प्रत्येक पृष्ठ के अन्त में, जिसके सभा की कार्यवाही का विवरण हो विवरण है, अध्यक्ष द्वारा, सभा के 30 दिन के अन्दर हस्ताक्षरित होनी चाहिये।

(iv) मिनट्स का अनुमोदन, एजेण्डा का बिन्दु नही होता है।

(v) कम्पनी के अध्यक्ष को किसी मैटर को मिनट्स पुस्तक से निकालने का अधिकार है, जो उसकी राय में कम्पनी के हित में असंसदीय या अमर्यादित या महत्वपूर्ण नही है।

(vi) मिनट्स पुस्तक की कम्पनी के पंजीकृत कार्यालय में रखा जायेगा तथा उसे प्रतिदिन न्यूनतम 2 घंटे बिना शुल्क निरीक्षण के लिये खोला जायेगा। सदस्य

भुगतान करके मिनट्स की प्रति प्राप्त कर सकते हैं।

14.4 सभाओं के प्रकार

अंशाधारियों का सभा : अंशधारियों की सभा चार प्रकार की होती है–

1. वैधानिक सभा 2. वार्षिक साधारण सभा 3. असाधारण सामान्य सभा 4. वर्ग सभा।

14.4.1 वैधानिक सभा

वैधानिक सभा, अंशधारियों की प्रथम सभा होती है। यह कम्पनी में जीवनकाल में एक बार होती है। इस सभा का उद्देश्य कम्पनी की स्थिति से सदस्यों को तथा कम्पनी के निर्माण तथा प्रवर्तन से सदस्यों को अवगत कराना होता है।

(i) **समय** : धारा 165 के अनुसार वैधानिक सभा (i) प्रत्येक अंशों द्वारा सीमित तथा (ii) प्रत्येक गारण्टी द्वारा सीमित, जिसके पास अंश पूजी हो, कम्पनी द्वारा व्यापार प्रारम्भ करने में प्रमाण पत्र में प्राप्त होने के न्यूनतम 1 माह तथा अधिकतम 6 माह के अन्दर हो जानी चाहिये।

निजी कम्पनी को विधिक सभा बुलाना आवश्यक नहीं है। इसी प्रकार ऐसी लोक कम्पनी जिसके पास अंश पूंजी नही है, या जिसके सदस्यों का दायित्व असीमित है या गारण्टी द्वारा सीमित लोक कम्पनी जिसके पास अंशपूंजी नही है, को सभा बुलाना आवश्यक नही है।

(ii) **नोटिस (सूचना)** : धारा 171 के अनुसार वैधानिक सभा की सूचना, सभा के 21 दिन पूर्व सदस्यों को देनी आवश्यक है। इससे कम अवधि की नोटिस दी जा सकती है, यदि 90 प्रतिशत दत्त अंश पूंजी धारित करने वाले अंशधारियों की सहमति हो। यह सभा रविवार को भी की जा सकती है। कम्पनी के प्रत्येक सदस्य, अंकेक्षक, सरकारी अधिकारी तथा मृत सदस्य के विधिक उत्तराधिकारियों को नोटिस देना आवश्यक होता है।

(iii) **अधिकार** : धारा 165 के अनुसार सदस्य इस सभा में कम्पनी के निर्माण तथा वैधानिक प्रतिवेदन पर चर्चा कर सकते हैं। वैधानिक सभा को स्थगित भी किया जा सकता है।

सभा में सदस्यों की सूची, जिसमें सदस्यों के नाम, पता, पेशा तथा धारित अंशों की संख्या हो, को प्रस्तुत करना आवश्यक है। यह सूची सभा के अन्त तक खुली रहती है।

(iv) **वैधानिक प्रतिवेदन** : वैधानिक प्रतिवेदन की सभा की नोटिस के साथ भेजना चाहिये। इस प्रतिवेदन की प्रति रजिस्ट्रार को भी भेजना चाहिये। वैधानिक प्रतिवेदन की विषय–सामग्री निम्न है:–

क. आवंटित अंशों की संस्था, जो पूर्ण या अंशतः दत्त में विभाजित हो।

ख. कुल आवंटित अंशों से कम्पनी को प्राप्त कुल रोकड़ की राशि प्राप्ति

ग. प्रतिवेदन के 7 दिन के अन्दर प्राप्ति व व्यय का संक्षिप्त विवरण तथा रोकड़ शेष। इस विवरण में कम्पनी की प्राप्तियो को अंशो, ऋण पत्रों व अन्य श्रोतों से प्राप्त प्राप्तियों में विभाजित शीर्षकों में दिखाया जाना आवश्यक है। इसी प्रकार प्रारम्भिक व्ययों को अलग खाते में दिखाना

आवश्यक है।

घ. कम्पनी प्रवर्तन निदेशकों, अंकेक्षकों, प्रबंध निदेशक, या प्रबंधक तथा सचिव के नाम, पते तथा पेशा एवं यदि कोई परिवर्तन हुआ हो?

ड. सभा में अनुमोदन के लिये प्रस्तुत की जाने वाली कोई संविदा यदि हो।

च. किसी अभिगोपन संविदा का किस सीमा तक पालन नही किया गया तथा उसके कारण।

छ. कम्पनी के निदेशकों तथा प्रबंध निदेशक या प्रबंधकों के याचना पर बकाया का विवरण–

ज. कम्पनी के अंशों या ऋण पत्रों के विक्रय में निदेशकों तथा प्रबंधकों को भुगतान किया गया कोई कमीशन या दलाली।

वैधानिक प्रतिवेदन रजिस्ट्रार के यहाँ दाखिल करने में या वैधानिक सभा बुलाने में कम्पनी द्वारा असफल होनें पर कम्पनी के प्रत्येक निदेशक तथा अन्य अधिकारी जो इसके लिये उत्तरदायी है, 5000/– रू0 तक के जुर्माने से दण्डनीय होंगे। [धारा 165(9)] जिस तिथि को सभा होनी थी, उसके 14 दिन के बाद सदस्य या रजिस्ट्रार द्वारा सभा न होने की याचिका दाखिल करने पर न्यायालय कम्पनी के समापन का आदेश दे देगा।

14.4.2 वार्षिक साधारण सभा

प्रत्येक कम्पनी को प्रत्येक वर्ष वार्षिक साधारण सभा का आयोजन आवश्यक है। [धारा 166(1)] इसे साधारण सामान्य सभा भी कहा जाता है तथा लोक कम्पनी की इस सभा में निम्न मामले रखे जाते हैं– [धारा 173(1)(s)]

(i) वार्षिक खातों, लाभ–हानि खाते, आर्थिक चिट्ठा तथा प्रबंध निदेशकों तथा अंकेक्षकों के प्रतिवेदन।

(ii) लाभांश की घोषणा।

(iii) अवकाश ग्रहण करने वाले निदेशकों के स्थान पर निदेशकों की नियुक्ति

(iv) अंकेक्षकों की नियुक्ति तथा उनके पारिश्रमिक का निर्धारण।

कार्यसूची में दिये गये कार्य के अतिरिक्त यदि साधारण सभा में कोई अन्य कार्य किया जाता है तो वे विशेष कार्य कहे जाते है। किसी अन्य सभा से सभी कार्य विशेष माने जाते हैं। सामान्य कार्य के लिये सामान्य प्रस्ताव तथा विशेष कार्य के लिये विशेष या सामान्य प्रस्ताव आवश्यक है जो अन्तर्नियम या अधिनियम में प्रावधान हो। अंकेक्षकों की नियुक्ति के लिये विशेष प्रस्ताव आवश्यक है, (जबकि यह सामान्य कार्य है) यदि उसकी 25 प्रतिशत प्रार्थित पूँजी लोक वित्तीय संस्थाओं/बीमा कम्पनी/राष्ट्रीयकृत बैंक/राज्य या केन्द्र सरकार द्वारा धारित किया जाता है। निजी कम्पनी अपने अन्तर्नियम में सामान्य कार्यों के लिये अपने प्रावधान बना सकती है।

निर्धारित समय में वार्षिक साधारण सभा बुलाने में त्रुटि होना : यदि कम्पनी करती है तो कम्पनी लॉ बोर्ड सभा (AGM) बुलाने के निर्देश दे सकता है। कम्पनी तथा उसका प्रत्येक दोषी अधिकारी 50,000 रू तक के जुर्माने से दण्डनीय होगा तथा

इसके बाद त्रुटि जारी रहने पर 2500/– रू0 प्रतिदिन (जब तक त्रुटि जारी रहती है) जुर्माने से दण्डनीय होंगे।

प्रत्येक निजी तथा लोक कम्पनी की वार्षिक साधारण सभा हेतु निम्न विधिक प्रावधान है–

(i) अवधि : कम्पनी की पहली वार्षिक साधारण सभा, कम्पनी की निगमन की तिथि के 18 माह के भीतर बुलाई जानी चाहिए तथा यदि उक्त अवधि के भीतर यह साधारण सभा आयोजित कर ली जाती है, तो निगमन के वर्ष में अथवा उसके बाद वाले वर्ष में कम्पनी के लिए यह सभा बुलानी आवश्यक नही होती।

(ii) अगली सभा : किन्हीं दो वार्षिक साधारण सभाओं के बीच 15 महीनों से अधिक का अन्तर नही होना चाहिए। कोई विशेष परिस्थिति होने पर, रजिस्ट्रार उपयुक्त अवधि को अधिक से अधिक तीन माह तक बढ़ा सकता है।

(iii) दिन तथा समय : कम्पनी की वार्षिक साधारण सभा किसी भी काम के दिन एवं काम के समय में कम्पनी के पंजीकृत कार्यालय में अथवा उस शहर में किसी अन्य स्थान पर आयोजित की जा सकती है जिस शहर में पंजीकृत कार्यालय स्थित है। इस प्रकार, कोई भी सभा सार्वजनिक छुट्टी के दिन आयोजित नही की जा सकती, जैसे 15 अगस्त, 2 अक्तूबर तथा 26 जनवरी को सभा नही बुलाई जा सकती। यदि वार्षिक साधारण सभा को बुलाने के सम्बन्ध में सूचना भेज दिये जाने के बाद केन्द्र सरकार किसी दिन को सार्वजनिक छुट्टी का दिन घोषित करती है, तो उस दिन को सार्वजनिक छुट्टी का दिन नही माना जाएगा तथा पूर्वनिर्धारित सूचना के अनुसार उस दिन वार्षिक साधारण सभा की जा सकती है।

(iv) नोटिस : कम्पनी के प्रत्येक शेयरधारी निदेशक तथा अंकेक्षकों को वार्षिक साधारण सभा की लिखित सूचना कम से कम 21 दिन पहले दी जानी चाहिए। मतदान का अधिकार रखने वाले सभी सदस्यों की सहमति से सूचना की उक्त अवधि को कम भी किया जा सकता है।

प्रत्येक सूचना के साथ निदेशक रिपोर्ट, अंकेक्षक रिपोर्ट, अंकेक्षित वार्षिक खाते की प्रति संलग्न होनी चाहिए।

निदेशकों का प्रतिवेदन : इसमें निम्न शामिल हैः–

(क) कम्पनी का तुलन–पत्र (वार्षिक खाते)

(ख) आर्थिक चिट्ठे में बोर्ड द्वारा प्रस्तावित संचय की राशि।

(ग) बोर्ड द्वारा अनुमोदित लाभाँश के रूप में भुगतान की जाने वाली राशि।

(घ) कम्पनी के आर्थिक चिट्ठे तथा प्रतिवेदन की तिथि के मध्य कम्पनी की वित्तीय स्थिति को प्रभावित करने वाला कोई महत्वपूर्ण परिवर्तन।

(ड.) ऊर्जा, तकनीक, संविलयन, विदेशी विनिमय आय का संरक्षण।

बोर्ड में निम्न परिवर्तनों पर भी विचार हो सकता है जो (i) कम्पनी के व्यवसाय के स्वभाव (ii) उसकी सहायक के व्यवसाय के स्वभाव के लिये हानिकारक न हो।

14.4.3 असाधारण सामान्य सभा

वार्षिक साधारण सभा तथा सॉविधिक सभा को छोड़कर सभी सामान्य सभायें, असाधारण सभा कहलाती है। (तालिका ए के वाक्य 47)। ऐसी सभा किसी भी समय बुलायी जा सकती है। यह सभा किसी विशेष कार्य को करने के लये बुलायी जाती है जिसे अगली वार्षिक सामान्य सभा तक नही टाला जा सकता है जैसे– पार्षद सीमानियम व अन्तर्नियम में परिवर्तन या ऋणपत्रों का निर्गमन असामान्य साधारण सभा कौन बुला सकता है–

निम्न व्यक्ति बुला सकते हैं–

1. निदेशक
2. माँग पर निदेशकों द्वारा
3. स्वयं मांग कर्ताओं द्वारा
4. कम्पनी लॉ बोर्ड द्वारा

1. **निदेशकों द्वारा** : निदेशक अपनी सभा में प्रस्ताव पारित कर असमान वार्षिक सभा बुला सकते हैं।

2. **मॉग पर निदेशकों द्वारा** : किसी मामले में कुल मताधिकार का 1/10 मताधिकार रखने वाले सदस्यों द्वारा बोर्ड को सभा बुलाने के लिये मॉग पत्र दे सकते हैं। बोर्ड वैध मॉगपत्र, जमा होने के 21 दिनों के अन्दर ऐसी सभा बुलाने के लिये बाध्य होता है। ऐसी सभा को बुलाने के लिये माँगपत्र दे सकते हैं। बोर्ड वैध मॉग पत्र, जमा होने के 21 दिनों के अन्दर ऐसी सभा बुलाने के लिये बाध्य होता है। ऐसी सभा को बुलाने के लिए बोर्ड को 21 दिन की सूचना होनी चाहिये।

3. **स्वयं मांगकर्ताओं द्वारा** : यदि ऐसी सभा को बुलाने में निदेशक असफल रहते हैं तो स्वयं मांगकर्ताओं द्वारा ऐसी सभा आहूत की जा सकती है। ऐसी सभा को मांग पत्र जमा होने के 3 माह के अन्दर आहूत करना आवश्यक होता है। (धारा 169) इस सभा के व्यय कम्पनी द्वारा भुगतान किया जायेगा।

4. **कम्पनी लॉ बोर्ड** : कम्पनी लॉ बोर्ड अपनी स्वयं या किसी निदेशक या सदस्य के आवेदन पत्र ई0जी0एम0 बुला सकती है। ऐसी सभाओं को सार्वजनिक अवकाश वाले दिन भी कम्पनी के पंजीकृत कार्यालय को छोड़कर किसी स्थान पर बुलाया जा सकता है।

14.4.4 वर्ग सभायें

वर्ग सभायें, किसी 'वर्ग के सदस्यों' के लिये बुलायी जाती है। जैसे पूर्वाधिकार अंशधारी या ऋणपत्रधारी। ऐसी वर्ग सभाओं को उस वर्ग को प्रभावित करनेवाले प्रस्ताव को पारित करने के लिये आहूत किया जाता है। इसमें लेनदारों की सभा नही सम्मिलित है। साधारण सभा से संबंधित प्रावधान इन सभाओं पर भी लागू होते हैं। धारा–70

14.5 प्रस्ताव

कम्पनी की सभा में पारित होने वाले प्रस्ताव तीन प्रकार के होते हैं–

क. साधारण प्रस्ताव

ख. विशेष प्रस्ताव

ग. विशेष सूचना चाहने वाले प्रस्ताव

14.5.1 साधारण प्रस्ताव

साधारण प्रस्ताव वह प्रस्ताव है जिसमें प्रस्तावक विरोध में उपस्थित सदस्यों तथा प्रतिपुरूषों (प्राक्सी) द्वारा डाले गये मतों से अधिक प्रस्ताव के पक्ष में मत पड़ते हैं [धारा 189(1)] । साधारण शब्दों में ऐसा प्रस्ताव, उपस्थित सदस्यों तथा प्रतिपुरूषों के साधारण बहुमत से पारित होता है। सामान्यतः वार्षिक साधारण सभा के सामान्य मामलों के लिये साधारण प्रस्ताव पारित किया जाता है। (अंकेक्षक की नियुक्ति को छोड़कर जैसे– वार्षिक खातों की पारित करना, लाभांश की घोषणा, अवकाश वाले निदेशकों में स्थान पर निदेशकों की नियुक्ति आयी। विशेष व्यवसाय में कुछ मामलों में भी साधारण प्रस्ताव आवश्यक होता है जैसे अंशों का कटौती पर निर्गमन अंश पूँजी में परिवर्तन, निदेशें की संख्या में वृद्धि या कमी, एकांकी विक्रय अभिकर्ता की नियुक्ति, निदेशकों की पारिश्रमिक का भुगतान तथा अन्य कम्पनियों में विनियोग।

साधारण प्रस्ताव के लिये 21 दिन की नोटिस आवश्यक है। धारा 293 के अन्तर्गत निदेशकों की शक्तियों को छोड़कर प्रस्ताव की प्रति को रजिस्ट्रार के यहाँ दाखिल करना आवश्यक नही होता है।

14.5.2 विशेष प्रस्ताव

विशेष प्रस्ताव वह प्रस्ताव है जिसे पारित करने के लिये उपस्थित सदस्यों तथा प्रतिपुरूषों का 3/4 या 75 प्रतिशत मत आवश्यक होता है।

इस प्रस्ताव को पारित करने के लिये 21 दिन पूर्व की सूचना आवश्यक है। इसके पारित होने में 30 दिन के अन्दर प्रस्ताव की प्रति रजिस्टार के यहाँ दाखिल करना आवश्यक होता है। कम्पनी अधिनियम में कुछ विशेष मामले दिये गये हैं जिनके लिये विशेष प्रस्ताव पारित करना आवश्यक है। जैसे पार्षद सीमा नियम व अन्तर्नियम में परिवर्तन, Sweat समता अंश का निर्गमन, अंश पूजी में कमी, पूँजी संचय का निर्माण व पूँजी में से ब्याज का भुगतान।

14.5.3 विशेष सूचना वाले प्रस्ताव

ऐसे प्रस्ताव को प्रस्तुत करने के इरादे की सूचना प्रस्ताव लाने को सभा की तिथि से कम से कम 14 दिन पूर्व देनी चाहिये। कम्पनी को व्यक्तिगत रूप से तथा विज्ञापन द्वारा ऐसी सूचना 7 दिन पूर्व देनी आवश्यक है। अधिनियम के अनुसार निम्न मामलों में विशेष प्रस्ताव आवश्यक हैः–

क. अवकाश ग्रहण करने वाले अंकेक्षक के अतिरिक्त नये अंकेक्षक की नियुक्ति (धारा 225)

ख. अवकाश प्राप्त अंकेक्षक की नियुक्ति न करने का प्रावधान (धारा 225)

ग. कार्यकाल पूर्ण होने के पूर्व निदेशक को हटाना (धारा 284)

घ. हटाये गये निदेशक के स्थान के स्थान पर अन्य निदेशक की नियुक्ति (धारा 284)

डाक मत द्वारा प्रस्ताव : धारा 192ए के अनुसार केवल सूचीबद्ध कम्पनियाँ ही डाक मत द्वारा प्रस्ताव पारित कर सकती है। इसमें इलेक्ट्रानिक माध्यम भी शामिल है। डाक मत द्वारा अंशधारियों की सहमति/असहमति उन्हें इस आशा की सूचना देने में 30 दिन के अन्दर प्राप्त हो जानी चाहिये। धारा 192 के अनुसार कुछ प्रस्तावों के

पारित होने में 30 दिन के अन्दर रजिस्ट्रार` यहॉ पंजीकृत हो जाना चाहिए जैसे विशेष प्रस्ताव, ऐच्छिक समापन का प्रस्ताव, विक्रय अभिकर्ता की नियुवक्ति तथा निदेशक व प्रबंध निदेशकों की नियुक्ति/पुनर्नियम का प्रस्ताव।

14.6 सारांश

कम्पनी की सभा, चाहे वह सदस्यों की हो या लेनदारों, निदेशकों, ऋणपत्रधारियों, अंशदायी की हो, कम्पनी अधिनियम 1956 के प्रावधानों के अनुसार संचालित होनी चाहिये। कम्पनी की सभाओं में अंशधारी, ऋणपत्रधारी, लेनदार, निदेशक, अंशदायी की सभा हो सकती है। किसी प्रकार की सभाओं के लिये 21 दिन की नोटिस का प्रावधान है। साधारण सभा के लिये गणपूर्ति कोरम का उल्लेख कम्पनी के पार्षद अन्तर्नियम में होता है।अंशधारियों की सभा चार प्रकार की होती है– 1. वैधानिक सभा 2. वार्षिक साधारण सभा 3. असाधारण सामान्य सभा 4. वर्ग सभा। प्रत्येक कम्पनी को प्रत्येक वर्ष वार्षिक साधारण सभा का आयोजन आवश्यक है। वार्षिक साधारण सभा तथा सॉविधिक सभा को छोड़कर सभी सामान्य सभायें, असाधारण सभा कहलाती है। कम्पनी की सभा में पारित होने वाले प्रस्ताव तीन प्रकार के होते हैं–क.साधारण प्रस्ताव, ख.विशेष प्रस्ताव, तथा ग. विशेष सूचना चाहने वाले प्रस्ताव ।

14.7 शब्दावली

सभाः से आशय किसी विधिपूर्ण व्यवसाय हेतु चर्चा के लिये व्यक्तियों के एकत्रित होने से है।

गणपूर्तिः से आशय, उस न्यूनतम सदस्य संख्या से है जिसका सभा में उपस्थित रहना, विधिक प्रावधानों के अनुसार आवश्यक है।

विशेष प्रस्तावः वह प्रस्ताव है जिसे पारित करने के लिये उपस्थित सदस्यों तथा प्रतिपुरूषों का 3/4 या 75 प्रतिशत मत आवश्यक होता है।

14.8 बोध प्रश्न

1. ....में सभा के स्थान तिथि तथा सभा का स्पष्ट उल्लेख होना चाहिये।
2. .... से आशय सभा में चर्चा होने वाले तथ्यों से है।
3. धारा 193 के अनुसार प्रत्येक कम्पनी को प्रत्येक साधारण सभा के होने के .... दिन के अन्दर उसके मिनट्स कार्यवृत रखने आवश्यक है।
4. वैधानिक सभा, अंशधारियों की सभा होती है।

14.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. नोटिस 2. एजेण्डा 3. 30 4. प्रथम

14.10 स्वपरख प्रश्न

1. वैधानिक सभा की परिभाषा दीजिये। यह कब होती है? वैधानिक प्रतिवेदन के तत्वों का उल्लेख करिये।
2. असाधारण सभा क्या हे? इसे कौन बुला सकता है?
3. वार्षिक साधारण सभा न बुलाने के क्या परिणाम होते हैं।
4. वैध सभा के आवश्यक तत्व को बताइये।

5. टिप्पणी कीजियेः–
   क. प्रति पुरूष तथा गणपूर्ति
   ख. सभी की कार्य सूची (मिनट्स)
   ग. मतदान की विधियाँ
6. प्रस्तावों के विभिन्न प्रकारों का वर्णन कीजिये? वे कब तथा कैसे पारित किये जाते हैं? उनके लिये कब नोटिस दी जाती है।
7. एक व्यक्ति कब वैध गणपूर्ति का निर्माण करेगा–
   क. सभा में
   ख. पूरी सभा के दौरान गणपूर्ति आवश्यक है?
   ग. क्या प्रतिपुरूष (प्राक्सी) सभा में बोल सकता है?

14.11 सन्दर्भ पुस्तकें

1. Gogna P.P.S. (2009), A Text Book on Company Law, New Delhi, S. Chand & Co.
2. Kapoor G.K. & Gupta C.B. (2008) Law, Ethics and Communication, Ne Delhi, Sultan Chand & Sons.
3. Singh Avtar (2004), Company Law, Lucknow, Eastern Book Company.

इकाई 15 कम्पनी सचिव

इकाई की रूपरेखा

15.1 प्रस्तावना
15.2 सचिव तथा पूर्णकालिक सचिव
15.3 नियुक्ति तथा योग्यतायें
 15.3.1 नियुक्ति
 15.3.2 योग्यतायें
15.4 सचिव की स्थिति
15.5 सचिव के कर्तव्य
15.6 सचिव के दायित्व
15.7 सचिव के अधिकार
15.8 सचिव को हटाना
15.9 सारांश
15.10 शब्दावली
15.11 बोध प्रश्न
15.12 बोध प्रश्नों के उत्तर
15.13 स्वपरख प्रश्न
15.14 सन्दर्भ पुस्तकें

उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् आप इस योग्य हो सकेंगे किः–

- कम्पनी सचिव का अर्थ समझ सकें।
- सचिव की नियुक्ति तथा योग्यताओं से संबंधित प्रावधानों का विवेचन कर सकें।
- कम्पनी सचिव की स्थिति तथा भूमिका का वर्णन कर सकें।
- कम्पनी सचिव के कर्तव्यों तथा दायित्वों का वर्णन कर सकें।
- कम्पनी सचिव को हटाने के कारणों का विवेचन कर सकें।

15.1 प्रस्तावना

कम्पनी के प्रबंधन में कम्पनी सचिव की महत्वपूर्ण स्थिति होती है। वह कम्पनी में बोर्ड, कर्मचारियों तथा अंशधारियो के मध्य महत्वपूर्ण कड़ी होती है। उसके अधिकार तथा दायित्व व्यापक होते हैं। उसमें कम्पनी के कानून तथा प्रक्रियाओं के अच्छे व्यवहारात्मक ज्ञान के अतिरिक्त प्रशासनिक क्षमता का होना भी आवश्यक है। सामान्यतः सचिव के कार्य प्रशासनिक तथा मंत्रिस्तरीय होते हैं। उसके कर्तव्य कम्पनी के आकार तथा स्वभाव पर निर्भर करते हैं। इंग्लैण्ड की कैडबरी समिति ने पाया कि सचिव एक प्रकार का पक्षपातरहित सिविल कर्मचारी होता है जो बोर्ड को उत्तरदायित्वों तथा प्रक्रियाओं से संबंधित सलाह देता है। सचिव की परिभाषा कम्पनी अधिनियम 1956, संशोधित अधिनियम, 1960, 1974 तथा वर्तमान में 1980 में दी गयी

है। इस इकाई में आप सचिव तथा पूर्णकालिक सचिव, सचिव की नियुक्ति, योग्यतायें, कम्पनी में उसकी भूमिका तथा स्थिति का अध्ययन करेंगे। आप कम्पनी सचिव के अधिकारों, दायित्वों तथा कर्तव्यों एवं उसे कार्यालय से हटाने के बारे में भी इस इकाई में अध्ययन करेंगे।

15.2 सचिव तथा पूर्णकालिक सचिव

भारतीय कम्पनी अधिनियम, 1956 (1974 में किए गये संशोधन) की धारा 2 (45) में सचिव की परिभाषा इस प्रकार की गई है, ''ऐसा व्यक्ति, जिसके पास निर्धारित योग्यताएं हों, तथा इस अधिनियम द्वारा निर्धारित कार्यों को करने के लिए अथवा अन्य लिपिकीय या प्रशासनिक कार्यों को करने के लिए, जिसकी नियुक्ति होती है।''

कम्पनी सचिव अधिनियम, 1980 ने कम्पनी सचिव की परिभाषा इस प्रकार की है, ऐसा व्यक्ति जो भारतीय इन्सटीट्यूट ऑफ कम्पनी सैक्रेटरी का सदस्य हो (धारा 2(1)(C)। कम्पनी (संशोधन) अधिनियम, 1988 ने उक्त परिभाषा को धारा 2(45) में दी गई परिभाषा में शामिल कर लिया है, अब इस धारा के अनुसार, ''सचिव का अर्थ, कम्पनी सचिव अधिनियम, 1980 की धारा 2(1)(C) मे दिए गये कम्पनी सचिव से है, तथा इसमें ऐसे अन्य व्यक्ति भी शामिल हैं जिनके पास निर्धारित योग्यताएं हैं व जिनकी नियुक्ति ऐसे कार्यों को करने के लिए हुई है जो लिपिकीय या प्रशासनिक हैं या जो अधिनियम के अन्तर्गत सचिव द्वारा किए जा सकते हैं।''

उपरोक्त परिभाषा के अध्ययन से हम यह कह सकते हैं कि कम्पनी सचिव में निम्न होना चाहियेः–

- केवल एक व्यक्ति ही सचिव बन सकता है, फर्म या कम्पनी नही
- निर्धारित योग्यताएं तथा
- कम्पनी अधिनियम के अन्तर्गत कार्य लिपिकीय तथा प्रशासनिक प्रकृति में है।

पूर्णकालिक प्रैक्टिस करने वाला सचिव : कम्पनी अधिनियम 1956 की धारा 2(45ए) के अनुसार ''पूर्णकालीक प्रैक्टिस करने वाले सचिव'' से तात्पर्य ऐसे सचिव से है जो कम्पनी सचिव अधिनियम 1980 की धारा 2(2) के अन्तर्गत प्रैक्टिस करने वाला सचिव है तथा जो कहीं पूर्णकालिक नौकरी नही कर रहा है।

कम्पनी सचिव अधिनियम 1980 की धारा 2(2) के अनुसार अन्य प्रावधान न होने पर संस्थान के सदस्य को ''पूर्णकालिक प्रैक्टिस करने वाला सचिव'' माना जायेगा, जब वह प्राप्त या प्राप्त होने वाले पारिश्रमिक के प्रतिफल में व्यक्तिगत या अन्य के साथ मिलकर प्रैक्टिस में है या अन्य मान्यता प्राप्त पेशेवरों सदस्यों के साथ साझेदारी में हो जैसा निर्धारित हो''। अधिनियम की धारा 2 (45-A) के अनुसार, पूर्ण–कालिक प्रैक्टिस करने वाले सचिव से तात्पर्य ऐसे सचिव से है जो कम्पनी सचिव अधिनियम, 1980 की धारा 2(2) के अन्तर्गत प्रैक्टिस करने वाला सचिव हैं तथा जो कहीं पूर्ण–कालिक नौकरी नहीं कर रहा।

पूर्णकालिक प्रैक्टिस सचिव से संबंधित प्रावधान निम्न है

1. कम्पनी सचिव अधिनियम, 1980 की धारा 2(2) ने निम्नलिखित क्षेत्र निर्धारित

किए हैं जिसमें कम्पनी सचिव अपनी प्रैक्टिस कर सकता है :

क. वह किसी कम्पनी का या कम्पनी के सम्बन्ध में, कम्पनी सचिव के रूप में कार्य करनेका पेशा कर सकता है; या

ख. वह कम्पनी के प्रवर्तन, गठन, निगमन, एकीकरण, पुनर्निर्माण, पुनर्गठन या कम्पनी के समापन से सम्बन्धित कार्यों के लिए अपनी सेवाएं प्रदान कर सकता है; या

ग. वह ऐसी सेवाएं करने का प्रस्ताव कर सकता है या ऐसी सेवाएं प्रदान कर सकता है जो निम्नलिखित के द्वारा की जाती है :

(i) वह कम्पनी के द्वारा व कम्पनी के लिए, अधिकृत प्रतिनिधि के रूप में विभिन्न दस्तावेज़ों (फार्म, आवेदन पत्र तथा रिटर्न सहित) को फाईल करने पंजीकरण करने, प्रस्तुत करने, सत्यापित करने या प्रमाणित करने का कार्य कर सकता है;

(ii) शेयर हस्तांतरण एजेंट के रूप में;

(iii) एक निर्गमन संस्था के रूप में,

(iv) शेयर तथा स्टॉक ब्रोकर के रूप में,

(v) सचिवीय अंकेक्षण या सलाहकार;

(vi) कम्पनी को प्रबन्ध सम्बन्धी विषयों पर परामर्शदाता के रूप में या उस समय प्रचलित किसी अन्य कानून के विषयों व कार्य–विधि के मामले शामिल हैं।

(vii) किसी कम्पनी की ओर से या कम्पनी के कार्यों के लिए प्रमाण–पत्र जारी करने का कार्य; या

घ. वह स्वयं को जनता के सामने प्रैक्टिस करने वाला कम्पनी सचिव प्रकट करता है, या

ड. वह व्यावसायिक सेवाएं प्रदान करता है या कम्पनी सचिव के पेशे की प्रैक्टिस से सम्बन्धित मामलों में सहायता प्रदान करता है; या

च. वह ऐसी कोई अन्य सेवाएं प्रदान करता हे, जो कौंसिल की राय में, प्रैक्टिस करने वाले सचिव द्वारा प्रदान की जाती है या की जा सकती है।

कम्पनी (संशोधन) अधिनियम, 1988 ने कुछ और क्षेत्र भी निर्धारित किए हैं, जहां पर पूर्ण–कालिक प्रैक्टिस करने वाले कम्पनी सचिव द्वारा प्रमाणन को मान्यता दी गई है, जैसे :

अ. कम्पनी अधिनियम की धारा 33(2) के अन्तर्गत, कम्पनी (केन्द्र सरकार) सामान्य नियम तथा फार्म, 1956 के फार्म नं0 1 पर यह घोषणा कि कम्पनी के निगमन सम्बन्धी समस्त कानूनी औपचारिकताएं पूर्ण कर ली गई है, पूर्ण–कालिक प्रैक्टिस करने वाला सचिव भी कर सकता है।

ब. प्रबंधकीय औपचारिकताओं के अनुपालन का प्रमाण पत्र (धारा

269)

स. व्यापार प्रारभ करने की साँविधिक घोषणा रजिस्ट्रासर के पास दाखिल करना (धारा 149)

द. ऐसी कम्पनी के वार्षिक विवरण पर, जिसके अंश किसी मान्यता प्राप्त स्कंध विपर्ण में सूचीबद्ध है, पर पूर्णकालिक प्राप्ति वाले सचिव का हस्ताक्षर भी आवश्यक है। [धारा 161(1)9]

15.3 नियुक्ति तथा योग्यतायें

कम्पनी अधिनियम 1956 की धारा 383(ए) वर्ष 2000 में संशोधित कम्पनियों के लिए कम्पनी सचिव की नियुक्ति अनिवार्य है। इस धारा के अनुसार प्रत्येक कम्पनी जिसके पास दत्त अंश पूजी की राशि है में पूर्णकालिक कम्पनी सचिव होना आवश्यक है।

15.3.1 नियुक्ति :

कम्पनी अधिनियम 1956, संशोधित अधिनियम 2000 के अनुसार कुछ कम्पनियों में कम्पनी सचिव की नियुक्ति अनिवार्य है। इस धारा के अनुसार प्रत्येक निर्धारित दत्त पूँजी वाली कम्पनी में पूर्णकालिक सचिव होना आवश्यक है। सरकार ने कम्पनी (सचिव की नियुक्ति तथा योग्यतायें) नियम बनाये हैं, जो वर्ष 2009 में संशोधित किये गये। संशोधित नियमों के अनुसार प्रत्येक कम्पनी जिसकी दत्त पूँजी 5 करोड़ रूपये या उससे अधिक है, में ऐसे पूर्णकालिक सचिव की नियुक्ति अनिवार्य है, जो भारतीय कम्पनी सचिव संस्थान का सचिव हो। यदि किसी कम्पनी की दत्त पूँजी 5 करोड़ की सीमा को पार कर जाती है तो ऐसी वृद्धि के एक वर्ष के अन्दर उसे पूर्णकालिक सचिव की नियुक्ति करनी होगी।

यदि किसी कम्पनी में मात्र दो निदेशक है तो उनमें से कोई भी कम्पनी का सचिव नही होगा। प्रत्येक कम्पनी जिसकी दत्त पूँजी 10 लाख रू0 से 5 करोड़ रू0 तक है, को अनुपालन प्रमाण पत्र के निर्गमन के लिये पूर्णकालिक प्रैक्टिस करने वाले सचिव आवश्यक है। इस प्रमाणपत्र में यह उल्लेख होगा कि कम्पनी ने अधिनियम के सभी प्रावधानों का अनुपालन किया है।

15.3.2 योग्यतायें :

कम्पनी (सचिव की नियुक्ति तथा योग्यतायें) नियम 1988 में सचिव की योग्यताओं का उल्लेख है। इस उद्देश्य से कम्पनी को से भागों में बॉटा गया है:–

(i) 5 करोड़ रू0 या उससे अधिक दत्त अंश पूँजी वाली कम्पनी।

(ii) 5 करोड़ रूपये या उससे कम दत्त अंश पूँजी वाली कम्पनी।

खण्ड (i) वाली कम्पनियों के लिये पूर्णकालिक सचिव की नियुक्ति अनिवार्य है जो भारतीय सचिव संस्थान का सदस्य हो।

खण्ड (ii) वाली कम्पनियों के लिये सचिव में निम्न में से एक या अधिक योग्यतायें होनी चाहिये–

(i) भारतीय कम्पनी सचिव संस्थान की सदस्यता

(ii) भारतीय कम्पनी सचिव संस्थान द्वारा आयोजित इण्टरमीडिएट परीक्षा उत्तीर्ण

(iii) किसी भारतीय विश्वविद्यालय से वाणिज्य में परास्नातक डिग्री या कम्पनी सचिव

(iv) किसी विश्वविद्यालय से विधि की डिग्री

(v) भारतीय चार्टर्ड लेखा, संस्थान की सदस्यता

(vi) भारतीय लागत लेखा संस्थान की सदस्यता

(vii) किसी विश्वविद्यालय या भारतीय प्रबंध संस्थान अहमदाबाद कोलकाता, बंगलौर या लखनऊ से प्रबंध सेवा में डिप्लोमा या परास्नातक डिग्री

(viii) भारतीय विधि संस्थान नई दिल्ली द्वारा कम्पनी विधि तथा प्रबंध में डिप्लोमा

(ix) वाणिज्यिक व्यवहार संस्थान, नई दिल्ली द्वारा कम्पी सचिव में परास्नातक डिप्लोमा

(x) सचिव एवं प्रबंधक संघ, कलकत्ता की सदस्यता

(xi) उदयपुर विश्वविद्यालय से कम्पनी विधि तथा सचिवीय व्यवहार में परास्नातक डिप्लोमा

गारण्टी द्वारा सीमित कम्पनी के सचिव के लिये उपरोक्त योग्यताओं की आवश्यकता नही है।

धारा 25 के अन्तर्गत पंजीकृत कम्पनियों पर उपरोक्त नियम लागू नही होते हैं जैसे लाभ न कमाने वाली तथा दान वाली, कला, धर्म, विज्ञान तथा वाणिज्य के संवर्द्धन वाली कम्पनियों। सचिव के पास उपरोक्त विधिक योग्यता के अतिरिक्त विधि, कार्यालय प्रशासन, अर्थशास्त्र, बैंकिंग, पूँजी तथा मुद्रा बाजार एवं विदेशी विनिमय कानूनों की जानकारी आवश्यक है।

15.4 सचिव की स्थिति

कम्पनी अधिनियम 1956 की धारा 2(30) के अनुसार 'अधिकारी' में कोई निदेशक, प्रबंधक या सचिव या अन्य कोई व्यक्ति शामिल है, जिसके निर्देशन या निर्देश पर निदेशक मण्डल या कोई एक या अधिक निदेशक कार्य करते हैं।

कम्पनी तथा बाह्य जगत के मध्य सचिव एक कड़ी होती है। उसके पास प्रबंधकीय कार्य नही होते हैं। वह उन कार्यों तथा शक्तियों का प्रयोग करता है जो बोर्ड ने उसे दिया है। यह शक्तियाँ विस्तृत या सीमित हो सकती है जो नियुक्ति की शर्तों पर निर्भर होती है। कार्यात्मक रूप से, सचिव मात्र सचिवीय कार्य तथा सचिवीय शक्तियों का प्रयोग करता है। उसकी सही विधिक स्थिति कम्पनी के एजेण्ट के रूप में होती है। यह वह कोई ऐसा कार्य करता है जिससे कम्पनी बाध्य नही है, उसके लिये सचिव, अधिकार की वारंटी में उल्लंघन के लिये दायी होगा। कम्पनी उसके अनाधिकृत कृत्यों या प्रतिनिधित्व के लिये बाध्य नही है। बिना स्पष्ट अधिकार के वह कम्पनी की ओर से संविदा नही कर सकता है या कम्पनी के नाम से ऋण नही ले सकता है, सभा का आयोजन व अंशों का हस्तान्तरण नही कर सकता है।

वह कम्पनी की ओर कम्पनी लॉ बोर्ड, (CLB), राष्ट्रीय कम्पनी लॉ न्यायाधिकरण, कम्पनी रजिस्ट्रार, उपभोक्ता फोरम तथा कर न्यायाधिकरण आदि में

प्रतिनिधित्व करता है।

15.5 सचिव के कर्तव्य

कम्पनी सचिव सामान्यतः विधिक, प्रशासनिक तथा प्रबंधकीय कार्य करता है। उसके कर्तव्य, कम्पनी के आकार तथा प्रबंध ढॉचे पर निर्भर करते हैं। यह तीन क्षमताओं में कार्य करता है जैसे कम्पनी निदेशक मण्डल के एजेण्ट, सचिवालय के मुखिया तथा मुख्य प्रशासनिक अधिकारी के रूप में।

कम्पनी सचिव के कर्तव्यों को दो भागों में विभाजित किया गया हैः– (क) विधिक कर्तव्य (ख) अन्य कर्तव्य। विधिक कर्तव्य को पुनः दो भागों में विभाजित किया गया है– (1) कम्नी अधिनियम के अन्तर्गत कर्तव्य (2) अन्य अधिनियमों के अन्तर्गत कर्तव्य।

कम्पनी अधिनियम के अन्तर्गत कर्तव्य : कम्पनी अधिनियम के अधीन कम्पनी सचिव के कुछ वैधानिक कर्तव्य निम्नलिखित हैं :

- **i.** किसी दस्तावेज या कार्यवाही पर हस्ताक्षर करना या प्रमाणीकरण करना।
- **ii.** कम्पनियों के रजिस्ट्रार के पास आवश्यक दस्तावेज़ तथा विवरण जमा कराने का कार्य जैसे शेयरों के आवंटन का विवरण, वार्षिक विवरण, वार्षिक लेखे आदि।
- **iii.** शेयर पूंजी में वृद्धि करने सम्बन्धी सूचना रजिस्ट्रार को देने का कार्य।
- **iv.** आवंटन की तिथि के 3 माह के अन्दर और हस्तांतरण के पंजीयन की तिथि के दो माह के अन्दर शेयर प्रमाण–पत्र दे देना।
- **v.** शेयर वारंट जारी किए जाने पर सदस्यों के रजिस्टर में आवश्यक प्रविष्टियां करना।
- **vi.** रजिस्ट्रार के पास प्रभारों का विवरण जमा कराना।
- **vii.** कम्पनी के प्रत्येक कार्यालय के बाहर या व्यापार करने के स्थान के बाहर, कम्पनी का नाम लिखवाना चाहिए तथा कम्पनी की सील पर कम्पनी का नाम खुदवाना (अंकित) करवाना चाहिए।
- **viii.** व्यापार आरम्भ करने का प्रमाण–पत्र प्राप्त करने के लिए सांविधिक घोषणा करनी पड़ती है।
- **ix.** सदस्यों के रजिस्टर को निरीक्षण के लिए उपलब्ध कराने तथा उसकी प्रतियां देने का कार्य
- **x.** कम्पनी के प्रत्येक सदस्य को साधारण सभा की सूचना भेजना।
- **xi.** कुछ विशेष करारों व प्रस्तावों को रजिस्ट्रार के पास जमा कराना।
- **xii.** कम्पनी की साधारण सभाओं, निदेशक मंडल की सभाओं तथा अन्य सभाओं की कार्यवाही का विवरण रखना।
- **xiii.** सांविधिक पुस्तकें तथा अन्य रजिस्टर रखना, जैसे सदस्यों का रजिस्टर निदेशकों का रजिस्टर, प्रभार का रजिस्टर आदि।

सचिव के रूप में कम्पनी के मुख्य अधिकारी के कर्तव्य के रूप में केवल कम्पनी अधिनियम तक सीमित नही है, बल्कि अन्य कानूनों जैसे आय का अधिनियम, भारतीय स्टाम्प अधिनियम, विदेशी विनिमय प्रबंध अधिनियम, सेबी तथा श्रमिक विधियों

जैसे कारखाना अधिनियम, औद्योगिक विवाद अधिनियम तथा कर्मकार राज्य बीमा अधिनियम को लागू कराने के लिये उत्तरदायी होता है।

अन्य कर्तव्य : कम्पनी सचिव के अन्य कर्तव्य निम्न है–

क. निदेशक मंडल के आदेशों का पालन करना।

ख. नीति सम्बन्धी निर्णयों को करने में निदेशक मंडल की सहायता करना।

ग. कम्पनी से सम्बन्धित आन्तरिक व गोपनीय सूचनाओं को प्रकट नहीं करना।

घ. अपनी स्थिति का उपयोग करते हुए कोई गुप्त लाभ अर्जित नही करना।

ड. कम्पनी तथा बहारी व्यक्तियों के मध्य एक साधन व कड़ी के रूप मे काम करना।

च. शेयरधारकों को आवश्यक सूचनाएं उपलब्ध कराना।

छ. कार्यालय के कार्य को संगठित करने, नियन्त्रित करने व समन्वित करना।

15.6 सचिव के दायित्व

कम्पनी अधिनियम के अन्तर्गत कम्पनी सचिव विभिन्न त्रुटियों के लिये दायी होता है। वह, कम्पनी के अधिकारीके रूप में अन्य धिनियमों जैसे भारतीय आय कर अधि0, भारतीय स्टाम्प अधि0 तथा विविध श्रमिक विधियों के लिये भी दायी होता है। वह, अपने कर्तव्यों के उल्लंघन, लापरवाही, कपट गुप्त संचय के निर्माण, गुप्त सूचनाओं का प्रकटीकरण या अधिकार से परे कार्य करने पर दोषी अधिकारी माना जाता है। कम्पनी धिनियम 1956 के अन्तर्गत विभिन्न त्रुटियों के लिये सारांशतः निम्न दायित्व होते हैं:–

1. अंश आवंटन की विवरणी न दाखिल करना (धारा 75(4) त्रुटि जारी रहने तक रू0 5000/– प्रतिदिन जुर्माना)
2. अंश/ऋण पत्र प्रमाण पत्र को न बनाने तथा सदस्यों रजिस्टर इंण्डेक्स को रखने में असफल होने पर (धारा 113(2) में रू0 5000/– प्रतिदिन जुर्माना जब तक कि त्रुटि जारी रहती है।
3. अंश वारंट के निर्गमन पर लेखा न करने पर धारा 115 के अन्तर्गत रू0 500/– प्रति दिन, त्रुटि जारी रहने तक जुर्माना।
4. सम्पत्ति के प्रभार के अपंजीयन या सम्पत्ति के प्रभार को न विवरण धारित करने पर (धारा 127 में रू0 5000/– तक जुर्माना)
5. वार्षिक विवरण दाखिल न करने पर (धारा 162) में 500/– रू0 प्रतिदिन जुर्माना, जब तक त्रुटि जारी रहती है।
6. वैधानिक सभा या वार्षिक साधारण सभा न करने पर धारा 167, 168 में क्रमशः 5000/– रू0 तथा 50000/– रू0 तक जुर्माना।
7. पंजीकृत अनुबंध तथा सदस्यों के प्रस्ताव का वितरण न करने पर (धारा 188 में 50,000 रू0 तक जुर्माना)
8. कुछ प्रस्तावों तथा अनुबंधों का पंजीकरण न कराने पर (धारा 193 के अन्तर्गत प्रतिदिन 200 जुर्माना त्रुटि जारी रहने तक)
9. प्रत्येक साधारण सभा, बोर्ड सभाओं मसौदा (मिनट्स) न रखने पर 500/– रू0 जुर्माना (धारा 193)

10. निदेशकों का रजिस्टर तथा मिनट बुक न बनाने पर क्रमशः 500/— रू0 प्रतिदिन तथा 500 रू0 जुर्माना।
11. निदेशकों का अंशधारिता रजिस्टर न बनाने पर 50,000/— रू0 जुर्माना तथा अन्तर कम्पनी ऋणों तथा विनियोगों का रजिस्टर न रखने पर 5000/— जुर्माना तथा इसके बाद त्रुटि जारी रहने तक 500/— रू0 प्रति जुर्माना (धारा 272क)
12. कम्पनी की सार्व मुद्रा तथा व्यवसायिक पत्र पर कम्पनी का सर्वनाम न अंकित करने पर धारा 147 के अन्तर्गत 500/— रू0 जुर्माना।
13. बोर्ड सभा की लिखित सूचना (नोटिस) न देने पर 1000/— रू0 तक जुर्माना (धारा 286)

यहां ध्यान देने वाली बात यह है कि सचिव के अधिकांश दायित्व, वैधानिक कर्तव्यों के अनुपालन में त्रुटि होने पर उत्पन्न होते हैं।

अनुबंधात्मक दायित्व : विभिन्न सांविधिक दायित्वों के अतिरिक्त, कम्पनी सचिव के अनेक अनुबन्धात्मक दायित्व भी होते हैं जो सेवा अनुबन्ध से उत्पन्न होते हैं। ये दायित्व निम्नलिखित है :

i. अपने कर्तव्यों का पालन करने में जान—बूझकर की गई असावधानी या लापरवाही के परिणामस्वरूप यदि कम्पनी को कोई हानि या क्षति होती है, तोउसकी पूर्ति करने का दायित्व।
ii. यदि सचिव अपने अधिकार क्षेत्र से बाहर कार्य करता है तो उसके लिए वह व्यक्तिगत रूप से उत्तरदायी होता है।
iii. कम्पनी के सचिव के पद पर बने रहने के कारण वह कोई गुप्त लाभ अर्जित करता है, तो उसे वापिस लौटाने के लिए वह उत्तरदायी होता है।
iv. कम्पनी से सम्बन्धित कोई गोपनीय सूचना प्रकट करने से यदि कम्पनी को कुछ हानि होती है, तो उस हानि की पूर्ति करने का दायित्व।
v. अपने कार्य—काल के दौरान वह कम्पनी के प्रति किए गये कपट या गलत कार्य के लिए उत्तरदायी होता है।

15.7 सचिव के अधिकार

सचिव को कुछ अधिकार अधिनियम द्वारा दिए गये हैं तो कुछ निदेशक मंडल तथा शेयरधारकों की साधारण सभा द्वारा दिये गये हैं। कम्पनी के साथ किए गये सेवा अनुबन्ध से भी उसे कुछ अधिकार प्राप्त होते हैं। सचिव को निम्नलिखित अधिकार प्राप्त हैं :

i. अपने विभाग की गतिविधियों पर नियन्त्रण व देखभाल करने का अधिकार;
ii. कम्पनी द्वारा सत्यापित आवश्यक होने पर दस्तावेजों पर हस्ताक्षर करने का अधिकार;
iii. अपने कर्तव्यों का पालन करते हुए यदि उसे कोई हानि या क्षति होती है तो क्षतिपूर्ति प्राप्त करने का अधिकार;
iv. पारिश्रमिक प्राप्त करने का अधिकार।

परन्तु कम्पनी सचिव को कम्पनी के नाम ऋण लेने या शेयर आवंटित करने

या निदेशक मंडल से स्पष्ट अधिकार या अनुमति प्राप्त किए बिना शेयरों के हस्तांतरण को पंजीकरण करने का अधिकार नही होता है। उसे कम्पनी की सभा बुलाने का भी अधिकार नही है।

15.8 सचिव को हटाना

निदेशक मण्डल के प्रस्ताव द्वारा सचिव को उसके कार्यालय से हटाया जा सकता है। परन्तु उसे रोजगार के अनुबंध की शर्तों के अनुसार सभा के उनके लिखित नोटिस (सूचना) देना आवश्यक है। जब सचिव निश्चित अवधि के लिये नियुक्त हुआ हो तो लिखित नोटिस (सूचना) अनिवार्य है। ऐसी नोटिस नियुक्ति की निर्धारित अवधि के खत्म होने के पूर्व दी जानी चाहिये। जानबूझकर अनुशासनहीनता, दुर्व्यवहार, नैतिक अपराध, लापरवाही, अक्षमता तथा स्थायी अपंगता की दशा में उसे अपने बचाव का अवसर देने के लिये नोटिस देना चाहिये।

अनिवार्य समापन की दशा में सचिव समेत सभी अधिकारियों की सेवायें स्वतः समाप्त हो जाती है।

अर्न्तनियम के आधार पर सचिव अपनी सेवा से बर्खास्तगी पर कम्पनी के विरूद्ध कोई वाद नही कर सकता है। कम्पनी सचिव अधिनियम 1980 के अन्तर्गत पेशेवर दुर्व्यवहार के लिये सचिव के विरूद्ध भारतीय कम्पनी सचिव संस्थान कार्यवाही कर सकता है।

15.9 सारांश

किसी कम्पनी के सचिव को या तो भारतीय सचिव संस्थान का सदस्य होना चाहिये या निर्धारित योग्यतायें धारित करना चाहिये। पूर्णकालिक प्रैक्टिस करने वाले सचिव से आशय ऐसे सचिव से है जो कम्पनी सचिव अधिनियम 1980 की धारा 2(2) के अनुसार प्रैक्टिस में है तथा जो कहीं भी पूर्ण नौकरी में न हो। एक अंशपूजी वाली कम्पनी जिसकी दत्त पूँजी 5 करोड़ रूपये से कम नही है, में पूर्णकालिक सचिव होना आवश्यक है। एक कम्पनी जिसकी दत्त पूंजी 2 करोड़ रू0 से 5 करोड़ रूपये के मध्य है, भी पूर्णकालिक सचिव को नियुक्त कर सकती है। प्रत्येक कम्पनी के लिये पूर्णकालिक सचिव की नियुक्ति आवश्यक नही है तथा 10 लाख रू0 या इससे अधिक दत्त पूँजी वाली कम्पनी रजिस्ट्रार के यहाँ पूर्णकालि सचिव द्वारा निर्गमित प्रमाण पत्र दाखिल करेगी।

कम्पनी अधिनियम 1956 की विभिन्न धाराओं में सचिव के कर्तव्यों तथा दायित्वों का उल्लेख किया गया है। एक सचिव को निदेशक मण्डल के प्रस्ताव द्वारा हटाया जा सकता है। सचिव को हटाने की लिखित सूचना देना आवश्यक है।

15.10 शब्दावली

सचिव : सचिव वह व्यक्ति है, जो भारतीय कम्पनी सचिव संस्थान का सदस्य है तथा सचिव के कर्तव्यों तथा अन्य मंत्रिस्तरीय तथा प्रशासनिक कर्तव्यों को करता है।

पूर्णकालिक प्रैक्टिस करने वाला सचिव : वह व्यक्ति, जो भारतीय कम्पनी सचिव संस्थान का सदस्य हे तथा पारिश्रमिक के लिये कम्पनी सचिव के पेशे में व्यक्तिगत रूप से या साझेदारी में कार्य करता है, पूर्णकालिक प्रैक्टिस करने वाला सचिव

कहलाता है।

अनुपालन प्रमाण पत्र : कम्पनी अधिनियम के अन्तर्गत सचिव द्वारा दिया गया प्रमाण पत्र।

15.11 बोध प्रश्न

ऐसा व्यक्ति, जिसके पास निर्धारित योग्यताएं हों, तथा इस अधिनियम द्वारा निर्धारित कार्यों को करने के लिए अथवा अन्य लिपिकीय या प्रशासनिक कार्यों को करने के लिए, जिसकी नियुक्ति होती है .... कहलाता है।

1. कम्पनी अधिनियम 1956 की धारा ....के अनुसार प्रत्येक कम्पनी जिसके पास दत्त अंश पूजी की राशि है में पूर्णकालिक कम्पनी सचिव होना आवश्यक है।
2. कम्पनी तथा बाह्य जगत के मध्य सचिव एक .... होती है।
3. ....के प्रस्ताव द्वारा सचिव को उसके कार्यालय से हटाया जा सकता है।

15.12 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. सचिव 2. 383(ए) 3. कड़ी 4. निदेशक मण्डल

15.13 स्वपरख प्रश्न

1. कम्पनी सचिव में क्या योग्यताये होनी चाहिये?
2. कम्पनी सचिव के कर्तव्यों का वर्णन कीजिये?
3. सचिव तथा पूर्णकालिक प्रैक्टिस करने वाले सचिव पद को परिभाषित कीजिये?
4. सचिव को कैसे हटाया जा सकता है?
5. कम्पनी सचिव के दायित्वों की विवेचना कीजिये।
6. कम्पनी सचिव की स्थिति की विवेचना कीजिये।

15.14 सन्दर्भ पुस्तकें

1. Gogna P.P.S. (2009), A Text Book on Company Law, New Delhi, S. Chand & Co.
2. Kapoor G.K. & Gupta C.B. (2008) Law, Ethics and Communication, Ne Delhi, Sultan Chand & Sons.
3. Singh Avtar (2004), Company Law, Lucknow, Eastern Book Company.

इकाई 16 कम्पनी का समापन

इकाई की रूपरेखा

16.1 प्रस्तावना
16.2 कम्पनी के समापन की विधियाँ
  16.2.1 सदस्यों द्वारा ऐच्छिक समापन
  16.2.2 लेनदारों द्वारा ऐच्छिक समापन
16.3 स्थिति विवरण
16.4 निस्तारक का अन्तिम खाता
16.5 विविध प्रावधान
16.6 साराँश
16.7 शब्दावली
16.8 बोध प्रश्न
16.9 बोध प्रश्नों के उत्तर
16.10 स्वपरख प्रश्न
16.11 सन्दर्भ पुस्तकें

उद्‌देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् आप इस योग्य हो सकेंगे कि:–

- समापन का अर्थ स्पष्ट कर सकें।
- कम्पनी के समापन की विधियों का वर्णन कर सकें।
- वार्षिक विवरण का वर्णन कर सकें।

16.1 प्रस्तावना

व्यवसाय को बन्द करने की प्रक्रिया समापन कहलाती है। इसमें व्यवसाय की सभी सम्पत्तियों का विक्रय, लेनदारों को भुगतान, शेष बची सम्पत्तियों को मातृ कम्पनी या मुखिया को वितरित करना तथा इसके बाद व्यवसाय का विघटन, शामिल है। समापन से आशय कम्पनी के विशेष व्यवसाय या सम्पूर्ण कम्पनी के विघटन की प्रक्रिया से है।

कम्पनी के समापन की प्रक्रिया में किसी एक विशेष व्यवसाय के समापन से अधिक विस्तृत है तथा यह सामान्यतः कम्पनी के दिवालिया होने पर ही धारित होता है। यदि कम्पनी बड़ी है तो उसके दिवालिये होने के बाद समापन होने क्षेत्रीय तथा स्थानीय अर्थव्यवस्था पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है वृहद इकाई में बन्द होने से हजारों व्यक्ति बेरोजगार होते हैं तथा कम्पनी के ऋणदाता तथा आपूर्तिकर्ताओं पर विपरीत प्रभाव पड़ता है।

मात्र (Parent) कम्पनी का नाममात्र योगदान या घटती संभावनाओं के कारण कम्पनी किसी विशेष लाइन के व्यवसाय का समापन कर सकती है। पैरेन्ट कम्पनी ऐसे व्यवसाय का क्रेता न मिलने पर उसके समापन का निर्णय ले लेती है। ऐसे समापन की प्रक्रिया अधिक क्रमबद्ध तथा अर्थव्यवस्था पर कम नकारात्मक प्रभाव पड़ता

है।

कम्पनी का समापन वह चरण है, जहॉ कम्पनी अन्तिम सॉस लेती है। यह ऐसी प्रक्रिया है जिसमें कम्पनी को समाप्त कर उसका अस्तित्व को प्रतिबंधित कर दिया जाता है। कम्पनी की सभी सम्पत्तियों का विक्रय धनराशि एकत्रित की जाती है जिससे कम्पनी के दायत्वों को प्राथमिकता के आधार पर भुगतान किया जाता है।

कम्पनी के समापन की प्रक्रिया कम्पनी का जीवन समाप्त करने का कार्य है। इस प्रक्रिया में कम्पनी को विघटित किया जाता है तथा ऐसे विघटन सम्पत्तियों का विक्रय कर धनराशि एकत्रित कर उसके ऋणों को प्राथमिकता के आधार पर चुकाया जाता है तथा यदि कोई आधिक्य शेष होता है तो वह कम्पनी के सदस्यों में उसके अधिकारों के अनुसार वितरित किया जाता है।

16.2 कम्पनी के समापन की विधियाँ

कम्पनी के समापन की निम्न विधियाँ हैं:–

क. न्यायालय द्वारा समापन

ख. ऐच्छिक समापन

16.2.1 सदस्यों द्वारा ऐच्छिक समापन :

16.2.2 लेनदारों द्वारा ऐच्छिक समापन :

ग. न्यायालय में निरीक्षण में समापन

क. न्यायालय द्वारा समापन :

न्यायालय द्वारा कम्पनी का समापन निम्न परिस्थितियों में होता है यह न्यायालय से आशय 'उच्च न्यायालय' से है।

i. यदि कम्पनी ने इस आशय का कोई विशेष प्रस्ताव पारित किया है कि कम्पनी का न्यायालय द्वारा समापन किया जाए। प्रस्ताव किसी भी कारण से पारित किया जा सकता है। विशेष प्रस्ताव से आशय उपस्थित सदस्यों के 3/4 सदस्यों द्वारा प्रस्ताव के पारित करने से है।

ii. यदि कोई सार्वजनिक कम्पनी सांविधिक सभा बुलाने अथवा रजिस्ट्रार के पास साविधिक रिपोर्ट जमा कराने में त्रुटि करती है, तो रजिस्ट्रार अथवा किसी अंशदाता द्वारा याचिका प्रस्तुत करने पर न्यायालय कम्पनी कें समापन का आदेश दे सकता है। यदि याचिका किसी अन्य व्यक्ति द्वारा, जैसे लेनदार, द्वारा प्रस्तुत की जाती है तो वह सांविधिक सभा बुलाने की तिथि समाप्त होने के पश्चात 14 दिन के अन्दर प्रस्तुत कर दी जानी चाहिए।

iii. यदि निगमन के एक वर्ष के भीतर कम्पनी व्यापार आरम्भ नही करती, अथवा पूरे एक वर्ष के लिए व्यापार करना स्थगित कर देती है तो न्यायालय कम्पनी के समापन का आदेश केवल तभी देगा जब वह सन्तुष्ट हो जाए कि कम्पनी का व्यापार आरम्भ करने का कोई इरादा नही है अथवा कम्पनी के लिए व्यापार करना सम्भव नही है।

iv. सार्वजनिक कम्पनी की स्थिति में यदि किसी भी समय, सदस्यों की संख्या सात से कम हो जाती है तथा निजी कम्पनी में दो से कम सदस्य रह जाते हैं, तो न्यायालय कम्पनी के समापन का आदेश दे सकता है।

v. ऋण चुकाने में असमर्थता का अर्थ है कि कम्पनी अपने वित्तीय वादों को पूर्ण करने की स्थिति में नही है अर्थात् कम्पनी की मौजूदा परिसम्पत्तियां उसकी मौजूदा देयताओं को चुकाने के लिए अपर्याप्त है। ऐसी स्थिति में, न्यायालय कम्पनी के समापन का आदेश दे सकता है।

vi. यदि किसी मामले के तथ्यों एवं परिस्थितियों को देखते हुए न्यायालय इस बात से सन्तुष्ट हो जाता है कि कम्पनी का समापन न्यायोचित एवं सम्यक् है, तो वह कम्पनी के समापन का आदेश दे सकता है।

मुख्य बिन्दु :

क. समापन याचिका कौन दाखिल कर सकता है? (धारा 439) निम्न व्यक्ति न्यायालय में याचिका प्रस्तुत कर सकते हैं:–

1. कम्पनी स्वयं
2. लेनदार
3. अंशदाताओं द्वारा
4. रजिस्ट्रार
5. अन्यायपूर्ण आचरण तथा कुप्रबंधन की दशा में केन्द्र सरकार द्वारा अधिकृत व्यक्ति (धारा 397)

ख. न्यायालय क्या आदेश पारित कर सकता है? (धारा 443) याचिका पर सुनवाई के बाद न्यायालय :

(i) लागत सहित या लागत रहित याचिका खारिज कर सकता है या

(ii) कोई अन्तरिम आदेश दे सकता है, जैसा वह उचित समझे या

(iii) लागत सहित या लागत रहित कम्पनी के समापन का आदेश दे सकता है।

न्यायालय के समापन आदेश पारित करने के निम्न परिणाम होंगे : यदि न्यायालय समापन याचिका के उचित कारणों से संतुष्ट होता है, तो वह समापन का आदेश पारित करेगा। एक बार समापन आदेश पारित होने पर निम्न परिणाम होंगे:–

(i) न्यायालय, सरकारी समापक को कम्पनी में परिवर्तन के लिये नोटिस (सूचना) भेजेगा, जो समापन की प्रक्रिया चलायेगा। (धारा 444)

(ii) समापन आदेश सभी लेनदारों तथा अंशदाताओं पर लागू होगा, चाहे उन्होंने याचिका दाखिल की हो या न हों

(iii) सरकारी समापक की नियुक्ति केन्द्र सरकार द्वारा की जाती है। (धारा 448)

(iv) कम्पनी की सम्पत्तियों, रोकड़ हाथ में, बैंक शेष, दायित्वों, लेनदारों आदि से संबंधित विवरण सरकारी समापक को सौंप दिया जाता है। (धारा 454)

(v) सरकारी समापक, न्यायालय द्वारा समापन आदेश होने की तिथि से 6 माह के अन्दर निम्न से संबंधित प्रारम्भिक प्रतिवेदन न्यायालय दाखिल करेगा।

- पूँजी का विवरण
- नकद तथा विनमयसाध्य प्रतिभूतियाँ
- दायित्व

- चल तथा अचल सम्पत्तियाँ
- अदत्त याचनायें तथा
- जाँच पड़ताल की आवश्यकता है या नही, के बारे में सलाह (धारा 455)

केन्द्र सरकार, सरकारी समापक की कार्य प्रणाली पर पूर्ण नजर रखेगी तथा आवश्यक होने पर उसे प्रश्न पूछ सकती है। (धारा 463)

ग. स्थगन आदेश : जहाँ पर न्यायालय ने समापन आदेश दिया है, वहाँ सरकारी समापक या अंशदाता या किसी लेनदार के आवेदन पर समापन की कार्यवाही स्थगन आदेश दे सकता है। (धारा 466)

घ. कम्पनी का विघटन : धारा (481)

अन्ततः न्यायालय कम्पनी के विघटन का आदेश देगा, जब–

- कम्पनी के मामलों का पूर्णतः समापन हो गया हो अथवा
- सरकारी समापक, धन की कमी के कारण समापन प्रक्रिया पूर्ण करने में असमर्थ रहता है।

ड. अपील : धारा (483)

समापन आदेश के विरूद्ध उसका आदेश देने वाले में उपरी न्यायालय में जहां क्षेत्राधिकार है, में अपील याचिका दाखिल की जा सकती है।

ख. ऐच्छिक समापन :

ऐच्छिक समापन का अर्थ ऐसे समापन से है जो न्यायालय के हस्तक्षेप के बिना, लेनदारों या सदस्यों द्वारा स्वयं ही किया जाता है। कम्पनी का ऐच्छिक समापन किया जा सकता है जब वह अपने व्यवसाय को चलाने में असमर्थ हो या निश्चित उद्देश्य पूर्ण होने पर या वह अपने वित्तीय दायित्वों को पूर्ण करने में असमर्थ होने पर, आदि। एक कम्पनी निम्न दो में से किसी विधि से ऐच्छिक समापन कर सकती है–

16.2.1 सदस्यों द्वारा स्वैच्छिक समापन

16.2.2 लेनदारों द्वारा स्वैच्छिक समापन

कम्पनी साधारण प्रस्ताव पारित करके स्वैच्छिक समापन तभी कर सकती है– जबकि जिस उद्देश्य या अवधि के लिये कम्पनी की स्थापना की गयी थी, वह पूर्ण हो गया है। अथवा विशेष प्रस्ताव पारित करके।

दोनों प्रकार के प्रस्ताव कम्पनी की साधारण सभा में पारित होने चाहिये ।

एक बार स्वैच्छिक समापन आदेश पारित होने पर कम्पनी का समापन

- सदस्यों द्वारा ऐच्छिक समापन या
- लेनदारों द्वारा ऐच्छिक समापन

से होगा। दोनों में अन्तर इतना है कि सदस्यों द्वारा स्वैच्छिक समापन में संचालक/निदेशक मण्डल को कम्पनी के कोई ऋण न होने की घोषणा करनी पड़ती है।

16.2.1 सदस्यों द्वारा स्वैच्छिक समापन

इसमें निदेशक मण्डल की सभा का आयोजन कम्पनी के निदेशकों द्वारा होता

है जिसमें समापन की घोषणा के साथ एक शपथ पत्र होगा जिसमें यह उल्लेख होगा कि–

- कम्पनी के ऊपर कोई ऋण नही है या
- कम्पनी अपने ऋणों का पुनर्भुगतान समापन प्रारम्भ होने के 3 वर्ष के अन्दर कर देगी

समापन प्रक्रिया का संचालन :

- कम्पनी साधारण सभा में एक या अधिक समापकों की नियुक्ति करेगी, जब समापन प्रक्रिया तथा सम्पत्तियों के वितरण देखेंगे। [490(1)]
- इस प्रकार नियुक्त समापक को उसकी सेवा के लिये पारिश्रमिक देय होगा जो कम्पनी की साधारण सभा में निश्चित होगा। [490(2)]
- समापक की नियुक्ति के 10 दिन के अन्दर, कम्पनी रजिस्ट्रार को समापक की नियुक्ति की सूचना (नोटिस) देगा। (493)
- एक बार समापक की नियुक्ति होने पर निदेशकों, प्रबंध निदेशक निदेशक मण्डल तथा प्रबंधक की शक्तियाँ समाप्त हो जायेगी। (491)
- समापक, कम्पनी का समापन लेनदारों तथा कम्पनी के हित में स्वतंत्र रूप में करेगा।
- यदि समापन में एक वर्ष से अधिक लगता है तो प्रत्येक वर्ष के अन्त में समापक साधारण सभा बुलायेगा तथा इसमें समापन प्रक्रिया का पूर्ण खाता (विवरण) तथा समापक की स्थिति प्रस्तुत करेगा। (496)

जब कम्पनी के सभी मामलों का समापन हो गया हो : इस स्थिति में समापक निम्न कदम उठायेगा? (497)

(i) कम्पनी के सदस्यां की साधारण सभा आहूत करेगा जिसमें खातों का पूर्ण विवरण, समापन प्रक्रिया तथा कम्पनी की सम्पत्तियों को विक्रय के ढंग को प्रस्तुत करेगा।

(ii) यह सभा विज्ञापन द्वारा आहूत की जायेगी जिसमें सभा के समय, स्थान तथा उद्देश्य होंगे।

(iii) समापक, सभा के एक सप्ताह के अन्दर रजिस्ट्रार तथा सरकारी समापक को लेखे की प्रति भेजेगा।

(iv) यदि प्रतिवेदन से सरकारी समापक इस निष्कर्ष पर पहुँचता हे कि कम्पनी का समापन उसके सदस्यों या जनता के हित में आगे बढ़ाना उचित नही है तो न्यायालय की रिपोर्ट की तिथि से कम्पनी विघटित मानी जायेगा।

(v) जब सरकारी समापक यह पाता है कि समापन कार्यवाही सदस्यों या जनता के हितों कें प्रतिकूल की गयी है तो न्यायालय समापक को और विस्तार से जॉच का आदेश देगा।

16.2.2 लेनदारों द्वारा स्वैच्छिक समापन

- जहाँ पर समापन आदेश पारित हो चुका है, परन्तु निदेशक मण्डल कम्पनी के दायित्वों की घोषणा करने की स्थिति में नही है, तो वे समापन हेतु लेनदारों की सभा आहूत कर सकते हैं। (500)
- यह निदेशक मण्डल का कर्तव्य है कि वे लेनदारों की सभा में कम्पनी का स्थिति विवरण तथा लेनदारों की सूची, उनका बकाया का विवरण प्रस्तुत करें। [500(3)]
- लेनदारों की सभा में कोई प्रस्ताव होने के 10 दिन के अन्दर रजिस्ट्रार को भेज देना चाहिये। (501)

समापन प्रक्रिया : कौन करेगा तथा कैसे की जायेगी।

- साधारण सभा (जिसमें सामान्य प्रस्ताव पारित हुआ है) तथा लेनदार अपनी सभा में समापक की नियुक्ति करते हैं। वे एक समापक पर सहमत हो सकते हैं या यदि दो नामों का प्रस्ताव है तो लेनदारों द्वारा नियुक्त समापक ही कार्य करेगा। (502)
- निम्न निर्देश के लिये कोई भी निदेशक, सदस्य या लेनदार न्यायालय जायेंगेः–
  - साधारण सभा में नियुक्त समापक कार्य करे या
  - वह, लेनदारों द्वारा नियुक्त समापक के संयुक्त रूप से कार्य करे या
  - सरकारी समापक की नियुक्ति के लिये या
  - किसी अन्य व्यक्ति को समापक नियुक्त करने के लिये 502(2)]
  - समापक का पारिश्रमिक लेनदारों या न्यायालय निश्चित किया जायेगा।
  - समापक की नियुक्ति पर निदेशक मण्डल की शक्तियाँ स्वतः समाप्त हो जायेगी।
  - एक वर्ष से अधिक समय तक चलने वाली समापन प्रक्रिया की दशा में वह प्रत्येक वर्ष के अन्त में सामान्य सभा तथा लेनदारों की सभा आहूत करेगा। जिसमें वह समापन की स्थिति तथा प्रक्रिया का पूर्ण लेखा प्रस्तुत करेगा। (505)

जब कम्पनी के मामलों का पूर्ण समापन हो गया हो तो निदेशक निम्न कदम उठायेंगे– (509)

(i) सामान्य सभा तथा लेनदारों की सभा आहूत कर उसमें लेखों का पूर्ण विवरण, समापन प्रक्रिया तथा सम्पत्तियों के विक्रय की विधि रखेंगे।

(ii) सभा को विज्ञापन द्वारा आहूत किया जायेगा जिसमें सभा का समय, स्थान उद्देश्य का उल्लेख होगा।

(iii) यदि प्रतिवेदन से समापक इस निष्कर्ष पर पहुँचता है कि कम्पनी मामलों की समापन सदस्यों तथा जनता के हितों के अनुसार नही किया जा रहा है तो कम्पनी रिपोर्ट की तिथि से विघटित मानी जायेगी।

(iv) यदि सरकारी समापक प्रतिवेदन से यह पाता है कि मामलों की सदस्यों या जनता के हितों के अनुसार किया जा रहा है तो न्यायालय समापक की जाँच पड़ताल के लिये कहेगा।

स्वैच्छिक समापन पर सम्पत्तियों का बँटवारा : (लेनदार व सदस्यों द्वारा दोनों में) एक बार कम्पनी के पूर्ण समापन होने तथा सम्पत्तियों के विक्रय/वितरण से प्राप्त राशि से दायित्वों का भुगतान किया जाता है। इस प्रकार प्राप्त राशि से लेनदारों को समान अनुपात में वितरित किया जाता है। इसके पश्चात यदि कोई धनराशि शेष रहती है तो वह सदस्यों के मध्य कम्पनी में उनके अधिकारों तथा हितों के अनुसार वितरित किया जाता है।

ग. न्यायालय के निरीक्षण में समापन :

यह न्यायालय द्वारा समापन से भिन्न है। यहाँ पर न्यायालय मात्र समापन प्रक्रिया का निरीक्षण करता है। सदस्यों द्वारा सामान्य सभा में समापन प्रस्ताव पारित किया जाता है। मात्र कुछ विशेष मामलों में, न्यायालय समापन प्रक्रिया का निरीक्षण करता है। न्यायालय इसमें कुछ शर्तें भी लगा सकता है।

हालॉकि लेनदारों, अंशदाताओं व अन्य को न्यायालय से कुछ सुविधा करने के लिये स्वतंत्रता होती है। (522)

- न्यायालय, हटाये गये समापक या नियुक्ति समापक के अतिरिक्त, समापकों की नियुक्ति कर सकता है। न्यायालय, समापक के रिक्त पद को भी भर सकता है।
- समापक वह सभी कार्य कर सकता है, जो उसकी दृष्टि में कम्पनी के हित में सर्वोपरि है। उसे वह सभी शक्तियाँ प्राप्त होती है, जो कम्पनी के स्वैच्छिक समापन पर मिलती है।
- न्यायालय, समापक द्वारा की गयी याचना को लागू करा सकता है। (526)

दायित्वों के भुगतान का प्राथमिकता क्रम (529A & 530) :

जब कम्पनी की किसी भी विधि से समापन होता है, तो दायित्वों को निम्न क्रम में भुगतान होगाः–

1. कर्मचारी को बकाया।
2. दिवालिया की स्थिति में सुरक्षित लेनदारों का बकाया।
3. कम्पनी द्वारा केन्द्र सरकार/राज्य सरकार दिये जाने वाले सभी कर, शुल्क
4. कर्मचारी का अधिकतम चार माह का बकाया वेतन
5. कर्मचारी को भुगतान योग्य सभी अवकाश पारिश्रमिक

ऐसे सभी ऋणों का पूर्ण भुगतान किया जायो। यदि सम्पत्तियाँ पूर्ण भुगतान करने में पूरी नही हो रही है तो उसे बराबर अनुपात में वितरित किया जायेगा।

समापक द्वारा धन की प्राप्ति (553) : सरकारी समापक के अतिरिक्त कम्पनी तथा न्यायालय द्वारा प्रक्रिया हेतु नियुक्त प्रत्येक समापक प्राप्त धन की अधिसूचित बैंक में जमा करेगा।

कम्पनी अधिनियम 1956 के अन्तर्गत पंजीकृत सामान्य कम्पनी के अन्य

कम्पनियाँ भी होती है जिनके लिये समापन प्रक्रिया पर थोड़ी भिन्न है।
इन कम्पनियों में:–

1. **गैर पंजीकृत कम्पनी** : सामान्य शब्दों में, अपंजीकृत कम्पनी वह है जो कम्पनी अधिनियम 1956 के प्रावधानों के अन्तर्गत पंजीकृत नही है। (582)

- गैर पंजीकृत कम्पनी का समापन, स्वैच्छिक या न्यायालय में निरीक्षण में नही हो सकता है।
- गैर पंजीकृत कम्पनी का समापन निम्न परिस्थितियों में होगा–

2. यदि कम्पनी विघटित हो गयी है या उसे व्यवसाय संचालन पर प्रतिबंध लगा दिया गया है या व्यवसाय का संचालन समापक के लिये किया जा रहा है।
3. यदि न्यायालय की राय में कम्पनी का समापन उचित तथा समताप में है।

- लेनदार, अंशदाता या स्वयं कम्पनी द्वारा याचिका दाखिल की जा सकती है या केन्द्र सरकार द्वारा अधिकृत व्यक्ति समापन कार्यवाही को शुरू कर सकते हैं।
- अन्य मामलों के संबंध में वही नियम तथा प्रक्रिया लागू होंगे जो पंजीकृत कम्पनियों में लागू होते हैं।
- भारत में व्यवसाय करने वाली विदेशी कम्पनी, जो विघटित हो चुकी है, का समापन पंजीकृत कम्पनी की भाँति होगा।

विदेशी कम्पनी (584) : विदेशी कम्पनी वह कम्पनी है, जिसका समामेलन भारत के बाहर हुआ है तथा भारत में व्यवसाय करती है।

ऐसी कम्पनियों को समापन, भारत में उनकी स्थित सम्पत्ति तक सीमित होता है। भारत के बाहर उनके व्यवसाय तथा सम्पत्तियों के संबंध में उनके पास क्षेत्राधिकार नही है।

- विदेशी कम्पनी का समापन मात्र न्यायालय से ही होगा।
- यदि कोई विदेशी कम्पनी अपने पंजीकरण वाले देश में विघटित या प्रतिबंधित हो गयी है तो, भारत में भी समापन आदेश हो जायेगा।
- यदि किसी विदेशी कम्पनी का समापन विदेशी विधियों के अनुसार किया जा रहा है, तो भारत के न्यायालय भारतीय लेनदारों के हितों की सुरक्षा करेंगे।

लेनदारों के भुगतान के बाद शेष आधिक्य सम्पत्तियाँ सभी अंशधारियों में उसी अनुपात में वितरित की जायेगी जो अनुपात निर्गमित पूँजी तथा दत्त पूँजी में है।

विदेशी समापन का बाकी रहना, समापन आदेश के क्षेत्राधिकार को प्रभावित करता है। सम्पत्तियाँ किसी भी स्वभाव की हो सकती है तथा किसी भी स्रोत से आ सकती है।

लेनदारों होने का दावा करने वाले व्यक्ति की उपस्थिति पर्याप्त होती है। वहाँ यह दिखाने की आवश्यकता नही है कि व्यावसायिक गतिविधियाँ भारत के किसी स्थान से संचालित की जा रही है।

3. **सरकारी कम्पनी** : सरकारी कम्पनी वह कम्पनी है जिसमें 51 प्रतिशत से अधिक अंशों को सरकार द्वारा धारित किया जाता है।

कम्पनी अधिनियम 1952 में पंजीकृत सरकारी कम्पनियों की समापन प्रक्रिया उसी प्रकार होगी जैसे सामान्य कम्पनियों की होती है।

हालॉकि न्यायालय उसके प्रतिफल में जनता का हित होने के कारण ध्यान देते हैं, क्योंकि सरकारी कम्पनियों का मुख्य कार्य जनता की सेवायें प्रदान करना है।

16.3 स्थिति विवरण

स्थिति विवरण, पूँजी, दायित्वों तथा संपत्तियों का विवरण है। स्थिति विवरण की एकांकी लेखा विधि के अनुसार व्यवसाय की प्रारम्भिक तथा अंतिम पूँजी की राशि को ज्ञात करने के लिये बनाया जाता है। प्रारम्भिक पूँजी ज्ञात करने कें लिये, प्रारम्भिक तिथि का स्थिति विवरण बनाया जाता है। अंतिम तिथि पर स्थिति विवरण अंतिम पूँजी ज्ञात करने के लिये बनाया जाता है। इसे एकांकी लेखा प्रणाली का आर्थिक चिट्ठा कहते हैं।

स्थिति विवरण

कम्पनी का नाम → न्यायालय का नाम

कम्पनी संख्या → मुकदमा संख्या

(क) कम्पनो के पंजोकृत कायालय का नाम व पता

(ख) तिथि

स्थिति विवरण

....

दिनांक ....20.............. कम्पनी

प्रशासन (Administration) में कार्य सत्यता का विवरण।

मेरी जानकारी में उपरोक्त नाम वाली कम्पनी में स्थिति विवरण पूर्ण सत्य है तथा (b) -----------------दिनांक को कम्पनी (Administration) प्रशासन को दाखिल हुयी।

पूर्ण नाम ....

हस्ताक्षर ....

तिथि ....

(क) सम्पत्तियों का संक्षेप

सम्पत्तियाँ	पुस्तक (मूल्य)	अनुमानित (वसूली)
स्थायी प्रभार वाली सम्पत्तियाँ		
चल प्रभार वाली सम्पत्तियाँ		
बिना प्रभार वाली सम्पत्तियाँ		
पूर्वाधिकार लेनदारों के लिये उपलब्ध अनुमानित कुल सम्पत्ति		

हस्ताक्षर.............................. तिथि ....

...

A1 Summary of Liabilities

A1 दायित्वों का संक्षेप

Estimated total assets available for preferential creditors (carried from page A)

Liabiliies

Preferential creditors:____

Estimated deficiency/surplus as regards preferential creditors____________

Estimated prescribed part of net property where applicabl (to carry forward)

Estimated total assets avaialble for floating charge holders_______________

Debts secured by floating charges

Estimated deficiency/surplus of assets after floating charges______________

Estimated prescribed part of net property where applicable (brought down)

Total assets available to unsecured creditors___________________________

Unsecured non-preferential claims (excluding any shortfall to floating charge holders).

Estimated deficiency/surplus as regards non-preferential creditors

(Excluding any shortfall to floating charge holders)_____________________

Shortfall to floating charge holders (brought down)

stimated deficiency/surplus as regards creditors________________________

Issued and called up capital

Estimated total deficiency/surplus as regards members_________________

Signature_____________________Date__________________________________

पूर्वाधिकार लेनदारों के लिये उपलब्ध अनुमानित कुल सम्पत्ति (पृष्ठ A से आगे लाये)

16.4 निस्तारक का अंतिम खाता

Liquidator's Final Statement of Account From ....to..........

Dr. Cr.

Particular		Amount	Particular	Amount
To bank a/c To cash a/c **To assets realised**			By legal expenses By liquidator's remuneration By liquidation expenses	
(in sequence of liquidity) To relaisation of assets			By debentures having floating charges + Interest outstanding	
speciallypledged	xxx		+ Interest accured (only if solvent)	
Less : secured loan	xxx		By preferential creditors	
To call on equity shareholders To operational earning			By unsecured creditors By preference shareholders	
(i.e. if liquidator			Preference share capital	

running the business than what he gets in the mean while)			Preference dividend arrears By equity shareholders	

नोट–

1. यदि कम्पनी दीवालिया हो गयी है तो केवल अदत्त ब्याज लिया जायेगा, उपार्जित ब्याज नही। कम्पनी के शोध क्षम होने पर ही अर्जित ब्याज लेंगे।
2. यदि पूर्वाधिकार अंश पूँजी के बारे में कुछ नही दिया है तो हम उसे पूर्वाधिकार अंशपूंजी मान लेंगे तथा इसीलिये ऊपर लाभाँश का बकाया लिया गया है।
3. रोकड़ शेष की नियमित जांच होगी। ऐसा नही होना चाहिये कि हम बिना सापेक्ष रोकड़ शेष के भुगतान करें। नकारात्मक रोकड़ शेष की दशा में 'कभी खाता' बनाया जायेगा।
4. समापन का पारिश्रमिक : समापन के पारिश्रमिक की गणना हेतु निम्न 6 में से किसी भी भाषा का प्रयोग कर सकते हैं–

   क. वसूली गयी सम्पत्तियों पर (%) प्रतिशत

   ख. सकल सम्पत्त्यिों/कुल सम्पत्तियों पर (%) प्रतिशत

   ग. असुरक्षित लेनदारों की भुगतान का (%) प्रतिशत

   घ. सुरक्षित लेनदारों को भुगतान का (%) प्रतिशत

   ड. अंशधाारियों/सदस्यों को भुगतान का (%) प्रतिशत

   च. समता अंशधारियों को भुगतान का (%) प्रतिशत

   समापक का पारिश्रमिक की गणना के लिये प्रारम्भिक रोकड़/बैंक शेष को तब तक सम्मिलित नही किया जायेगा जब तक कि प्रश्न में न कहा गया हो।

5. **विभिन्न दत्त मूल्य परन्तु समान (अंकित) मूल्य वाले अंश :**

- सभी सम्पत्तियों के विक्रय से राशि से सभी दायित्वों का भुगतान कर सकता पूर्वाधिकार अंश पूँजी अंश पूँजी हेतु उपलब्ध रोकड़।
- समता अंश पूंजी को पूर्णदत्त करने के लिये अनुमानत याचना करना।
- उपलब्ध रोकड़ का वितरण
- शुद्ध देय/शुद्ध प्रारम्भ की गणना

6. **भिन्न दत्त मूल्य परन्तु समान अंकित (Face) मूल्य वाले अंश :**
   पूर्णदत्त अंश पूँजी के अनुपात में समता अंशधारियों को उपलब्ध राशि का वितरण सम्पत्तियों में से सर्वप्रथम समापन कार्यवाही की लागत का भुगतान। इसके पश्चात प्राथमिकता के क्रम में निम्न ऋणों का भुगतान होगा–

1. केन्द्र या राज्य सरकार या स्थानीय प्राधिकरण को देख कर एवं दर। ऐसे ऋण ''संबंधित तिथि, को देय हो'', वे उस तिथि के अगले 12 माह के अन्दर देय तथा भुगतान योग्य हो। (Relevant date) संबंधित तिथि से आशय ''अनिवार्य समापन में समापक में नियुक्ति। प्रथम नियुक्ति की तिथि या (जहाँ समापक नियुक्त नही हुआ है) समापन आदेश की तिथि तथा अन्य दशा में–

स्वैच्छिक समापन के प्रस्ताव की तिथि।

2. किसी कर्मचारी का अधिकतम 4 माह का वेतन तथा मजदूरी का संबंधित तिथि (Relevant date) में पूर्व 12 माह के अन्दर भुगतान करना होगा। कृषि श्रमिक वाले दावे को छोड़कर किसी एक दावेदार को 20000/— रू0 से अधिक भुगतान को प्राथमिकता नही दी जायेगी।
3. समापन आदेश से सेवा से निष्कासन होने पर कर्मचारी को देय सभी अर्जित अवकाश पारिश्रमिक।
4. जब तक समापन आदेश पुनर्निर्माण या समायोजन के लिये न किया गया हो तो 'संबंधित तिथि' (Relevant date) से पूर्व 12 माह के दौरान कर्मचारी राज्य बीमा अधिनियम के अन्तर्गत नियोजक के रूप में कम्पनी का योगदान।
5. कर्मचारी क्षति पूर्ति अधिनियम के अन्तर्गत कर्मचारी को देय भुगतान (मृत्यु या अपंगता में)
6. कर्मचारियों के कल्याण हेतु बनाये गये ग्रेच्युटी कोष, पेन्शन कोष, प्रोवीडेण्ट कोष से कर्मचारी की देय सभी राशि।
7. कम्पनियों द्वारा जॉच—पड़ताल के व्ययों के देय भुगतान।

उपरोक्त वर्णित ऋणों का समान क्रम निर्धारण कर, पर्याप्त सम्पत्ति होने पर उनका पूर्ण भुगतान करना चाहिये। किसी चल प्रभार वाले ऋणपत्रधारियों के दावे के ऊपर उन्हें प्राथमिकता होगी तथा समापन आदेश के पूर्व 3 माह के अन्दर भूस्वामियों के दावे का भुगतान होगा। परन्तु यदि सम्पत्तियाँ अपर्याप्त है तो पूर्वाधिकार भुगतानों अनुपात में वितरण होगा।

16.5 विविध प्रावधान

कम्पनी का समापन : जब कम्पनी के सभी मामलों की पूर्ण समापन (सम्पत्ति एकत्रीकरण तथा वितरण आदि) हो जाता है तो न्यायालय कम्पनी के विघटन का आदेश दे देगा। आदेश की तिथि से कम्पनी विघटित हो जायेगी।

कम्पनी की पुस्तकें तथा प्रपत्र : (धारा 580) जब कम्पनी के मामलों का पूर्ण समापन हो गया हो तो उसकी पुस्तकों तथा प्रपत्रों को निम्न तरीके से हटा सकते हैं— (क) सदस्यों के स्वैच्दिक समापन में— कम्पनी के विशेष प्रस्ताव के निर्देशानुसार (ख) लेनदारों में ऐच्छिक समापन की दशा में निरीक्षण के अनुसार या उसकी अनुपस्थिति में लेनदारों के निर्देशानुसार। विघटन के 5 वर्ष बीतने पर समापक या अन्य व्यकित की पुस्तक व प्रपत्र प्रस्तुत करने की कोई जिम्मेदारी नही होगी जब तक कि केन्द्र सरकार का अन्य निर्देश न हो।

अयाचित लाभाँश तथा अवितरित सम्पत्तियाँ (धारा 555) : यदि लेनदार या अंशदाता को देय कोई राशि देय तिथि से 6 माह से अधिक समय तक अयाचित रहती है तो समापक इस राशि को भारतीय रिजर्व बैंक के भारत सरकार के जन खाता में जमा करा देगा। इसी प्रकार विघटन की तिथि को समापक के पास शेष अन्य राशि के प्रकरण में किया जायेगा। ऐच्छिक समापन की दशा में, निरीक्षण के आदेश या बिना निरीक्षण आदेश के समापक अवितरित सम्पत्तियों को भारतीय रिजर्व बैंक में

कम्पनी के समापक खाता में जमा करायेगा।

उपरोक्त राशि के लिये कोई व्यक्ति अपना दावा न्यायालय या केन्द्र सरकार को करेगा जिसमें वह भुगतान हेतु निर्देश पा सके। कम्पनी के समापक खाते में 15 वर्ष से अधिक समय से अयाचित राशि को केन्द्र सरकार के सामान्य आगम खाते (General Revenue Account) में हस्तान्तरित कर दिया जायेगा। परन्तु यदि कोई व्यक्ति यह कर देता है कि समापक खाते में जमा राशि ें उसका दावा है, तो उसे भुगतान हेतु आदेश पारित हो जायेगा।

विघटन को व्यर्थ घोषित करना : विघटन के 2 वर्ष तक, न्यायालय किसी भी समय कम्पनी के विघटन को व्यर्थ घोषित कर सकता हैं न्यायालय ऐसा आदेश, समापक या अन्य हितबद्ध व्यक्ति के आवेदन पर करेगा। (559)

बन्द कम्पनियाँ (560) : वह कम्पनी है जो व्यवसाय नही कर रही है या जो संचालन में नही है।

यदि रजिस्ट्रार के पास कम्पनी के डिफन्ड होने पर्याप्त कारण हे तो वह कम्पनी से इस आशय का पत्र लिखकर पूछताछ करेगा। यदि कम्पनी से एक माह तक कोई उत्तर नही आता है तो रजिस्ट्रार 14 दिन के अन्दर प्रथम पत्र के संदर्भ को लेते हुये पुनः पंजीकृत डाक से पत्र भेजेगा। दूसरे पक्ष का एक माह तक उत्तर प्राप्त न होने पर सरकारी गजट में सूचना प्रकाशित करायेगा तथा कम्पनी को 3 माह में उसका नाम काटने की सूचना देगा, यदि वह कोई अन्य कारण नही बताती है। यदि 3 माह तक कोई कारण नही बताया जाता है तो रजिस्ट्रार कम्पनी को नाम रजिस्टर से काट देगा। यही प्रक्रिया ऐसी समापन में अपनायी जायेगी जहाँ रजिस्ट्रार को यह विश्वास है कि वहाँ समापक नही है या समापक कार्य नही कर रहा है। कम्पनी द्वारा पर्याप्त कारण देने पर रजिस्ट्रार कम्पनी के नाम की पुनः चढ़ाने का आदेश देगा।

गैर पंजीकृत कम्पनी का समापन : समापन के उद्देश्य से 'गैर पंजीकृत' पद में:–

(क) निम्न शामिल नही होंगे:–

(i) यूनाइटेड किंगडम की संसद या अन्य अधिनियम द्वारा पंजीकृत रेलवे कम्पनी।

(ii) इस अधिनियम के अन्तर्गत पंजीकृत कम्पनी।

(iii) किसी अनय पूर्व विधि के अन्तर्गत पंजीकृत कम्पनी तथा ऐसी कम्पनी नही जिसका पंजीकृत कार्यालय, भारत से अलग होने से पूर्व बर्मा, सदन या पाकिस्तान में था।

(ख) गैर पंजीकृत पद में निम्न शामिल होंगे : न्यायालय मे समापन याचिका को पस्तुत करते समय 7 सदस्यों से अधिक वाली कम्पनी या संगठन या कोई साझेदारी (धारा 582)। अपंजीकृत कम्पनी का समापन, कम्पनी अधिनियम के अन्तर्गत होगा। इसका समापन, कुछ छोटे अपवादों के साथ, उसी प्रकार होगा जो प्रक्रिया अनिवार्य समापन में अपनायी जाती है। ऐसी कम्पनियों का न्यायालय निरीक्षण में या स्वैच्छिक समापन नही होगा। यदि भारत में व्यवसाय करने वाली विदेशी कम्पनी प्रतिबंधित हो जाती है तो उसका समापन अपंजीकृत कम्पनी की भॉति होगा।

16.6 सारांश

अन्त में हम कह सकते हैं कि कम्पनी का समापन, कम्पनी विधि के पर्यवेक्षण में होता है। जैसा कि हम जानते हैं कि कम्पनी का निर्माण अधिनियम के अनुसार होता है। अतः सम्पूर्ण समापन तथा सभी अन्य विधिक औपचारिकतायें, कम्पनी अधिनियम, 1956 के प्रावधानों के अन्तर्गत की जाती है।

16.7 शब्दावली

समापनः से आशय कम्पनी के विशेष व्यवसाय या सम्पूर्ण कम्पनी के विघटन की प्रक्रिया से है।

स्थिति विवरणः पूँजी, दायित्वों तथा संपत्तियों का विवरण है।

16.8 बोध प्रश्न

1. ....का अर्थ ऐसे समापन से है जो न्यायालय के हस्तक्षेप के बिना, लेनदारों या सदस्यों द्वारा स्वयं ही किया जाता है।
2. लेनदारों के भुगतान के बाद शेष आधिक्य सम्पत्तियाँ सभी अंशधारियों में उसी अनुपात में वितरित की जायेगी जो अनुपात निर्गमित पूँजी तथा ....में है।
3. सरकारी कम्पनी वह कम्पनी है जिसमें .... प्रतिशत से अधिक अंशों को सरकार द्वारा धारित किया जाता है।
4. यदि लेनदार या अंशदाता को देय कोई राशि देय तिथि से .... से अधिक समय तक अयाचित रहती है तो समापक इस राशि को भारतीय रिजर्व बैंक के भारत सरकार के जन खाता में जमा करा देगा।

16.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

1. ऐच्छिक समापन 2. दत्त पूँजी 3. 51 4. 6 माह

16.10 स्वपरख प्रश्न

1. कम्पनी के समापन से आप क्या समझते हैं? इसकी विधियों का विवेचन कीजिये।
2. स्थिति विवरण से क्या आशय है? इसे कैसे बनाया जाता है?
3. निस्तारक का अंतिम खाता से आप क्या समझते हैं? उदाहरण सहित व्याख्या कीजिये।

16.11 सन्दर्भ पुस्तकें

1. Gogna P.P.S. (2009), A Text Book on Company Law, New Delhi, S. Chand & Co.
2. Kapoor G.K. & Gupta C.B. (2008) Law, Ethics and Communication, Ne Delhi, Sultan Chand & Sons.
3. Singh Avtar (2004), Company Law, Lucknow, Eastern Book Company.